

सावित्री

(नारी के धारम-बल तथा राष्ट्र का उद्धार)

लि. ८२०

२५२८
१६६

लेखक
पारबेन्द्र नर्मदा 'पत्र'



शुद्धरत्न प्रकाशन

प्रकाशकीय

नवराज प्रकाशक का आधार एक दिन घबानक हो राजस्थान के पारसी साहित्यकार श्री धारवेन्द्र शर्मा 'अग्र' के कथन पर बन गया। श्री अग्र ने दिल्ली में बहुत साहित्य का ध्वज करके राजस्थान का मान बढ़ाया है और उनकी तमनु पुस्तकाली मराठी सिन्धी तथा उर्दू में अनुवादित प्रकाशित कृतियों ने राष्ट्रभाषा का महत्त्व और वास्तविकता सिद्ध है।

हमारी ओर से उनकी अपेक्षा में अपेक्षा पुस्तकें प्रकाशित करने की योजना रहेगी और अन्य प्रकाशकों से लड़ी उनकी पुस्तकें भी प्राप्त होंगे। यह सहायता से प्राप्त कर सकते हैं। इस प्रकाशन के प्रथम पर हम जानें कि बीकानेर वाली छापीयकों एवं प्रिन्टिंग मशीन (डिप्टी) जॉर्ज (बीकानेर) के भी आधार है। जॉर्ज को वे आधारों के आधार पर हमें ओर माली को वे उनमें निमित्त टैक्स देकर रंग में।

एक बार मैं अपने व्यक्तिगत रूप से उन समाज राजस्थान वाली तथा प्रकाशनी लोगों को धन्यवाद दे रही हूँ कि जानें कि वे पुस्तकें प्रकाशित करीबन मुझे बन गिया।

प्राप्ति श्री अग्रशर्मा
प्रकाशक

हमारे द्वारा प्रकाशित चन्द्र जी की ग्रन्थ कृतियाँ

- एक दुर्गम की मौत (कहानियाँ)
एक दुर्गम का जगम
- एक कमरे की कहानी (अवस्था)

मैं इतना ही कहूंगा

साहित्यी मरत नहीं लप-पान है । उस उपन्यास की कथा राजस्थान के सभी गाँवों की कथा है । मैंने एक गाँव को लेकर यहाँ के बदलते हुए को चित्रित किया है । यह चित्रण पात्रों के माध्यम से सापेक्ष प्रत्यक्ष ही एक रोचक कथा का साक्ष्य देते ।

साहित्यी इस उपन्यास की साक्षिणी है । उसका प्रति हमने बार बार छोटा है फिर भी वह इसलिये परम्पराओं के चर्च को लेकर जीवित रहती है । क्योंकि धर्म उसके लिए सर्वोपरि है । अपरिचितता नहीं तो पाठक मिला हो सकते हैं यह भी मैंने बताने का प्रयास किया है ।

उपन्यास में प्रयोग शब्द मुद्रावरे और धारण विन्यास साक्षरपानी 'टोन' में हुए हैं वे इंगित हुए हैं क्योंकि पात्रों की भाषा में मुझे विचार था वह किया इस साक्षरपान पाठक एक दिन ध्यान में रहते ।

एक उपन्यास के साक्षरपान पर मैं मरतल प्रमाण के साथ साक्षरपान का साक्षरपान है जिसे मेरे विचारों को मैंने बना दिया ।

साक्षर धारण साक्षरपान के बारे में ।

गाँव की होनी }
भीषादेर }

साक्षरपान साक्षरपान

धर धर तुम्हारा स्वर बही है जो
 जीवन का है धर धर तुम्हारी बसना
 ऐसे मधुनों की रचना बही कर मधुनी
 जो जीवन में मीठूर न पड़े हुए
 भी उसे सुसाने के लिए धारदार
 है तब तुम्हारा वृत्तिर किम बनें
 भी बना है धीर तुम्हारे बंधे भी बना
 मार्ग बना है ?

—सोरी

(१४ बाउक न)

यह घोर है मेरा ।

ध्यात घोर धन्या ।

यहाँ विषय रूप में राजपूत घोर बाट रहे हैं । कुछ बेच्य कुछ बाइय, कुछ मुनसमान घोर दीप हो-हो बार-बार घर है—दुमरी निचड़ी जाति घोर कामपछे के । एक करोड़पति सैठ है जो बलबलता रहा है ।

सब तेजी से बदल रहा है ।

२१ " समय के साथ यहाँ की प्रकृति भी । पहले वाला बाई-बार सैठ प्रेम धान्य धनुराय घोर बख्त सब दूट रहे हैं जिसकी बहानियाँ हमारे बड़े-बूढ़े धात्र भी मुनाते हैं । लोच लावन-बानों की रिमरिम में तेजा का घोसबी पीठ नहीं गाते । हरिदासी बरे रातों में बीषामा की बरमरी चुन नहीं देते । रिजवा अपने कोयल से बीनों से "भूख" की बेरना दिदिन्ग में नहीं नैराती घोर के "घोसू" का दर जन-मानस में नहीं भरती । नवी पीड़ी में विनेवा की पुन प्रबलित हो गयी है । बीतपाही ब जैनों की शांति यात्रा की बन्दू बाणों की परबराहट में रही है । बीनों दहूरी की जहर कुछ धंसी में दू बटों की धरिय गडबराहट मेजी का रही है । मन्ना है बरिबी का बीपुन घोर ध्यार बरा डर-मरोवर मूलता बना का रहा है । नैरातिक बीरव धारिक धूल में बदरीमा हो रहा है । मानता नगही गो-रिजे घोर कामाधिक दुमन अभी बन्द रहे हैं ।

ये एक मूल माण्डर है ।

१ एक लोक माण्डर २ एक लोक बरिबा ३ लोक दीप

मेरा एक छोटा-सा परिवार है। पर भरा-पूरा और सम्पन्न है। पत्र बन भी सभी कुछ हैं।

किन्तु !

किन्तु मैं भीतर से बहुत दुखी हूँ। मेरा मन कुछ है। अतः सागर में भारी लोहे के टुकड़े-सा डूबा हुआ है और न भिटने वाली विपुल-विपाद की परछाइयाँ मेरे मन-मगन को हर घड़ी मेरे छाती हैं। जीवन के कुछ ऐसे प्रचलन पृष्ठ हर घड़ी 'भीकर' और 'भीनिया' के वृक्ष के पीछे-जुगुनी के बरखर काँटों की तरह भयंकर दंसन पीड़ा करते रहते हैं और सब दृष्ट्य होती है कि सब कुछ बह रहा है। सब कुछ बहा रहा है। अन्तराल में एक घुटन सी जटिल होती है।

आज मन बहुत घुट रहा है। इस तरह घुट और कम रहा है कि कुछ कं सी होगी। कं ? "हाँ कं अपने अन्तरालों से सभी घटनाओं-मुर्खटानाओं की कं।

एत सभी पूरे जीवन पर है।

बादली में सारा रात डूबा हुआ है।

दूर रूँके हुए रेत के टीलों पर उगे अन्ध अन्ध काने-काने घम्सों से लप रहे हैं। कहीं-कहीं उन नीरवता को रात का एकक भँव कर देता है। मेरा मन भारी है। घनीत बार-बार हृदय में तुकान उठते हुए हैं। तुकान ! बीड़ा का तुकान ! तुकान लड़कन और अनेक कंगारू और घट नार्ने कमममाने लगती हैं। अकस्मिक रही है मुझे।

सोचना हूँ निमत को भिग रहा है। मन सबकुछ हलरा हो जायेगा। सही हो या नवन एक दायित्व पूरा हो जायेगा।

जीविये मैं तैयार हूँ।

प्रेम से भिया है। वह बन रहा है—कायन पर। कहानी प्रारंभ करता है—

“बरबल भी सरबल !” माँ ने मुझे पुकारा। मैं बाठा बाठा रह गया। मेरा नाम सरबल है भी सरबल। अथवा का अर्थ य है सर

बल । मैंने पूछ कर जवाब दिया "क्या है माँ ?"

माँ बरा घूँघट संभालती हुई मेरे पाग धापी और चोड़ा-या मुरकरा कर बोली "तेरा इमो महीने मुन्गावा (बीना) होया ।"

मैं चुप हो गया । तब मैं मेरी कमपन्थी भात हो गयी । दृष्टि राशित बीमार के एक भाग को निरुद्धय एक्टक देखने लगी ।

"मैंने जो कहा वह सुना । माँ के शब्दों में बजन था ।

मैं चुप ।

"क्या गूँघा हो क्या है ?"

मैंन बरा माराज होने हुए कहा "क्या कहनी हो माँ ? तुम्हें कुछ नहीं पानूम ।

माँ के होठों पर कबित निरपेक्ष मुस्मान जाब उठी । मेरी नजरें सब भी भुगी हुई थी । माँ के अमलीत मुग पर एक अतीविक प्रीत हुआ । जगरी घोंगों में जीवन की महर्षि अनुभूतियों की एक दृष्ट थी । इनमें एक कुम्भजीय धारकपल था । वह बहुत सगुरुरत थी और वह हर बड़ी गिर पर होरिया बांधे छानी थी । कानों में बड़े-बड़े धातों जाक में बाँटा और कानों में बहुत ही मारी बाँधी की बड़ियाँ थी जिन्हें एक एक का बजन वह एक-एक सेर था ।

माँ ने मूगठ हुए बीने घोड़ने पर दृष्टि बसाकर इन सब कहना शुरू दिया जैसे वह अपने धार में वह रही हो, "अब तू १८ वर्ष का हो रहा है । मैंने दिया तेरा और अर्ध अंगारह । तब लड़का माँ-बाप को सनाह-मगारिा देने के बाबिल बन जाता है जिन्हाँ माँ में बेटा मरा बेटा ही रहता है । वह काम अपने के अन्तारा दिनी भी काम में बार का विश्व बड़ी बन लज्जा । तभी तो तेरे बापू ने कभी यह ध्यान नहीं दिया कि देरा देना एक मोन्दार (जवाब) हो गया है । यदु तो तेरे माता-बापों ने इतना सगावा दिया कि तेरे बापू की धानें गुन लगी कन्या के दो बार बरस एक तुम्हें और मग्हा-मुग्हा ही समझे रहने । और तू १८ वर्ष का रहा है ।"

मेरा एक छोटा-सा परिवार है। घर गरीब-गरीब और सम्पन्न है। घर मन भी सभी कुछ है।

किन्तु !

किन्तु मैं भीतर से बहुत खुशी हूँ। मेरा मन कुछ के प्रसन्नता घर में जारी मोह के टुकड़े-का हुआ हुआ है और न मिटने वाली विपुल-विपद की परछाईयाँ मेरे मन-मन को हर पक्षी मेरे रहती हैं। जीवन के कुछ ऐसे प्रसन्नता पुरुष हर पक्षी 'जीवन' और 'जीविका' के बूझ के ठीके-उंदुनी के बराबर काँटों की तरह अचानक बदन पीका करते रहते हैं और वह दण्डा होनी है कि सब कुछ बह दूँ। सब कुछ बता दूँ। अन्तराल में एक मुटु भी बरतती होती है।

घर मन बहुत पुट रहा है। हम तरह मुटु और ऊँच रहा है कि कुछ के भी होनी। के ? हाँ के घरने अन्तराल में बनी घटनाओं-मुटु-मुटुओं की के।

घर सभी गुरे जीवन पर है।

जीवनी में घर गरीब हुआ हुआ है।

दूर लीने हुए गैर के टीलों पर जमे अड़-अड़ाने काने-कासे धरनों के लय रहे हैं। कहीं-कहीं घर गरीबता को घर का परोक्ष बदन घर बैठा है। मेरा मन जारी है। अतीत बार-बार हमसे में सुन्नत बढाये हुए हैं। सुन्नत ! पीडा का सुन्नत ! मुटु लड़कन और अनेक कर्माँ और बट गारों बमबमने लबडी है। अकस्मिक रही है मुझे।

सौजन्य हूँ शिष्ट को निरुद्ध हूँ। मन सबकुछ हमका हो जायेगा। वही हो या वस्तु एक वास्तव गुरा हो जायेगा।

जीविये में लीवार हूँ।

येन मे लिया है। वह जन पक्षा है—कायज घर। कहानी धारण करता हूँ—

‘सरवण सो सरवण !’ मैं ने मुझे पुकारा। मैं जाता जाता एक बया। मेरा नाम सरवण है भी सरवण। धरण का धारण व रूप घर

बण । मैंने भूम कर बबान दिया "क्या है माँ ?"

माँ बरा प्युष्ट संभालती हुई मेरे पास घायी और थोड़ा-सा मुस्करा कर बोली, "ऐरा इसी महीने मुकमाना (गौना) होपा ।"

मैं चुप हो गया । माँ से मेरी कनपटियों लास हो गयी । इष्टि संभित दीवार के एक माय को निरुद्ध एकटक देखने लगी ।

"मैंने जो कहा वह सुना ।" माँ के शब्दों में बजन था ।

मैं चुप ।

"क्या गुंथा हो गया है ?"

मैंने बरा गाराज होते हुए कहा "क्या कहती हो माँ ? मुझे कुछ नहीं मालूम ।"

माँ के होठों पर पवित्र निरञ्जल मुस्मान नाच उठी । मेरी नज़रें धन भी झुकी हुई थी । माँ के कमपीत मुख पर एक धनोकिट धोज प्रदीप्त हुआ । उसकी माँखों में जीवन की गहराई अनुभूतियों की एक दृष्ट थी । सनमें एक पुम्बदीय प्रार्थन था । वह बहुत सन्तुस्त थी और वह हर पक्षी सिर पर 'बोरिया' बांधे रहती थी । कानों में बड़े-बड़े बालों नाक में काँटा और पाँवों में बहुत ही भारी बाँधी की कड़ियाँ की जिसके एक एक का बजन पड़ा एक-एक सेर था ।

माँ ने मुससे हुए पीने मोड़ने पर इष्टि जमाकर इस तरह कहना शुरू किया जैसे वह धपत धाप से कह रही हो "अब तु १८ वर्ष का हो रहा है । जैसे तिया तेरा ही और मई अट्टर रहा । तब तक माँ-बाप को सलाह-मगरिद देने ने काबिल बन जाता है किन्तु पाँवों में बैठा तथा बैठा ही रहता है । वह काम जैसे के घसाचा जिम्मी भी नाम में बाप का भिन्न नहीं बन सकता । तभी तो तेरे बाप ने कभी यह ध्यान नहीं दिया कि तेरा बैठा अब मोटवार (बबान) हो गया है । यह तो तेरे सामनेबानों ने इतना तजाना दिया कि तेरे बाप की पाँखें खुल गयी बर्ना ये दो-चार बरस तक तुझे और नन्हा-मुन्हा ही समझे रहते । और तु इंसो बगता रहता है ।"

मैंने कोई उत्तर नहीं दिया। वहाँ से जमा आया। हमारे घर से थोड़ी दूर हमारा बैठ था। मैं सीधा बैठ की ओर चला गया। मेरी रक्षा विचित्र थी। मैं एकांत धीरे धीरे (टीसे) पर बैठ कर कल्पनाओं में खो गया।

बहु दिनों मुहाना था। वर्षों थोड़ी देर पहले हुई थी इसलिए रेत बड़ी ठंडी लग रही थी। सारा वासमान वालों से ढका था। बैठों की ओर बानी हुई पगड़ीयों पायसों के मोतों से युक्ति थी। सान-नीचे-बानी केसरियाँ लोहवे छोड़ियाँ धीरे कीचनियाँ (कंचुनियाँ) पहनी हुई टकियाँ मचल-मचल कर आ-जा रही थीं।

मुझे जमा—इसी तरह मेरी बहू जी मेरे लिए 'माता' लेकर बैठ आयेगी। मैं कहती थी कि वह जर्बती बनी है। अनुपम रूपवती कुछ बती और बहुर। सब वह सरिता छोड़नी मैं किन्ती मोहक लगेगी। उसका रंग और छोड़नी का रंग मिलकर एक हो जायेगा। तब मेरे हृदय में जले लेकर गई रंजीत कल्पनाओं की रचना हुई और मैं आनन्द उत्तेजित हो गया। क्योंकि पत्नी को लेकर कई तरह की कवाई मैं कई बार सुन चुका था।

एक बात आपको बता दूँ कि मेरा विवाह दस वर्ष की उम्र में ही हो चुका था।

विवाह की घटना भी यानि नाटकीय है।

मेरे पिता की शिवराम जाटों के मुखिया थे। सामन्ती कालीन पर मराठों और मन्वता में पसे सान धीरे सान के प्रसन्न को लेकर बहु घरों की रक्त-रहित कर देने की तत्पर हो जाते थे। सर्वरथ चला जाय पर ब्रुत का बाल न जाय। अपने सानदान में सबसे समर्थ व बड़े भूमिधर थे पिता जी। बहनों पर सनका करने का प्रहसन था। बिनेर गठ को मेरे समय लाठी लेकर सोना घर की दीवारों पर चारतुने भरी बम्बूओं का सम्पन्ना। बहनों का मननव यह है कि वे बहुत ही धरती और हठी विरम के इस्तान थे। इसका प्रमाण यह है कि उन्होंने एक बछड़े के लिए

पाँच सो रुपये खर्च कर दिये। बात बरा-सी थी कि हमारी माय का बछड़ा एक दिन भूल से ठाकुर के बचेरे भाई गीरासिंह की हथेली के धागे जला गया। बछड़ा प्यारा था और उसके भूरे रंग के बीच-बीच सफ़ेद धारियाँ हर एक का मन मोह लेती थीं। गीरासिंह को वह बछड़ा पसंद आ गया। उसने हम बछड़े को अपने लूट में बाँच लिया।

अब पहर छठ तक बछड़ा नहीं आया और बचारी माय उसके विधोस में रैमाठी रही जब मेरे पिता को बोले। वह अपनी माँ आते थे और अपनी माँ के साथ उनमें एक विशिष्ट सनक भी थी। जैसे वह अपनी माँ की हथेली में रखकर कहते क्यों आया कि नहीं।

तब उत्तर में कहना पड़ता था 'आ गया बीघरी।'

अपना वह इस बात को बार-बार दोहराते आते और घन्ट में उनकी दवा हिस्टिरिया के रोगी की तरह हो जाती थी और वह ठोड़-ठोड़ पर उठकर हो आते थे। इसलिए उनके अपनी सने के समय कोई-न-कोई उनके समीप हाजिर रहता ही था। उस 'घान' का मतलब था गया जाने से।

तो मेरे पिताजी की नींद टूटी। उन्होंने मेरी माँ को पुकारा।
'माँ।'

'माय बार-बार रैमाठी क्यों है?'

'रैमाथेरी नहीं तो क्या करेगी? आप नती के घर में पड़े रहत हैं और बछड़े का कोई पता ही नहीं लगाता।'

'क्या कहा?' पिताजी एकदम चौंक पड़े। उनकी दृष्टि में विमय था।

'टीक कहती हैं कि घान बछड़ा नहीं जला गया है। दोनों बच्चों ने उसे बहुत दूँड़ा पर बसवा पता नहीं लगा। राम जाने केबाद कहीं रिस संकट में होगा?'

'तू बिना फिर मत कर तेरू की माँ में मुबह ही उठे डँड मारेंगा। अपनी माय के हाथ पेर कर उसे धोखे में ला दे।'

माँ बनी बयी । सबमुख उसने पाप को कैसे समझाया कि उसने रेभागा छोड़ दिया ।

रात गज-माभिनी की तरह धीरे-धीरे डल गयी । भोर का उजाला माँब पर फैल गया । बहल-बहल होने लग गयी । ठाकुर के बड़ के समीप स्थित मन्दिर के संख बड़ियासों की पावन ध्वनियाँ सुनायी पड़ने लगी । नगाड़े की ठाक दिना-बिन से गाँव के घासतिर्यों की भी निद्रा टूट गयी जैसे नगाड़े बह रहे थे—उठो यागब-मुन्नी ! क्या तुम्हारे काररण के पीठ गा रही है । नवा घासोक तुम्हें नये आह्वान के लिए प्रेरित कर रहा है । वे पावन संख ध्वनियाँ तुम्हारे अन्तर्गत-गत खोलकर तुममें सत्य का इक्षोप भरेंगी । उठो चरिबी के सपुती !

रात्रिया गोरी (गायों को खंख में बरानेवाला) अपने कद से भी लम्बी लकड़ी लिए गावों को हेर-हेर कर रकड़ी कर रहा था । घरों में रही बिलौने का बर्लप्रिय स्वर “कररूँ पूँ कररूँ पूँ” सुनायी पड़ रहा था ।

पिताजी ने मुझे धीरे धीरे बड़े भाई ठैरू को बुलाया । हम सभी घबो झाड़ पीकर चाये के बितक बिन्हू हमारें वालों पर बिद्यमान थे । उन दिनों हमारे धिर पर आवा-आवा हबी बास रहते थे । चिखा लम्बी होती थी जो मूँबी हुई होती थी । हम दोनों भाई बड़े ही बेकरो स हाफ-भुत्त धीर आँधिए बहमते थे । पाँवों में पटरली होती थी बितका परि भाजित एवं धावर्यक कर जोपपुरी-जूती के नाम से अब प्रचलित है ।

हम दोनों चुपचाप आकर बैठ गये ।

“तुम लोनों ने बछड़े को बुझा !” पिताजी ने ब्रम किया ।

“हाँ !” हम दोनों एक पाप बोले ।

“कहाँ-कहाँ ?”

“मम्मी जगह । अन्न के उन पार, हम पार धीर गाँव की सभी धनियाँ में । बोरों धीर सरवर के घास-बास ।

“ठालाव के बार मोचर भूमि मये थे ।”

मैंने घट से रखा "मैं गया था ।

"वहाँ भी नहीं था ?" पिता भी ने पूछा ।

"नहीं ।"

पिताजी बड़े चम्कीर हो गये । उनके माथे पर बल पड़ गये । घाँघों की पसलें धप धुंधी सी हो गयीं । वे कुछ खल मीन होकर बैठ रहे । कभी-कभी वह अपने सिर को बुझाते थे ।

"बोबो ।" कहकर वह उठे । उन्होंने मोटे कपड़े की बमसबंदी पहन रखी थी । उनकी बोली बुढ़ों के ऊपर रहती थी । बस्तुतः वह बोली नहीं होती बल्कि वह लहूँ का एक मोटा कपड़ा होता था—छाई गज का । सिर पर लम्बी बोटी थी जिसमें चाँदी का एक मादनिया (ताबीज) लूँपा हुआ था । कानों में सोने की मुकियाँ पहनते थे ।

उन्होंने नीम की दाँतुन मुँह में डाली थीर जल पड़े —रात्रिया मोटी की घोर । मैदान में घनेक गाय-बछड़े हकटते हो गये थे । दो-चार घण्टी नस्ल के घोड़े (साँड़) भी थे । हमारे पिताजी का कहना था कि ये घोड़े टाकुर सा टाकुर से खरीदकर लाये हैं ताकि घायों की नस्ल सुकर जाय । घण्टी माथे कीर घोड़े पैदा हों ।

बोटी ने पिताजी को बेचते ही राम-राम की । पिताजी ने उसे घासीबाँध दिया । वह छोटी जाति का था । वह घर के बाहर बैठता था । यही वजह थी कि उसके हाथ का छूँपा पानी कोई नहीं पीता था ।

"बरा बात है काफ़ी ?" बोटी ने पूछा ।

"मेरे रात्रिया तुने मेरा कबरा बढ़ड़ा देखा ।"

"नहीं तो ?"

"बड़े घबरान की बात है । ऐसा लगता है कि जमीन बढ़ते को जा बर्बा है ।" पिताजी के स्वर में भुंभलाहट थी ।

दो बार घासमी हकटते हो गये । बछड़े को लेकर बातचीत करने लगे । घोड़ी ढेर में गूबर जुनेधान घायया । जुनेधान सिर पर लदा बपड़ी बाँधता था—लाल रंग की । जाति कुछ उसमें बीजुब था । माने उसे

गामों की बड़ी पड़ोस थी । वह बीच बागों का यही था । गामों और बगइचों को इतना धारण से रखता था जितना छोटे-छोटियों को । घाट के हाट में सबका भी कुछ और मगलन बड़ी छान घोर बाग से निकलता था ।

उसने बीड़ी मुलपाकर कहा "ये रामजी बीजरी काका आज उनके छोटे राम राम की मनह हाव-हाव क्यों लगा रही है ।

क्या करें ? कल से बगइचा जोगया है और सबका पता भी नहीं चल रहा है । बड़े घराने की बात है ?

"क्या कह रहे हो बीजरी ?"

"हाँ मुझेमान बगइचा भी पेशा था काखों में एक । क्या रस और क्या बरन-पीठ ? ये उसकी माँ को इतना बुर छोड़ता था कि उसकी बुर पीठ-पीठ बरन और पीठ एव-सी अपने बाग यही थी ।"

"वह तो बड़ा मुसल हुआ घाव पर । किन्तु बाहिर बगइचा आवेगा नहीं ?"

"इसी बात को लेकर तो मैं भी हँसता हूँ ।

"सो बात की एक बात यह है कि बगइचा जंगल में भरक गया होगा । अपने घाव भा आवेगा ।" राजिया बोली मैं कहा घाव में दूर-दूर तक बाँटेंगे । बागों को देखकर राजा हुआ हुआ बगइचा अपने घाव भा जाता है । काका ! घाव बिता-बिक न करें ।"

"तेरी अमान रख हो । मेरा बगइचा जर आजायेगा तो मैं ममर्नुपा कि मेरे घर सोन का नूरज उगा है । कितना जानदार बगइचा है ।"

"वह नूरज उगा ही मगामी ।"

यह सब बातचीत हो ही रही थी कि सभी लौटा आबरी बायली आयी । पिछलियों तक पीली छीट का बाबरा काँचनी जिससे उसकी धाबी पीठ साफ दिखायी पड़ रही थी । गिर जर मुलाबी फोड़नी । यह बड़ई हरहाल की डेटी है अगिता की मृत्यु के बाद सोझा बर-बर नाम काय करती है और जो कुछ भी मिल जाता है उससे अपना और अपनी बिबबा माँ का भेट भरती है । उसकी उम्र पन्द्रह बरस की है । वह परि

त्यक्त है। उसक पति न जमे यह धारोप समाकर छोड़ दिया कि वह
 दिनाम है। वह हर बत्ती किसी न किसी से कुमर-कुमर करती रहती
 है। लीछा को इसका कोई यम नहीं। वह अपने धाप में मस्त है।

लीछा न गटन मटककर बहू "बीबरी काका!"

"क्या है?"

उसके बहरे पर नटखटपन नाच उठा। अपने गोंठों पर हाथ बिभे
 रती हुई वह बोली "काका बछड़ा खोज रहे हो?"

"हाँ-हाँ। तुम उसे कहीं देखा है?"

"हाँ।"

"कहाँ?"

"घर में छोरा नगर विजौर। काका तेरा बछड़ा वीरसिंह के
 ठाम १ बना हुआ है।"

"मन।"

"हाँ काका। दोनों की देखी कमी भी सूझी नहीं होती है। मुझ पर
 भरोसा नहीं है तो जाकर अपना भ्रम दूर कर आओ।" लीछा कमर
 तबझती हुई बसी गयी। वह जब बसती थी तब बछड़ा माया भ्रम
 विविध रूप से मुझा पा जैसे वह कोई नर्तकी हो धीरे उठती बात भी
 नृत्य का एक भ्रम हो।

विजौरी उसी धातु वीरसिंह के पास गये। वीरसिंह अपनी बैठक
 में पाद-द्विभे का पहरा लिए हुआ मुहमुह रहा था। दो-आर बाकर
 उठती थी हज़ूरी में बैठे थे। कबास उसकी दाढ़ी बना रहा था।

विजौरी में जाते ही घरक से बहा "जै माताजी छोटे टाकुर सा।"

"आओ बीबरी आओ आज मुबह-मुबह ही रास्ता भँसे मूल पड़े।
 कबास का चम्तरा रुक गया। वीरसिंह की पालें बड़ी-बड़ी धीरे हिम्मा
 थी। मूर्ख इतनी लम्बी थी कि वह जम्हें अपने दोनों कानों से निपटाने
 रहा था। वह अपनी मूर्खों को छाछ धीरे दही से बोठा या धीरे बन

पर मक्खन मगाना था ।

“मेरा बछड़ा भूल ही थापने यही मागता है, उसे लेने के लिए घामा है ।” पिताजी ने गम्भीर होकर कहा ।

“भूल से ? नहीं जीबरी इसे हमने जान-बूझकर बाँधा है । यह हमें पंसद है । उसके रस-रस में हमें मोह लिया निर्मा है । हमारा विचार है कि हम इसे अपने रस का बैस बनायेंगे । यह नापोरी बैसो को भी मात करेगा ।

पर यह बछड़ा मैं किसी को भी नहीं दे सकता इसे मैं पिताजी का साँझ बनाऊँगा ।

“हमारी इच्छा के विरुद्ध ।”

“मेरी जीब पर मेरी मर्जी चलेगी छोटे ठाकुर ।”

“नहीं । बाखिर हम इस बाँध के छोटे ठाकुर हैं । हमारी बात ही रहेगी इन बार ।

यह सही है ठाकुर सा कि राजा के चलने का रास्ता मन्ना के माथे पर से जाता है पर मैं भी जीबरी हूँ । उन सटके चले जायेंगे पर मेरी साख (घान) नहीं जायेगी ।” कह कर पिताजी वहीं से चले घाये । वह सीधे बड़े ठाकुर सरदार सिंहजी के पास गये । सरदारसिंहजी ने सारे मामले को सुनकर आश्चर्य से ही कि तुम अपना बछड़ा से घामो । मछुह की कोर गौन मीठी घोर कीन राठी (बहरीनी) ? मेरे लिए सब बचकर है ।’

पिताजी एक बार फिर गये । गौरासिंह नहीं माना । मामला संतीत हो गया । गाँवों में बातों की भी संख्या बहुत थी । एक दिन वे सत्री पिताजी के निर्देश में गौरा जी हथेली पर चढ़ बैठे । हम संघर्ष में गौरासिंह के एक मोहर की हत्या हो गयी थीर बछड़ा पिताजी के घर मागता । गौरा सिंह जब हमसे स हलना करा कि कुछ दिन यह हथेली से बाहर भी नहीं निकला । इनकी एक बजह यह भी थी कि गाँव के बड़े ठाकुर सा ने उसे कोई भी नरक नहीं दी । उन्होंने साफ-साफ कह दिया — ‘मैं घम्याम का साध नहीं दे सकता । जब जिसकी साठी होगी उसे बैठ मिल जायगी ।’

इसके साथ ठाकुर को अपने छोटे भाई गीरसिंह से कुछ भय भी हो गया था इसलिए उसका मान-मर्दन करना जरूरी समझते थे ।

माटी पिताजी के पास ही रही । बाहिर वह सम्पन्न चौधरी के घोर कुपु संनका परिवार भी बहुत सम्भा-बोड़ा था । बाबा-बाबा घोर कुटुम्ब कबोम के सारे लोग भिन्नकर लगभग पन्द्रह-बीस माटियाँ एक साथ बाहर निजालती थीं । इनमिर् उनका सारे गाँव में बड़ा घाम्मक था । गाँव में एक करोड़ पति के धनाबा दो-तीन लखपति भी थे किन्तु वे परदेस में ही रहा करते थे । वे मरन-दरने (बिवाह) पर ही गाँव आते जाते थे ।

कुछ महीने बाद एक दिन बड़े ठाकुर सा ने गीरसिंह घोर पिताजी को बुलाया । धामने-सामने बिठाया । समस-पानी की मोठ (दाबठ) करवायी । दिन का डूँप भिट गया । मन का रील कुम गया । दोनों की रात उस दिन मादक थी । गीरसिंह की हुबेसी में दोलनियों का नाच हुआ । निरन्तर लोक-गीतों की सुपासयो चारों ओर बहती रही । अनेक पीठ घामे गये । 'मेहरी भी सुनायी गयी ।

मैं की बाई-बाई बाबूजा री रेत प्रम रम मैं की राबली

मैं की सीधी-सीधी जमना रे नीर

प्रम रम मैं की राबली २

घापी रात को पिताजी नीटे । उसी रात को नीकर मरुत का उसकी बेबा को पिताजी ने पाँच सौ रुपये दिये । पिताजी उस दिन बड़े कुपु थे । वह पैर की बंधी बजाते हुए भी गये । उनकी बूँछ का आबल रह गया ।

इस तरह मेरे पिताजी धान के बनी थे । प्राण जैसे जाय पर धान नहीं जाने पाये ।

मेरा बड़ा भाई बीरहू बप का हो गया था । मैं उससे चार बर्ष छोटा था । बहुत ही दुबला पतला मरीज था जिससे मैं घोर भी छोटा लगता था । मेरा मन पढ़ने में मूव लगता था । मैं बिना गैरहाजिर के स्कूल जाता

१ राबल्यानी लोक पीठ मेहरी । [धर्म—बाबू रेत में मेहरी बोई मनुका के बस में सिचाई की प्रम रम से घरी यह मेहरी मूव रम सारी है ।]

को लाँछा हैं नहीं मिलने देती ? और जब वह लाँछा से मिलता है तब मैं उसके बिबाह की जिता क्यों करती हूँ ? मेरे अस्तित्व में अनेक प्रश्न उठते रहते थे । वे प्रश्न मेरे अपरिपक्व मन में केवल जिज्ञासार्थ बना कर रह जाते थे ।

मुबह-मुबह ही मैं सोटा लेकर जंगल की ओर चला । जंगल जाते हुए सारे बाँव को पार करना पड़ता था । कच्ची मिट्टी के बने घर, दो बार पक्की हुबेलियाँ और बीच-बीच में बास के सोलाफार ऊँपड़े । भाँवों का महीना था । हरियाली यम-तम दिखायी पड़ रही थी । खेबड़े नीम पीपल कीकर और बेर की बोटियाँ लहलहा उठी थीं । मैं काफी दूर जंगल में निपटने बाव करवा था । तबसम एक मीम चलने के साथ ही मैंने देखा—टीले की घोट में लाँछा और तेरू बैठे हैं । वे दोनों उम्र में बराबर थे ।

— / लाँछा तेरू के बासों में जँपुलियाँ उलझाये हुए भी और तेरू उसके कपोलों पर हलक-हलका हाव कर रहा था । मैं बिगड़-सा बड़ा रहा । जब मुझे होश आया तब मैंने स्वाभाव के अनुसार जबाब दिया । वे दोनों एकदम चौंक पड़े । बार धाँसें डीङ्ग कर मुझ पर टिक गयीं । मैं धर्म से घबरा उठा ।।

लाँछा ने पुकारा ठरबल !

उसके स्वर में निमी तरह की हिचक और दबराहट नहीं थी । मैं वहीं पर खड़ा रहा । मेरे पाँव रेत में खँस से गये । बेहरा उदाम-ना हो गया । मैं एक पाँव भी घामे नहीं बढ़ सका । मुझे अपनी इन हरकत पर ग्लानि हो रही थी ।

लाँछा ने फिरसे हुए मुझ से कहा 'धरे ! घा न करता क्यों है, मैं कोई डायन पोड़ी ही हूँ कि मुझे का जाऊँगी ।'

मैं उसके पास चला गया । तेरू की दृष्टि मुझी हुई थी । उसकी मुद्रा से ऐसा लग रहा था जैसे उसने कोई घोर परराज किया हो ।

लाँछा ने अपने शूँघे (बिब) से मुझे एक पीसा निजाम कर दिया,

“तू किसी को बहना मत कहेना तो तेज़ू को बापू बहुत पीटेंगे ।”

मैंने उसे निरन्तर बिभाषा “मैं किसी को कुछ भी नहीं कहूँगा ।”
किन्तु मेरे धनोप मन को बार-बार क्यों सप रहा था कि मैंने यह धमका
नहीं किया ? मैं वहीं हैं जसा धाया—उदास-उदास था ।

होश्वर को साँझ ने मुझे फिर लपकटा लिया । पाठशाला के बाहर
दाईं घोर कुंदा था । कुंदा की छतरियों की गहरी छँवा के तले साँझ ने
मुझे बन्ने बैठकर कहा, “तुने वह बात किसी को नहीं तो नहीं ?”

“नहीं । अपने सिर को हिमाकर मैंने कहा ।

“तू किसी को नहीं कहेगा तो मैं तुझे बहुत जोखी-जोखी नीजें
साकर दूँगी ।”

“पर मैं बापू से कह रही थी कि वह कल्प से कल्प तेज़ू का ब्याह
कर दे । वह धावकल मुक-मुक कर साँझ से मिसठा है ।”

“तब ।” इतना ही कह पायी वह घोर अपने बेहरे पर संवर्ष के
बाद लिये खिन्नी गयी ।

। धावकल मैं उस लाल के साँझ के बेहरे को गंभीरतापूर्वक धाव
करता हूँ तो समझा है कि उन गहरी नीली धावों में ब्याह की बात
मुन कर धरती की सारी बहना लीर उठी थी । साँझ का हृदय पीर से
बर धाया था । धावों धावुधों के बावलों में डूब गयी थी ।

धीरे एक दिन साँझ लोवर की पान पर स्नान करते तेज़ू से कह
रही थी “तान (मैंने) अभी फिर डर केमा ? तेज़ू मैं धावित बकर हूँ
पर तुझे मन से चाहनी हूँ ।”

तेज़ू ने उसका कोई उत्तर नहीं दिया । वह पानी में धमोस मार
कर लीरने लगा ।

दिन मुकलें गये । ब्याह का दिन निश्चित हो गया ।

भारों धीरे धलोत्र (धस्विन) बीत गये । कार्तिक के पहले सप्ताह
की बात है ।

राजिया पोटी बीसता हुआ धाया “जोखी जोखी जोखी ।”

पिताजी घमस सेकर बैठे ही थे । गोपी को नीकले हुए देखकर वे हड़बड़ा कर बरक बाहर धाये । धीमता से पूछा "क्या है ताबिया ?"

"बीबरी हम कासीबार बूब भये" ।"

"बात क्या है ।" एकदम बबल सठे पिताजी ।

बोरी ने रोते हुए कहा "सबू तासाब में ।"

पिताजी जैसे बड़े के जैसे तासाब की धोर भागे । नौ में बैठे ही चुना वह पावस की तरह नये पाँव बीड़ पड़ी । में भी भागा । तासाब शब्द के साथ जो दुःखस्वभावे हो सकती हैं वे हमारे मनों में बीड़ पड़ी ।

तासाब पर बड़ी बीड़ थी । उन दिनों इंसानों में एक बात थी—बीर-तो-बीर नहीं तो प्यार । छल-कपट नहीं था । प्यार करके बार नहीं करते थे । सो बुर्बटना का समाचार सुनते ही पीछासिंह भी भा गया । तेज को रीर कर लाँछा निकाल लायी थी । भैया का पेट फूँस गया था । सोमों के तुरन्त तेज को छलटा छटकवाया । उसके मुँह से पानी बिर रहा था ।

कुत्तेपान भी बीका हुआ था । वह पिताजी से कह रहा था "हमना मुन कर में अपने बूब जागे यहाँ छोड़ कर भागा । पर मुझसे बहने लाँछा पानी में छलाँग लगा चुकी थी । वह सुफान की तरह तेज की धोर बड़ रही थी किन्तु उसके नहुँचते-नहुँचते तेज तलछट की धोर बसा गया था । फिर तो कई घावनी धा गये । पर लाँछा ने बहुत कुर्ती दिखायी । सब वह बीबानी-सी पानी में बूझ रही थी ।"

बीबरी धा भये थे । उन्होंने जलते किए हुए तेज को देखा । नाड़ी देखी । उनक बेहरे की हवाइयाँ सड़ने लगी ।

पिताजी ने तड़प कर पूछा "क्या बात है बीबरी ?"

बीबरी बहुत रीर तड़ बोले नहीं । पिताजी की धमकता बढ़ती गयी । घमस में बीबरी बोले "दिन पर परपर रखमो बीपटी ।" बीबरी निरुद्ध पड़े ।

१. पर्वनाच ही गया ।

बंछनी का इतना कहना था कि माँ पागल-सी ठेकू से लिपट गयी । बछड़ी दहाड़ से मरा कमेजा काँप पड़ा । वह अपने दोनों हाथों से सिर को पीन रही थी । कभी-कभी वे हाथ उसकी छाती पर पड़ जाते थे और वह साँप पर लोट कर बसहीन मछली की तरह लड़प लठ्ठी थी । माँ को रोते हुए देखकर मुझे भी रोना आ गया । मैं मुन्नक-मुन्नक कर रोने लगा । मुनेमान ने मुझे अपने सीने से चिपटा लिया । उसकी आँखें भी भर आयी थीं ।

तभी किसी ने धाकर कहा "मुनेमान बूब" ।"

उसने अपनी आँखों को पोंछ कर कहा 'बूम्हे मैं जाय बूब ।' और वह मुझे पुचकारने लगा "रोते नहीं बेटा रोते नहीं वह सब भगवान के बेल है ।"

साँझ खड़ी-खड़ी धपू बहाती रही । फिर वह बिना किसी से कुछ कहे ठेकू का कुत्ता लेकर चली गयी ।

माँ का रोना पूर्ववत् था । वह सिर पटक-पटक कर कह रही थी "मुझे अपने लाइसे के साथ जमावो । हाय ! मेरी गोद का एक हीरा चला गया । मेरा कमेजा निकल गया । मेरा राम मुझसे बिछड़ गया ।"

बूकरी रिश्तों ने उसे पकड़ा बँध दिया और समझया । साँप चर लायी गयी ।

साँप बेल खोड़ी देर में समाप्त हो गया । मैं बहुत रोया ।

मीरासिंह जब बिना सब पिताजी के पान आते थे । उन्हें बँध देते थे । साहज बँधाते थे । पिताजी हर बार यही कहते थे "मेरी कमर टूट गयी है छोटे ठाकुर ।"

और साँप ?

मैंने देखा—वह एकदम बरस गयी है । वह उसी टीले के पास बैठी रहती है । मैं उसके पास जाता हूँ । पूछता हूँ—साँप ! भैया को यह जोब बना धाये ना सब भैया चली नहीं धायेये । तभी लोग कहते हैं कि भैया चर गये हैं । धण्णा खादी भी चर कर फिर बापस नहीं

घाबी । बर कर सोज बापस नहीं मोटते ।” येरी घाँसों नी बर घाती ।

बड़ बूट पड़ती । मुझे छपने सीने से निपका लेती । रोबन भरे स्वर में कहती “हाँ सरबराह अब बीया नहीं घाँसे के कभी नहीं घाँसे के हने कोड़ कर बने गये ।”

क्यों ?”

“बहु जगवान के पास बने गये हैं ।

“हुम क्यों नहीं बनते ?”

उसके पास कोई उत्तर नहीं होता था । सरबन की घाँस उसकी घाँसों बरसती रहती ।

एक दिन मैंने पूछा “जाँझा बीया तेरे क्या सपने थे ? तु उसके लिए क्यों रोती है ?”

उसने कोई उत्तर नहीं दिया । केवल उसकी घाँसें डबडबा जायीं । बिबुल बिबाह था—उसकी घाँसों में ।

बर में गहरी जवाबी छापी रहती थी । बीया की बुरनु का बम उसी को था । उसकी मृत्यु ने सभी के घाँसों की मुस्कान छीन ली थी । हम दोनों साथ-साथ बीते थे । रात को मैं किसी-न किसी बहाने माँ की पूछ ही लेता था—बीया के बारे में । माँ उत्तर में घाट-घाट आँसू रोया करती थी । कभी-कभी पिताजी मुझे डाँट देते थे और समझाते थे कि मैं माँ से ऐसा प्रश्न न किया कहें ?

दिन गुजर रहे थे ।

×

×

×

एक दिन पत्तराम जी हमारे घर आये। भैया की दुबल मृत्यु का उन्हें बड़ा संताप था। वह काफी देर तक भैया के मुण्डान करते रहे। मृत में उन्होंने बिनस घण्टों में कहा 'फिर बीबटी जी मैं अपनी छीटा को किसी दूसरे घर में दे दूँ ?'

"नहीं।" पिताजी ने हड़ता से कहा जैसे उत्तर उन्होंने पहले से ही सोच रखा हो।

"क्यों ?" वे धारण्य से बोले।

"पत्तराम जी आपकी बेटी दूसरे घर नहीं जा सकती। यह मेरी इज्जत का सवाल है। घर की धान का सवाल है।"

"तो क्या मैं अपनी बेटी को जीवन भर अपने घर में बिठाये रखूँगा ? बीबटी जी बेटी। सोने की लका के राजा राजा के घर में भी नहीं समायी थी। मैं तो धर्मिकन टहूँ। इस मोह को अब एक पल भी नहीं हो सकूँगा।"

"इसकी धान बिठा न करे। आपकी बेटी के हाथ पीये होंगे। वह मेरे ही घर में मरु बन कर आयेगी। कैसे चाहेगी यह मैं धानको बाद में बसाऊँगा।"

पत्तराम जी बने पड़े।

पर मैं इस बात को लेकर एक सवा झुटी। उसमें यह निश्चय किया गया कि पत्तराम जी की बेटी सावित्री (उमरा नाम सावित्री ही था।) का पठ-व्यय किससे किया जाय ? चारों घोर मजदूरी। परिवार बहुत बड़ा था। भरापूर था बिम्बु उसमें ऐसा कोई जवान नहीं था

मिसे सावित्री का विवाह कर दिया जाय । पर पिताजी अपने हठ पर मड़े हुए थे ।

इसका प्रानुमति था रहा था । विवाह की साधारण सी तैयारियाँ होने लगी । कौन बूझा बनेगा यह रहस्य सा ही बना हुआ था । इस बीच पिताजी ने पाँच के कारण छोकरे द्वारा पतराम जी से कहलवा दिया था कि कान्हा पतराम को को कह देना कि चौधरी गिबराय डोभी से सापकी बेटी लेकर ही आवेगा बनी इन्का परिणाम बुरा ही निकलेगा ।

पिताजी की धार्मिकता थी । एक भाव कई साटिबों घर में है निवसनी थी । पर दुष्टता कील बनेगा यह पिताजी ने नहीं बताया । बनी कभी इस रहस्य को लेकर परिकार चाँही उन्हें उपान्त करते थे तो पिताजी एकदम असीर होकर उन्हें डाँट देते थे । समर्थ का कोई शेष नहीं समझ आता । सब चुप हो जाते थे । सोचते थे—को होना कह देना जाएगा । ही गोरा निह सोर पिताजी अक्सर एकान्त में बातें करते थे ।

साधिर वह दिन आया । पिताजी ने बंके की ओर यह घोषणा की कि दुल्हा मेरा बेटा 'सरबग' बनेगा । घर में घूमती अधिक बात्चीय बही हुई था कि बाँकों में उनके पहले की प्रायः ऐसी सावित्री हो चुकी जिनमें बुरे छोटे और बुरे बड़ी होती थी ।

बरात बनी । बरात में पचास आदमी थे । गोरा सिंह और गुलेबान थी । ठीक समय बरात पहुँची । भोगमिह कुमाकी बन्दूक मटवाये हुए था । उमका बरात में बड़ा रोव था । घर के घाबे दालनियाँ मुरम कीत या रही थी । घर के भीतर स्थियाँ बंजल-गीठ भूमा रही थी ।

पतराम जी ने पूछा 'बूझा कील है ।

मेरा छोटा बेटा सरबग ।' पिताजी ने दबे दबे से कुछ बरते हुए कहा ।

एक बार सब में समझती सी पृथक् भयो । पतराम जी ने बीते ही बर भूमा बंके ही उनके पाँच जमीन से निवक भये । वह कुछ कहना

चाहते थे किन्तु उनकी योजना सफल होकर चढ़ गयी। पिताजी को एक घार ल पड़े। घेप बरसती घमल-पानी में गस्त थ। हमारे छेंटों व बैसों को घास घौर पाला (बैर की भाइयों की पत्तियाँ) डाला जाने लगा।

मैं घबोच था। मैंना मुझे कोई कहता था। मैं बैसा ही करता था। मेर तमाम शरीर पर घाटे व भी का घबटन किया गया था। मुझे नह लाया गया था। मये वस्त्र पहनाये गये थे।

पटराम जी ने कहा यह नहीं हो सक्ता घाएव कैबरसा मेरी बेटी से चार वष छोटे हैं।”

“तो क्या हुआ?”

“उमकी जिम्हरी बरबाद हो जाएगी।”

“इसलिए कि उसका पति छोटा है? चौबरी अपनी बेटी के माम्म को भी देखो। सैंगनी के साथ मरने संवेगर को ला गयी। अब तुम बाजार में मेरी पमड़ी उछालना चाहते हो। लोच कहें कि मिचलम की बहु हमरे के घर बनी गयी। यह मैं नहीं होन दूंगा। यह मेरी इज्जत का खवाल है।

“घाए मेरी बिगलता पर घौर कीजिये। इनमे किसी का भी जीवन मुसी नहीं होगा।”

“माम्म सबसे बडा श्रोता है। अपनी बेटी के माम्म में जो कुछ भी बिछा होगा उसे जुवतना ही पड़ेगा। बिबि का लेन घमिट है।

“पर मैं ? घौर फिर घाएन मुझे बोले में रख मैं जान घूम कर घाएँ कैसे वन करनूँ। अपनी बेटी को बूबे में कैसे रखेन दूँ?”

“फिर मुझे।” यह कहते-कहते चुप हो गये। एक बार फिर लोच लो चौबरी। मेरे हाथ मे कोई घमल घबम हो इनके पहन नहीं कर लो।” पिताजी ने जगूँ बेजाबनी दी।

पटराम जी बनानाबाने में गये। पोड़ी देर बाद यह लौटे। उरान घौर निम्र थे। उनकी घावृति से लगता था कि यह बीमार है। उनकी चाल से ऐसा प्रतीत होता था कि उनकी आँखों का बल ही बना बघा

है। वह पिताजी के पास आये। पिताजी गौरासिंह के पास बैठे थे। कहावित पिताजी ने गौरा सिंह को बातचीत के बारे में बता दिया था। हमलिए वह अपनी बुनासी को साफ करने लगा। उसकी आकृति पद्मिनी की तरह लगने लगी।

कहिए समझी भी क्या बिचार ?”

पतराय भी कोई उत्तर है इसके पहले ही गौरासिंह ने बुनासी को बड़ी करके कहा ‘हमारी बहू दूसरे के घर और घर को नहीं जाएगी। उसके पाँव हमारे ही शोरण-दार को छुएँगे।’

“आपकी यही मर्जी है तो मैं क्या कर सकता हूँ ? मैं नहीं चाहता कि एक छोटी के पीछे नून-सपनी हो। बेटी तो पैट दुखने से भी मर जाती है।” पतराय भी एकदम खरप बैठे।

बिबाह हो गया।

मुझे शायद केरों के समय अफिराँ आ रही थी। बिबाह की बुनस बुनसी स्मृति आज भी मुझे याद है। एक अजन्ता-भित्ति बिना की छ। मुपड़-समोनी के हाथ में हूँ स रहे हुए थे। वह मेरे पास बैठे थी उसका रंग गोरा था। मुझे एक बिचित्र सा आनन्द आया। अग्नि का पावन अनुष्ठान आरम्भ हो इसके पूर्व ही मैं समस्त दुखों-मुक्तों से दूर करने वाली मित्रा की बोध में आ गया। शांति की माँग का सिन्धु मैं कर बना मैं नहीं जानता। मुझे बार-बार उठाया जाता था प। निपोड़ी भीड़ मुझे पल भर के लिए भी नहीं छोड़ रही थी। मैं बूढ़ा बन गया। किसी का जीवन-स्वप्न का स्वामी।

×

×

×

हुए बाप में अपनी पढ़ाई में लीन हो गया। छहर आकर पढ़ने मया। देश स्वतन्त्र हो गया। भारत के लोगों में मामूली और → पाश्चात्य सभ्यताओं का सम्मिश्रण दिखने लगा। अजीब स्थिति थी उनके दिमागों की। इतर नारी स्वतन्त्रता पर भावण बैठे थे और उतर अपनी स्थितियों को बूझने के बाहर निकलने नहीं बैठे थे। लौकिकता का बोझ बना था। यम की बात और पाप का कर्म।

मैं कामेश्वर में पढ़ता था। हर वर्ष पाँच जाता था। हर दफ्ता मैं और पिता जी में मेरे लीने की लेकर वाक्य-मुड होता था। मैं कहती थी “बहु बड़ी है।” पर है जबान बेटी पीहर में नहीं रह सकती। वे लीन उसे संभल करते हैं।”

पिता जी कहते थे “पढ़ाई खारब होने ही लीना हो जाएगी। बाबिर लू समझती क्या है तरबण की माँ? क्या मैं चाहता हूँ कि मेरी कूज-ली सुन्दर बहु मेरे बेटे से जुड़ा रहे? पर पादमी के जीवन के घने कुछ घेय होते हैं मैं चाहता हूँ—मेरा तरबण साहब बने। धरी! लू नहीं जानती अपना बहु बहरणा हरिजन है न नेता बन गया है बहु राजाजी और ठाकुरों के पास बैठता है—एकदम बराबर।”

मैं बिडकर करती, “बैठता है तो बैठता रहे। कतिपय में रह नहीं होगा तो और क्या होगा? पर मैं अपनी बहु को घर उसके पीहर नहीं रख सकती। लूजी स्थिति तो मुझे ही जानें देती है।

“लू समझती क्यों नहीं? घर में बहु या बापेपी तो ठेरा साहब बनना-सिखना तो कर देगा बन्ध और बाव-भादकर घायेया छहर से नीब।”

‘भायैगा तो घाता रहे । मैं चाहती थी यही हूँ कि मेरा बेटा जब मेरे पास ही रहे । मेरे कान से पाँच पस बेटे हूँ ? मेरा हृदय उसे बड़ी भर के लिए भी धपने से बिलस करना नहीं चाहता । बिलम्बा धन्य होना कि मेरा बेटा मेरी छाँवों के सामने रहने लगे ।’

‘घोरतों की धक्क ऐसी मे होती है ।’ पिताजी ने झुंझसाकर कहा ।

‘घरों की धक्क मागे में होती होती । वह कुछ स्पष्ट होकर बोली ‘माप मेरी बहू को सारे बन ।’

माँ ने हठ पकड़ लिया । त्रिपा-रुठ प्रसिद्ध हाता है । पिताजी कुछ दिन धकड़े रहे पर माँ के धसहयोग पर पिताजी को पराजित होना पड़ा । मेरा मौला हो गया । उस समय मेरी उम्र अठारह की थी और मेरी पत्नी की उम्र सात की । उसका धरीर भी बड़ा हूट-मुट था । उसकी देह धज्जता की मुडोल मुकनियों की तरह थी । मज-गामिनी । मोरा रंग । बड़ी-बड़ी कान्नी छाँवें । मैं जब पूर्ण जिज्ञासा लिए उस धपुंभ रूप को देखता रहा । गौन्धर्म उनकी हर धरा मे समाया हुआ था । और मैं सब में उसके लम्बा छोटा-सा लगता था । वह मुझे बालक की तरह मोद में डबा लफटी थी । क्योंकि मेरा स्वास्थ्य भी धक्का नहीं था । मैं परेशान ना रहा । मेरा मन एक विविध सदासी धीर चिन्ता से भर गया । सोचता रहा ‘वह मेरी बहू है । इतनी बड़ी ललतनाती छोड़ी की तरह । मेरा जीवन खराब हो गया । मुझे धर्म धाने लगी । एक हीमता की भावना मुझ में उत्पन्न हो गई । मैं चुप-चाप घर में पड़ा रहा ।

घात-नास की लकड़ियाँ मेरी बहू लाविनी को बेर कर बैठ गई । हाम-परिहास बन पड़ा । उसके रूप की सभी प्रसंसा करती थी । बिन्तु कुछ लड़कियाँ पतान होती हैं । एक ने यह बिगाड़कर कहा, ‘बिलम्बा बड़ा कुम्भ हुआ है । यह मोहन धीर यह भरतार (प्रीतम) । मोद में मिलाने लायक है ।’

मोर की हँसी ।

मैंने बिगाड़ के नील मुराण से देखा-लाविनी लान से गढ़ गई है ।

उसकी उदात्त दृष्टि चारों ओर बीका कर जमीन की धोंग झुक गई है ।
 धूप की छाया मुझके पर फैल गई है ।

यह मन्नाक बिन्नी को धक्का नहीं लगा । धीरे मुग्धा ने किसी बुझावना
 में भी यह नहीं कहा था । हूँसी-मन्नाक करमा उसका स्वभाव था । बहुत
 धक्का बोलती थीं म इसलिये उसके मुख से कभी-कभी अनुचित बात
 भी निकल आती थी । उसे भी तुरन्त इसका क्यात हो जाता । वह चुप
 हो गई । अपराध की गहरी रेखाएँ उसके मुख पर नाच उठीं ।

माँ था गई थी । माँ के धाते ही छाविनी में अपने पृथ्वीक मुख पर
 बेमरिया झुंघट निजाम लिया । माँ स्वयं ही उसे देखती रही । उसके
 मुख से बाहुक्यावध निकल पड़ा 'ऐसी सुन्दर बहू बीया लेकर हुई तो
 भी नहीं मिलेगी ।'

मुझे यह सब धक्का नहीं लगा । मैं फुरकर सीधा लीला के पास गया ।
 लीला बर्बा कात रही थी । उसके घर के सम्मुख लमा हुआ पेड़ बड़
 रहा था । उसकी माँ भर गई थी । आजकल वह हवाराँ ठारों के बीच
 बाँद की तरह धक्की थी । उसका संसार में अपना कहन को कोई
 नहीं था । या तो बड़ पेड़ । अब यह पेड़ पवन के झकोरों से झूमता
 तब उसके धक्का झक्काव में फिर बेहरे पर हास्य की सीटि नाच
 कटनी थी और उसकी पसकों के मूगे छोर मुख के धक्कों से भीव
 जाते थे ।

मुझे देखा ही लीला में बर्बा जमाना बन्द कर दिया अब वह बर्बा
 कातती थी तब उसके साथ वह गीत भी सुननाती रहनी थी—

बन रे बरलना जाल रे बरलना

ताकू तेरो सोबग जाल गुनाबी मान

बरक-बरक फिर मेरगो मधरो-मधरो जाल ।

१ बरना बन रे बन तेरा ताकू धक्का है धीरे धीरे जाल गुनाबी
 रंग की है । तेरा बेर बरक-बरक कर फिरता है तू भीटी धक्का के
 सब जाल ।

माँझ का स्वर बड़ा मीठा था—कोयल जैसा ।

“क्या है सरबल ? उसने मेरी घोर देखकर कहा ।

तुम्हें धपने मन की बात कहने में धम था रही थी । कुछ घन्टस में ठकप कर घायल बन गये ।

‘घरे, तू रोता है ? क्यों ? धाज तो तेरी बहुत घाई है । तुम्हें कुछ होना चाहिए ।

बह बह ।” मैं कुछ कह नहीं पाया ।

बहु बीच में बोल पड़ी “बहु बड़ी है तो क्या हुआ ? सरबल बड़ी बहुत बड़े भाग्य होते हैं । फिर भाग्य का बिगाड़ कौन मिटा सकता है ? तेरा पिता भी धाज के भनी है वह धाज के पीछे जान है सकते हैं । तुम्हें बलिदान पर दिया तो क्या हुआ ? उसके स्वर में व्यग था । वेदना थी ।

मेरे मस्तिष्क में हजारों हथौड़े चल रहे थे । पीड़ा ऐसी थी जैसे मज्जन सर्व एक साथ बंघन कर रहे हूँ । मैं तिस-मिला कर बोलना नहीं मैं वही से भाग जाऊँगा । भाग जाऊँगा ।”

‘क्यों ?’

“तुम्हें हतनी बड़ी बहुत पसंद नहीं । मैं एकदम धावेघ में बीता ।

‘तू जान धावेघा ? भाग जा । पूरे मान उस तरीक के । गमती छीरे बग ने की घोर बंद देया उस मजबूर को ? उस ‘भाग’ ने तेरा क्या बिगाड़ा है ? उसने तेरा हाथ बन्धुनों के साथे में धपने हाथ में लिया है ।” उसने धपने धावेघो नमन करके पुन कहा ‘धपर इस बात की मनक भी तेरे बापु की पद नवी तो वह तुम्हें छुट्टी का रूप साद दिला दये जानते हो उनके मुत्से को ?’

पिताजी का धातक मुझपर गया नारे गाँव पर था । मेरा रोम रोम जननी बदनी हुई इष्टि से काँप जाता था । माँझ के कधन के साथ मैं एकदम भयभीत हो गया ।

उनी छपरिया बीड़ा-बीड़ा आया “सरबल सरबल तुम्हें बीबरी

काका बुला रहे हैं।”

“जा सरबरा सीने पर बसे जाना और किसी तरह की गड़बड़ों मत करना।”

मैं जमा प्राया। घामय पिताजी को मेरी परेशानी का परोक्ष रूप से ज्ञान हो गया था। अतः वह मेरी पीठ थपथपाते हुए बोले “अब राम की कोई बात नहीं है। मर्द बच्चे का क्या छोटा? पाच छ. माह बंड-बैठक की कि बीमार छोड़ने लग जाएगा। इंसुमान सा बलवान बन जाएगा।

घम से मैं घोर भर गया। सब मैं उन दिनों धबिक नहीं सोच पाता था केवल मेरा मन चुटका चला था। मुझे महसूस होता था कि मेरे चारों ओर दुर्मा ही दुर्मा है और एक दिन उस विपाक क्षणों की सदियों में मेरा दम घुट जावेगा।

मैं पिताजी के समान मुँह उतारे बठा रहा। पिताजी ने लण-भर के लिए घाँबें मूँबी फिर नीले माफरा की ओर बैठकर वे बोले “जब इज्जत-माबरक का खयाल उठता है तब मैं हर वस्तु को उसके लिए तुच्छ समझ कर निछावर कर देता हूँ। बात से ही बात का पता लगता है। मैं बात के लिए अपने आपको भी बलिदान कर सकता हूँ।” पिताजी का बातचीत का सहजा विस्मृत सामन्ती था।

मैं चुपचाप बैठ चुका सीपी हुई बीमार की देखा चला था। क्या उत्तर देता जगह? वह मेरी समझ में नहीं आ रहा था। कुछ ऐसी घुटन थी कि रोने की भी चाहता था।

धीरे धीरे दिन इस गया। रात के घामे घाघमान पर फैसले लये। पिताजी अपने मित्रों की मंडली के साथ पपपप बार रहे थे। बुनाव बर्बा थी। छोटा ठाकुर बिजान समा के लिए उम्मीदवार बड़ा होना चाहता था।

मुसेमाल ने कहा “छोटे ठाकुर सा एकदम बदल गये हैं। धामकल वह किसी से झगड़ा-झगड़ा नहीं करते। एक बात था कि वह बोलते थे बार में घोर मार-पीट करते थे पहले।”

गीतासिंह बराम जी करक जमा गया। बाप में बातचीत बड़ी हैरतक जलती रही। बीरे बीरे छत्ता भंग हो गयी। पिताजी भी ऊँचने लगे।

‘छरबण बैटा बा घब सो बा।’ घंट में पिताजी ने कहा।

मैं ऊपर की ओर गया। यह मुझे पहले ही बता दिया गया था कि आज मुझे बहू के पास जाकर सोना है। मैं बीरे-बीरे सीढ़ियाँ चढ़ा। हॉट बोझापी। चारों ओर घोर धम्वेरा था। मैंने छतर की मंड़ी में कदम रखा। चुपकपों की हस्की सी झकार हुई मुझे महसूस हुआ कि कोई पाँव सवेद कर बैठ गयी है। धम्वेरे में बंटी लाकड़ी काले जम्मे की लज रही थी। मैं उसके पास बैठ गया। कुछ नहीं बोला। वह अपने समस्त प्रबों को धोड़नी में डूँके बैठी थी। परवर की प्रतिभा की तरह निरुचन। गतिहीन ली की तरह निरुचन। मेरी समझ में नहीं आया कि मैं उसे क्या कहूँ? मैट्रिकवात किया था। धम्वेरा वर्ष का हो गया था वर धोड़-बिजान के बारे में मेरा ज्ञान एक तरह से धम्वेरा ही था। मैं उसके पास बैठ गया। कुछ नहीं बोला। रात बल रही थी। धम्वे में उठने कहा ‘आप सोपेने नहीं।’

“सोता हूँ।” मैं चुपचाप सो गया। वह भी मेरे पास सो गयी। रात सुजर गयी। दिन आया। वह भी जमा गया।

दिन बीत गया। वह एक बार पीहुर जाकर बापस आ गयी।

मैंने माँ से कहा “मैं आपके पढ़ना चाहता हूँ। मुम्हारे कारण मेरा एक साल नष्ट हो गया है।”

“धीरे धीरे-आड़ी कौन करेगा?” माँ ने थोड़ा गाराखी से कहा।

“पढ़न पढ़ाई तो पूरी करमूँ।”

‘घब मुझे ठीक पढ़ाई-बढ़ाई की जरूरत नहीं है। जाट के बेटे की छेती ही गोमा देनी है। घब बम्बे पर हम मेजर तैयार हो जा। वेठ-बैठाख भी चुन भगने ही पारखी बन जायेगा।’ माँ ने ज़ावेराक की तरह कहा।

पर मेरा मन नहीं जमा। मैंने पिताजी के सामने यह प्रस्ताव रखा।

सावित्री दूसरी घोर मूँह किए पास बैठी थी। उरुने पैर हाथ लम्बा बूझ निकाल रखा था। वह बाग साँझ कर रही थी। माँ बीच में ही बोल पड़ी "मैं इस मामले में कुछ भी तुमगा नहीं चाहूँगी सरवरण के बापू! बाट का बेटा साट बनेगा अपना बर्म छोड़ेगा। पर बेटे सरवरण मैं तुम्हें अपनी साँचों से भय एक पल दूर नहीं कर सकती।"

"लेकिन माँ धधुरी पकड़ी से क्या लाय ? मैं शहर जाऊँगा ही।" मैंने हठ पकड़ा।

"कैसे जायेगा क्या तुम्हें वह बहू पसंद नहीं। ऐसी बहू को मैं धकेली नहीं रख सकती। बसाला बुरा है। नहीं नहीं ऐसा नहीं हो सकता।" एक गहरी साँसका माँ की साँचों में नाच उठी "समाज-परिवार वाले क्या कहेंगे ? नहीं एकदम नहीं।

बहू के कंधन खनक उठे। मेरा ध्यान उस घोर गया। मन में सिहरन सी होड़ गयी। संभर-संभर की प्रतिमा की तरह वह बैठी थी।

माँ ने विनीत स्वर में कहा "बेटा तेरे बापू बूढ़े हो गये हैं। उन से घर बेटी का काम-भवा ठीक से नहीं चलता। फिर इनके अनेक अमेसों की पंचायतें रहती हैं इसलिए मैं तुम्हें शहर नहीं भेज सकती। फिर तू अपने पिताजी से पूछ ले।" दुबारा पिताजी ने पूछने पर उन्होंने भी नहीं कह दी। सायब बहू के प्रसन्न ने उन्हें हरा दिया था। फिर मेरी पूछने की हिम्मत नहीं हुई। उनके मुस्सीमे स्वभाव से सभी लोग परिचित थे। क्या मन्ना है कि उनको बिना पूछे, घर का एक पत्ता भी हिल जाय। पर कभी-कभी माँ के समत उन्हें मुचलते हुए उकर देता था।

तब मेरे सम्मुख लीला का बहुरा नाच उठा। सारसत बेचना की बहुरा लिए उनका मुग। मैं सीधा उसके घर गया। वह हाथ में मटकी लिये पेड़ की छींच रही थी। मैं उसके पास जाकर खड़ा हो गया। वह अपने घाप में बहुत तग्यय थी। वह पेड़ की पानी बेटी हुई ऐसी लग रही थी जैसे कोई मयता की देवी किसी नन्हू बून को पोस रही हो।

"लीला।" मैंने उसकी तग्ययता को धन किया।

“क्या है ?”

“तुमसे एक बात कहना चाहता हूँ।

“तू बैठ, मैं घबरी घानी।” वह पानी भींचकर पैर के पास-पास पड़े पत्तों व धूँरे को उगाने लगी। फिर उसने उमरु चारों ओर झाँक सगायी। हम कम का पूछ करने में उम समय पन्द्रह-बीस मिनट सपे। फिर वह मेरे पास आयी। मग़ा नास भींचकर वह मेरे पास इस तरह बैठी जैसे वह कठोर मेहनत करक आयी हो।

“क्या है ?” उसने मुझ पर दृष्टि जमाकर कहा।

मैंने उसकी ओर नहीं देखा। घपनी नहर को पैर पर जमाकर कहा “मैं मुझे पढ़ने का लिए चहर नहीं भजती। यहाँ धरा भज नहीं लमता, तुम ही जाकर मैं को समझाओ न ?”

वह लुब्धी हँसी हँस पड़ी “मैं इस पाँव की बरनाम घोरत हूँ। मेरी मला बात कौन मानेगा सरबण ! फिर तुझे पर पर जो रोका जा रहा है उसका एक कड़ा कारण है कि तेरी बहुत बचान है। बचानी में घोरत के पाँव धीमे नहीं पड़ते। अब उनके पाँव बरक की ठंडी घोर कुनवारी की मुहानी भाग में पड़ जाय और उसका जीवन बकारब हो जाय। मुझे ही देखो न गलती पति मे की मार-पीट कर बचने मुझे पर से निकाला घोर दिनाल—बदजात में कहनायी। यही बपत का बसन है।”

“लेकिन मैं देखो न वह मुझमें कितनी बड़ी है ? मुझे उसकी रान घाती है। उससे डर लमता है।”

“फिर भी तू उसका नाम खेना तो उम पर कुछ अनुप्य रहेगा ही। बुटुप-बधीमें घोर जाग-बिरादरी जाने भी उसे अनुचित बोम नहीं बोमने। नहीं तो वे सभी तेरे बापू के बानों में बंगारे जैसे शब्द नहें। “पर मैं बोड़ी जैसी बह रन छोड़ी है घोर बैठे को शहर भेज दिया है। घोर बचाना भी बड़ा गराम घा गया है। क्या पता कौन उम बहका न ?”

“लेकिन मेरी-उमकी जोड़ी बिलनी बैमन है ?”

“इसे माय की बात मान लेनी चाहिए। इसमें उस मारी का बर

भी कमूर नहीं है। जब तेरा कर्तव्य और बर्ग यही है कि उसे कुछ रक्त।
 ठेरी बहू हिन्दुओं की बूनी पाय है पीहर के बूटि से जुलकर सासरे के
 बूटि से धा बेंबी है। उसे पीड़ा देना कोई इच्छामिमत नहीं कोई बम नहीं।
 मैं वहाँ से उठकर चला आया।

रास्ते में मुझे कुछ समयवस्तु लड़के मिले। मुझे तिरछी निगाह में
 देखकर वे खिलखिलाकर हँस पड़े।

एक ने ध्वंश स चटा "ए मो पर स घोड़ो (घोड़ा) है बहू बड़ी
 छोटी छोटी (लड़का) है।"

मुझे बड़ी पीड़ा हुई। इच्छा हुई पिताजी से बाहर चूँ कि मुझे
 बहू बड़ी बहू नहीं चाहिए। मैं वहाँ नहीं रुँगा मैं शहर आऊँगा बकर
 आऊँगा। "हीनता को भावना मुझ पर छाव लगी।

मैं इत्तपति से घर की ओर चला।

बेना—पिताजी मान-सीने होकर मुझ पर बरस रहे हैं। रिमी ने
 उनके समझ चुपकी का की कि मैं मौछा में मिलने के लिए जाया करता
 हूँ। उन्होंने मुझे देखते ही कहा "मेरे नामाबक तेरी अकल घाम करने
 पदी है जो तू उस करमबनी—बदबाल के घर जाना है। क्या तुझे मेरे
 गिर पर पगड़ी घण्टी नहीं लगती मेरे बोरों (मकेंव बाजों) में धुप
 बनवाना चाहता है।"

मैं निरन्तर रहा।

"यह शहर की लूटा का घर है। पाँच-दस क्वाच अंचली क्या
 पढ़ानी बन करने को पम्पे की समयमें गया? क्या क्यों गया का वहाँ?"

मैं फिर भी चुप। मैं बेचम उनका सम्ये-मम्य पाँचों को देखने लगा।

मेरे पिताजी के पाँच औपमन पुरन-पाँच में बड़े थे। बचपन में उन्हें
 सभी नापी घा बहका बिडाने से कि पाँच बड़े बपुनों के गिर बड़े नपुनों
 के। पर मेरे पिताजी ने इस खरिनाई को अमन्य प्रयासिन कर दिया।
 मतलब उनके पाँच बहून बड़े थे पर उन्होंने कभी भी आशावादी नहीं
 की। उन्होंने सदा अपनी मान-मर्यादा रखा और अपनी अनिष्टा में बार

बाद लगाये । उन्होंने अपने पैतृक गौरव को परम्परानुसार बनाये रखा सो रखा समय बढ़ोतरी भी की ।

“बया मुंह में पवान नहीं है । पिताजी ने दुबारा पूछा । उनकी माँओं में शोक भ्रजक रहा था ।

ये पकरा गया । मेरे मुंह से इतना ही निकल पाया, “बूँ ही ।”

“बूँ ही क्यों ? क्या उसके पान कोई छरीफ घादमी जाता है ? किसी इज्जत बाने को उससे बातचीत करते देखा है ? मेरा हुक्म है कि जब तू वहाँ नहीं जायेगा ।” तू नहीं जानता तेरा बड़ा भाई तेरा भी इस घनामी है । सुन-सुन कर मिसता था । हमने उसे बहुत मना किया था पर इस जाह्नवरनी का जातु बदन क बाध नहीं उठरता । तैयू मे हमारी बरा भी परबाह नहीं की । थोर की तरह जवस में सेतों में टीनों में उससे मिलता था । इनका दीवाना हो गया था वह । परिणाम क्या निकला उस अपने प्राणों से हाथ बोला पडा । वह तो बला क्या पर मुझे भीते की मार क्या । मेरे सारे सपनों को खंड-खंड कर गया । खबर वह बिना रहता तो मैं तेरी बरा भी परबाह नहीं करता । अगर तू उम्र भर एहर में पड़ता तो भी मैं तुझे ‘ऐ’ की ‘बे’ नहीं कहना । पर जब स्थिति बदल गयी है । जब तू अकेला है हम नैया का सेबैया ।

। पिताजी घगान्त हो गये थे । बाक विह्वलता । मे उनके बेहरे पर कहना था उड क फूट पडा । मेरे अन्तस का तार-तार हिस गया धीरे मेरे मुंह से घनादास निकला । जब मैं समये नहीं मिलूँगा ।”

मेरे मुरा मे हम बाक्य का निकलना था कि पिताजी के बेहरे के भाव लखड़म बहल गये । एक ऐसी प्रसन्नता जिसका सम्बन्ध घादमी की सुनी से ही हो सपना है उनके बेहरे को पुन भी तरह निसा गयी । मैं नहीं जानता कि इसके नाथ-साथ मैंने क्या-क्या प्रतिज्ञाएँ की क्योंकि उस समय मैं बहुत भावावेध मे था । एक बिबेकहीन भावुपता मेरे मतिपन्थ में छापी हुई थी जिसका सम्बन्ध अपने घायम हृन्म कीर पराये के मुस से ही होता है ।

मुझे साबित्री ने उसी रात बताया "यह आपने बहुत जोसी प्रिया की कि मैं पहर नहीं जाऊँगा। यही जाकर करते भी क्या? सीधे भाट से घोर बैठ जाट से हा पच्छा लगता है। इसका साथ मुझे आपस समझ रहा पसन्द नहीं। मैं आपके साथ ही रहना चाहती हूँ।

दीये की बाली का सरोर बीरे बीरे जल रहा था। मरी हाट उस पर थी। उसका बचपन बस चुका था। दीयेन साथ की तपन से बचक रहा था।

"मैं भी आपके पास पड़ती हूँ। साबित्री ने मेरे पास पकड़ लिये। एक मिथुन की उस स्वर्ण से मेरे धर्म प्रत्यक्ष में दौड़ गयी। उसकी हृदयिणी रेशम की तरह मुलायम थी। हृदयिणी के दूसरे धार में हरी की धीरी रखाये सब भी नहीं-नहीं अपना अस्तित्व बता रही थी। जिसकी मोरी-मोरी मृदुल उगलियाँ सब भी मेरे पाँवों का पकड़े हुए थी। मैंने बीरे बीरे मरनी हृष्टि को बोझाया। बाहिर मेरी हृष्टि उनके मुख चन्द्र पर अपसक्त रूप से स्थिर हो गयी। उनके अनुबोध लोचनों में प्रणय का उद्गम था समकाल की प्यास थी। उनका पुनर्वासी धरर जीवन की रक्षा से प्रदीप्त थे। मेरा सम्पन्न उत्तेजना और आनन्द से पर्यटन। स्थिति अव्यतिरक्त रूप का साबित्री का। मैं उम्मे चर-सत्य इस तरह बैठा रहा जैसे मैं कोई मिट्टी का पुतला हूँ। सब उम्मेने सोझनी के एक पटक से बत्ती की बत्ताने छत्र में लपटा कर दी। पुरा पञ्चवार था गया।

मैंने अनुबोध किया—उसकी हृदयिणी सोझनी हुई मेरे माँ के पास आकर रुक गयी है। उसने मेरे चेहरे पर चूमनो की बर्षा कर दी। पता नहीं मुझे उनके इस हृदय के प्रति दबादब क्यों हुआ है? मैंने उसकी बाँहों से मुक्त होना चाहा पर मुझमें इतनी शक्ति नहीं थी। मैं उसका आतिथ्य में लड़का रहा। बीरे-बीरे मुझमें उत्तेजना बरने लगी। एक ऐसा आनन्द मेरे मन में जाया जिसमें मैं पूरा परिचित नहीं था। मैंने भी उम्मे अपनी बाँहों में भर लिया।। — 11/1/44

अपने अनुपम की परिभाषा इतनी ही हो सकती है कि उसे न चाहते हुए कुछ बर्मे करने पड़ते हैं। धीरे-धीरे मुझे ऐसा लगने लगा कि मैं एक दुर्गम हूँ जिसे सावित्री जब चाहे अपनी वासना की तृप्ति का साधन बना सकती है। मुझे उसका प्यार अपने पर बलात्कार का लगना था।

घात्र जब मैं उन घटनाओं पर विचारण करने बैठा हूँ तो मुझ लबटा है कि उनमें उनका कोई कर्मूर नहीं था। जो कार्य उसके लिए स्वाभाविक था, वही कार्य मेरे लिए अस्वाभाविक। उम्र का वह भव। कहीं पर यौवन प्रगुस्ता और कहीं मैं दूरा-दूरा-सा बूज। मैं धीरे धीरे उसमें डूब रहे थे। बरबाल इस भिन्न और नापसंदी से जरा भी परिचित नहीं था। क्योंकि सावित्री दिन भर बूबट में लिपटी कर के काम-काज में लग्न रहती थी। घर में इतना काम रहता था कि किसी को किसी के व्यक्तिगत जीवन को देखने-संभलने का बहुत ही कम अवसर मिलता था। हालाँकि नावित्री नहीं बहू थी, इसलिए प्रयास के अनुसार उन माँ विषय रूप में भाइ-व्यार करती थी। उनका विशेष ध्यान रहती थी। बरन्तु नावित्री एक परिपक्व युवती भी थी। उसमें नयी दुम्हियों बासा विप्लवा बासाय और नाज-नगरों बहुत ही कम थे। पारिस्थि पुरता के कारण बहू माँ को इतना सहारा लगाती थी कि माँ उनका इस तरह साह करने मनी जैसे भक्त अपने देवता को करता है। बहू का राज घर के लिए योग्य होना उसे मज्ज नहीं था। वह बीनगी बीनगी (बहू) की रट लगाए रहती थी।

इधर मुझे पिताजी ने ध्यायाम शुरू करा दिया था। वह मुझे सुबह सुबह उगाठ सगोटा पहनात घोर बंड-बैठक करवाते। मैं जैसे ही कस रत स निवृत्त होता जैसे ही माँ-बूब स भी मिलाकर स घातो। भी का बूब मुझसे नहीं पिया जाता था। उसक पाठे ही मुझ ऐसा लमता था कि मुझे ठण्ठी हो जायगी पर पिताजी के घम स मैं उस जहृपसी दबा की तरह पी मठा था। इसके बाद पिताजी मुझ सोन के लिए कह बैठे थे। मुझे बहरी नीर घा जाता थी। मैं उन ताप में सपन देखा करता था। करने भी प्राय-सावित्री क प्रभावमिगय क। मुझे उनकी कोला स एक ऐसी तनिस जमती दिखतायी पकृता थी जिसका ठहा करने का साधन मुझे बूँद नहीं मिलता था। कभी-कभी वह मरे पीछ इतने ओर से मामनी भी जैसे वह हवा हो। पर मैं भी बच नहीं था। मैं एक पेड़ पर चढ़ जाता था। सावित्री उस पेड़ के पान खाता। मैं उदास हो जाता। भाकाग की ओर देखता। ईश्वर स प्रायना करता कि वह मुझे हमने बचाये। मैं कातर स्वर में यह प्रार्थना करता। वह पेड़ पर चढ़ने का प्रयास करती। पेड़ इतना लम्बा इतना लम्बा हा जाता कि वह धाराध की छूने लपटा और सावित्री एक बिन्दु क मरुत दिखती।

तपन विभिन्न होते हैं। मरत होने हैं। उनकी व्याख्यायें होती हैं। मैं उन समय उनकी व्याख्यायें नहीं कर सकता था किन्तु मुझ इतना जबर मन्तोष होता था कि मैं सावित्री क हाथ नहीं छोड़ा। वह मुझे पकड़ नहीं सरी।

इधर पन्द्रह-बीस दिन से सोझा मे नहीं मिला था। सोझा भी इधर नहीं आता थी। मेरा मन उसमे विनम के विन महमा ठकने लगा। एक बही मेरी ऐसी सादिन की दिग्ग्य में छपने मन की बात कह सकता था। ये स भी मेरा ध्यान उड़ाता करता क। दोष के विन ता मुझे बन भी नहीं मन देत थे। जब दलो मेरा बहा वह की चर्चा लेकर बठ जाते थे और जो भी मन में आता उठवताम बड़ होते थे। कोई-कोई मुझे बहुत ही मही बात कह देता था जिसस में व्यथ हो जाता

अन्तरे मनुष्य की परिभाषा इतनी ही हो सकती है कि उसे व चाहते हुए कुछ बर्न करने पड़ते हैं। धीर-धीरे मुझे ऐसा लगने लगा कि मैं एक गलत है जिसे साबितो जब चाहे अपनी बामना की हृति का दावन बना सकती है। मुझे उसका प्यार अपने पर बनात्कार का लगना था।

जब जब मैं उन पटनाओं पर विस्फोट करने बैठा हूँ तो मुझे लगता है कि उनमें उनका कोई समुर नहीं था। जो कार्य उसमें लिए स्वाभाविक था वही कार्य मेरे लिए अस्वाभाविक। उन का यह भद। कहीं पर जीवन प्रकृता और कहीं मैं दृष्ट-दृष्ट-का बूझ। मैं धीर-धीरे उसमें दूर रहने लगा। दरबाने इस भेद धीर नाचनपी से जरा ही परिचित नहीं थे। क्योंकि साबितो दिन दर बूझ में निपटी दर क काम-काज में लम्बे रहनी थी। दर मैं इतना काम रूठा था कि किसी को किसी के व्यक्तिगत जीवन को देखने-समझने का बहुत ही कम अवसर मिलता था। हालांकि साबितो नती बहुत ही इसलिए जपा के अनुसार उसे मैं विदेव रूप से माह-प्यार करती थी उसका विदेव व्यन रखती थी। परन्तु साबितो एक परिपक्व दुबली भी थी। उसमें नदी दुस्मिती बाना प्रियता बाबस्तु धीर नाच-नचरें बहुत ही कम थे। पारितोषिक पुत्रता के कारण वह मैं को इतना सहारा नपाती थी कि मैं समझा इन तरह पाद करने नदी जैसे भक्त अपने बबता को करता है। बहुत ही दारा दर के लिए सोझन होना हमें सहन नहीं था। "बह बीनगी बीनगी (बहु) को रट नपाए रूती थी।

इस मुझे पिताजी ने व्यापार मुक्त करा दिया था। वह मुझे मुक्त मुक्त उठाए लगेगा वहनाते और दंड-बैठक करवाते। मैं जैसे ही कठ-रुध मे निबुल होता जैसे ही दंड-बैठक मे भी गिलाकर ल थातो। भी का दूध मुझे नहीं दिया जाता था। उसके पाते हा मुझे ऐसा लगता था कि मुझे जस्टी हो जायेगी पर पिताजी के भय से मैं उस बहुतेमी दवा की तरह ही मरता था। इसके बाद पिताजी मुझे सोन व लिए कह बैठे थे। मुझे दहली भोर था जातो थी। मैं उस माद व साने देखा करता था। मरने की प्राय-सर्विशी के प्रमाणित व। मुझे उनकी घोषो व एक ऐसी तरिफ जलती दिखतामी पड़तो थी जिसको ठहर करन का साधन मुझे इति नहीं मिलता था। कभी-कभी वह मेरे पीछे इतने जोर से जापती थी जैसे वह हवा हो। पर मैं भी कम नहीं था। मैं एक पेड़ पर चढ़ जाता था। जातिवी उस पेड़ के पास जाता। मैं उदास हो जाता। घाकान की ओर देखता। ईश्वर स प्रार्थना करता कि वह मुझे इसने बचावे। मैं कातर स्वर मे यह प्रार्थना करता। वह पेड़ पर चढ़ने का प्रयत्न करती। पेड़ इतना लम्बा इतना लम्बा ॥ जाता कि वह आकाश की सूने लपटा और लाटिरी एक बिन्दु के रूप दिखती।

सबने विभिन्न होते हैं। मरते होते हैं। उनकी व्याख्याएँ होती हैं। मैं इन समय उनकी व्याख्याएँ नहीं कर सकता था किन्तु मुझे इतना ज़रूर मालूम होता था कि मैं लाटिरी व हाथ नहीं दादा। वह मुझे पकड़ नहीं सकती।

इस परगट-जीम रिज से लाटिरी मे नहीं मिलता था। लाटिरी भी इसमें नहीं जाती थी। मेरा मन उससे निजने व लिए रहना चाहते मरता। एक बड़ी मेरा ऐसी मादिन का दिग्गम मैं अपने मन की बात कह सकता था। इस सभी मेरा मजाक उड़ाया करने के। लाटिरी के निज तो मुझे जैन भी नहीं मने देता थे। जब एलो मेरी बड़ी बहू की बर्बात कर चढ़ जाते व और जो भी मन के दाग उटपटांग बक देते थे। कोई-कोई मुझे बहुत ही ज़ही बात कह देता था जिससे मैं बच हो जाता

बा धीरे धीरे मूढ़ दिन भर खराब रहता था। तब मैं धकेला बेतों की धीरे बना जाता था। धीरे-धीरे मुझे ऐसा लगने लगा कि मुझे किसी से नहीं मिलना चाहिए। मुझे एकांत में अपूर्व परितृप्ति का अनुभव होता था। मेरी धर्ममूर्खता दिन प्रति दिन बढ़ रही थी।

उस दिन पूनम की रात थी। मैं पिताजी के पाँव बसा रहा था। प्यारह बज रहे थे। पिताजी ने मुझे सोने की आज्ञा दे दी थी। इधर मैंने दण्ड-बैठक बसा दी थी। धीरे पहलवानी मेरे धरीर पर अपना प्रभाव भी दिखा रही थी। पिताजी सुबह हाथ में पतली बेंत [जो मूँडी नामक पेड़ की एक पतली टहनरी ही होती थी।] लेकर बैठ जाते थे धीरे गिन-दिन कर मुझसे बैठकें निकलवाते थे। अथर्व मैं उनके कई मुताबिक बैठकें नहीं निकालता तो उनकी बत हुआ मैं सु-सूनी ध्वनि करने लगती था। प्रायः मुझे एक घंटे में दो-दो बैठकें धीरे ही बड़ निकालने पड़ते थे। मेरा धरीर पसीने से भीज जाता था। इतना पक जाता था कि मेरा मन बाग जाने को होता था। तब पिताजी अपनी बड़ी मूँडी पर हाथ लेकर कहते “बप्पू ! कमरत करना मोहों के जाले खाना है।” धीरे जब मैं सोने जाता तब बड़ धर्मनिक की भाँति अपने मेजों को धावा बन्द करके कहते “कमरत के साथ लमोट भी सज्जा रहना चाहिए।” उनकी इस बात से मुझे झुंझनाहट होती क्योंकि मौका मिलते ही सावित्री मुझे पकड़ लेती थी धीरे। मैं उन पर धीमट जाता था। झुंझनाहट के मारे मुझे अपने बाल लोचने की इच्छा होती और मैं मन ही मन कहता “ब्रह्मचर्य कैसे रहूँ बड़ तो मेरी मित्रिणाति छोड़ी जैसी है।” पर मैं अपने मन के बिन्दुओं को धमकों का रूप नहीं दे सकता था। पिताजी के समक्ष इस तरह की बात भीत करते हुए मुझे धर्म छाती थी। यह धर्मिष्ठता भी समझी जाती थी। भय धीरे धातक के कारण मन रोमांचित हो जाता था। मैं मन ही-मन चुन्ता रहता था। एक घटना याद आयी—

एक दिन पिताजी के माघ में शहर गया था। वहाँ मुझे सड़क पर एक पैम्पलेट मिला। उसमें एक दुर्बल व्यक्ति के कई चित्र दिए हुए थे। पश्चिम

बिच में वह लम्बा तपड़ा पहलवान हो गया था। मैं उसे मंत्र मुग्ध सा देखता रहा। उसमें निश्चाय था—घाय भी शेर की ताकत पाइये।

विस्तृत सूचना इस तरह थी—रईस अहमद-बख्श म डुबला-पतला घोर कजबोर था। जबानी में घाले-घाले उसकी घाटी हो गयी। घाटी के बाद उसकी बीबी उसमे माराज रहती थी। बात-बात में झगड़ा हो जाता था। एक दिन वह मुझसे मिला। अपने दिल के हाल कहे। मेरा मन पसीज गया। मैंने अपने अस्ताव बजहल अली के हुक्म से “घाबे हयात” नामक दवा दी। बन्द दिनों में अहमद का शरीर इतना मजबूत हो गया कि वह एक मुक्के से पक्की ईंट तोड़ने लगा। इस मौजबानी का असर यह हुआ कि उसकी बीबी जो उसे बात-बात में झगड़ा करता करती बी उसके तन्हुसे सहजाने लयी। घाय भी तीन घीरी का पूरा कोस भीजिये। बुड़े हो तो बवान बनिए और जबान हो तो मौजबान बनिए।

मैं आश्चर्यचकित सा उसे देखता रहा। अस्तव्यस्त मेरे मन में आया कि मैं भी पिठाजी को कहकर वे तीन घीगियां खरीद लूं। बाघिर मैं बाजार के पविषमी कोने में वहां भीड़ नाम मात्र की थी वह पृष्ठ पिठाजी को मौन दिया। पिठाजी बहुत कम पड़े बिसे थे। उनके लिए काला घण्टा मेन के बराबर तो नहीं था पर संयुक्त घण्टा उनके लिए पूरे तर दई थे। अधिकतर वह पड़ने से भी डी चुराते थे। अब मैंने वह पत्रा उनके सम्मुख रिया तब उन्होंने मुझे मुनाने के लिए कहा। मैं बड़ा घमं मंष्ट में पड़ा। संशोध में मेरी वनपटियों धारण हो गयीं। मैंने महमटे-महमटे उन विद्या-पत्र को पड़ा। जमे मुनते ही वह कड़क कर बोले ‘तुम्हें अकत नाम की कोई चीज नहीं है। घरे घरे बैठे यह सब टग बिद्या है। लोगों को पशु बनाने के तरीके हैं। शरीर को मोहा बनाना है तो मंघोट को मचा रणो। इस जगत की सबसे बड़ी पतिः अज्ञान्य में ही है। अज्ञेयी पड़ कर भी इस जग प्रपंचों को नहीं जानते। छि-छि।”

मुझे बड़ी लज्जा आयी और मैंने मन-ही-मन सोचा कि मैं सम्पूर्ण रूप से अज्ञान्य बत रनूँगा। पर कैसे रनूँगा? सावित्री मुझे अपनी दुबाली

मैं इस तरह बाँवली भी बिना तरह बिनाल सबगर इन्सान को अपने में समेटता है। तब मैं जिसकाय सा बड़ जाता था। मुझे लगता कि मैं एक निरीह निर्बल पति हूँ और मेरी पत्नी बासना की मूर्ति।

पिताजी ने मुझे जो जान का हुक्म दे दिया था। उनका हुक्म ठप्पा पड़ गया था। उनके साथी-संगी भी ऊँचने लगे थे। मैं फिर भी उनके पाँव पचाए जा रहा था। मेरी इच्छा वहाँ से जाने की नहीं हो रही थी। मैं बितनी बेर हो लगे उनकी बेर करके सोने जाना चाहता था। मैं यह चाहता था कि माँबिनी सो जाने लो मैं जाऊँ। पर साँबिनी को नींद कहाँ? वह मुझे अपनी बाहों में अपेट कर सोती थी। अपने घरों को मेरे घरों पर रखकर सोस लेती थी। मेरा सोस भुटता था। मैं अपने को मुक्त करने का प्रयास करता था। वह कुठला उठती थी। बुस्सा हो जाती थी। बड़बड़ाने लगती थी। मेरे पीछे को लाँचिज करती थी। फिर वह ईश्वर को कोसने लगती थी कि उसने मुझे ऐसा खसम देकर मेरा जन्म ही कराव कर दिया।

पिताजी ने जब सी बोई बाँवली पर लहर बीड़ा कर एक बार मुझे फिर कहा 'जाता क्यों नहीं? सबेर जल्दी उठना है।'

मैं बला घाया।

सम्भवतः बाँवली नीम झाकास में अपने पूरे जीवन से लपटी हुई थी। दूर-दूर तक जैसे गेट के टीन सब बाँवली में स्वर्ण बुलि की तरह बमक-बमक रहे थे। चारों ओर ऐसा लम्पटाया जा जैसे यहाँ कोई रस्ता ही नहीं है। यह सारा जीवन निराल है मोन-निस्तब्ध है।

मैं बीड़ी के भीषे की छन पर लड़ा था। दूमरी ओर साँबिनी हाथ में कोई पुस्तक लिखे पढ़ रही थी। वह बोड़ा-बहुत पढ़ना लिखना जानती थी। मैंने उसके समीप जाकर कहा 'तु अभी तक सोयी नहीं। माँबुम है, बितनी रात बीत चुकी है?'

'नींद नहीं आती।' उसने एक भावक धनवाई की।

मैंने उसके हाथ से पुस्तक धीन ली। ऐसा 'विस्वा रोठा मैना है।'

वह पुस्तक मेरे पिताजी भी पढ़ते थे। चाचा भी पढ़ते थे और बचेरे भाई भी। पर मैं जानता था कि वह पुस्तक निम्न ग्रन्थ का भागने वाली है। धारणी में उत्तमना मरने वाली है। मैंने भी इसे बस-बारह वर्ष की उम्र में छुन-छुनकर पढ़ा था। तब मुझे बड़ी रोचक लगी थी। सभी इसकी प्रशंसा करते थे। पर इस समय उस पुस्तक को सावित्री के हाथ में देकर उस डोढ़ने की तब इच्छा प्रबल हो गयी। सचमुच प्राणी जिसे दुःख करता है उसके प्रति वह धनेक तरीकों से राय प्रकट कर सकता है। विशेषतः वह शिष्टता और बहुपन्न की धाड़ लेकर अपने कुशल और हीन स्थिति को दूसरों पर आरोपित करता है। इस समय मैंने उस टोढ़ने की योजना मुरम्भ बनायी। उस पुस्तक को छीनना चाहा पर वह मेरे हाथ नहीं लगी। उसने मट से उसे अपने पाँव के नीचे छुपा लिया।

मैंने क्रोधित स्वर में कहा "यह क्या बंदी-गयी किताबें पढ़ती हो ? मर्मे नहीं जाती।"

मेरे रोग का उम्र पर विपरीत घसर हुआ। उसने धनदाई लेकर मुझे मारक कटाव किया और जाहना में ही उसने पढ़ना शुरू किया—
 तांगा बोला कि हे मर्मा ! तब लालकारवासी कहने लगी कि हे प्यारे !
 मैं तो बिमोजाब से ठीकी तावेदार हो चुकी हूँ और यह बाह्य कहा—

इस कुलवारी का तुम्ही प्यारे चीजनहार।

क्या तावत है और की बसे मन निहार ॥

तुम बेबा इस जाइनी रची धाय करतार।

धन बन्धी को जानिए अपनी तावेदार ॥

मुझे उस का मुग्धा पाया। मैं उसे धनाप-मनाप बनता रहा।

उसने किताब को अपने धाय बन्द कर दिया। वह इस तरह चित्त लेटी जिसमे उसने धंग-धंग का धमार निगार कर धा गया। मेरे हृदय पर घाघात सा लगा। ऐसा प्रतीत हुआ जैसे मुझमे कोई अपराध हो बंधा हो। मैंने लक्ष्मण हुए देखा एक अपूर्व जीवन निवास सी पड़ी है

मैंने उसे बहुत देर तक फुसलाने की बैठा की पर वह उस से बच नहीं हुई। घण्ट में मैंने उसके मुँहके पर कुम्बों की वर्षा कर दी पर उसके घरीर और मन में किसी तरह की प्रतिक्रिया नहीं हुई। वह धनु सृतिहीन प्रस्तर-मूर्ति की तरह पड़ी रही। बाहिर मैं उसे मनाते-मनाते बच गया। मैं नाराज होकर बैठ गया 'धनर तू नहीं मानती तो मैं क्या। घब मैं कम से क्षेत्र में ही सोना धुक कर दूँगा। बाहिर मैंने किसी का घर तो नहीं बना दिया है? 'परज' की भी एक सीमा होती है। क्या तू मेरी नाक रक्कड़ाना चाहती है—बसीन पर ?'

मैं यह कह कर चलने लगा कि उसने मेरा हाथ पकड़ लिया। ऐसा झटका दिया कि मैं उसकी गोद में पिर पड़ा। निरनै की वृत्ति ऐसी थी कि मैं कोई मनुष्य बालक झोढ़ें। सब अपनी दुर्बलता की कहानी कहते मुझे घम बकर घाती है पर वह बिना घाव रहा भी नहीं जाता है। दुःख-मुख के कसों को बोझराने में धार्मिक संतोष का अनुभव होता है। दुःख इस्का हो जाता है। मैं उसकी घोर देखने लगा। वह भी मुझे घपलक देखती रही। मैं उसकी मुद्रा से चिह्न उठा। उसकी माँसों में ठीक वैसे ही घाव थे जैसे मछोरा की शोद में कभीया वाले कलेम्बर में मछोरा के जोषनों में थे। वे माँस मेरे लिए घसका थे। मैंने तुरन्त उन्हें मारु दे दी। मैं एक पावन की तरह उनके घले से चिपट गया। मेरी बासना होम की धमि की तरह प्रज्वलित होने लगी। पर वह घसीम घबसाह में धिरी माँस के जोषके की तरह पड़ी रही। मुझे लगने लगा—मैं अत्यन्त निरीह और निर्बल हूँ इसके सम्मुख। और मेरा मन अपनी स्थिति के प्रति हस्ता से भर उठा। नहीं भयान्तक बीड़ा भय और हीनता।

मुझ मेरा प्रंग-भय बकास से टूट रहा था। रात को बड़ी देर तक हम नहीं सोये थे। सावित्री मुझे बार-बार कह रही थी कि घाव मुझे छोड़कर कहीं भी न जायें। मैंने उसे धाववाहन दिया कि मैं कहीं नहीं जाऊँगा। ऐसी विनती वह सदा करती थी। उसे किसी रात पर मेरा

विशेष नष्ट नहीं था। सी बातचीत में रात काफी डल गयी। सावित्री सारा राग-रूप भूल गयी थी। मुझे पहचान भी न थी। सदा की तरह उसने मुझे नहीं बताया। शायद वह समझ गयी थी कि मैं बक गया हूँ। वह उठकर मायों का काम करने लग गयी। सबसे पहले वह चाय बनाकर आकर प्यासी पानी पी। फिर वह मायों को बाना-बानी देती थी और फिर वह माँ को पायों को धुलने में भी सहयोग करन लगी थी।

पिताजी मुझे धीरे-धीरे से पुकार रहे थे। उनकी बुलाने आवाज में मेरे कानों कि वहाँ हिमा लिए, पर मैं जानबूझ कर कानों में तैल डाले रहा रहा। पिताजी विचित्र पड़े। उन्होंने कड़ककर कहा 'सरबस की माँ जरा देल तो ठेक साइना क्या कर रहा है?'

माँ उत्तर आयी। हमने मुझ बताया। मैं बड़े बोझिल से कहा मैं आज मेरे सिर में बड़ा दर्द है। मुझ सोन र।

माँ का दिन माँ का दिन ही होता है। वह भीचे बापस चली गयी। उसने बू पट को उठाकर कहा 'सरबस का माया बुझता है, वह आज कसरत-बसरत नहीं करेगा।'

पिताजी विचित्र पड़े। घाम में पड़े सोटे को छेक कर बोले 'मेरे लोके लिए भी-बूझ की नदियाँ बहा रहा हूँ और इसके सिर में दर्द हो रहा है। सिर का दर्द तो आज तक मेरे भी नहीं हुआ। जा उसे उठाकर ले जा।'

"मेकिन"।

"मेकिन-मेकिन मैं नहीं जानता। जा द्वाय क्या है मानों रुई का टुकड़ा है। बोड़ी की धाँच लगी कि मुसल गया।" पिताजी बड़बड़ाते रहे। मुझ पास जगोटा लेकर भीचे पतरना पड़ा। मेरी धाँचें मुझी हुई थी।

मुझ पिताजी के तीव्र दृष्टि में देखा। वे डाक्टर की तरह मेरा निरीक्षण कर रहे थे। उनकी धातुति मजबूत थी। कभी उनकी दृष्टि मेरे पाँवों की ओर जाती थी कभी मुझ की ओर। तब

वह इत्ने कम है हुंकार कर बोले "बेहरे पर गहलवाणी का कोई मतलब नहीं है। सरबल की माँ घाब है ठीक सपुत मेरे पास ही सोएगा।" और उन्होंने मुझे भगोटा बालों का हुचम दे दिया।

दिन में मैं कभी भी खुले दिन से साबिबी से भेंट नहीं कर सकता था। हमे हमारे परिवारों में घण्टा भी नहीं समझती है। दूसरा घर, इस तरह बना हुआ था कि मौका भी नहीं मिलता था। किन्तु उस दिन दोपहर को जब मैं बेस से लौटकर बाग पर सेटा ही था कि मुझे माँ का ठीक स्वर सुनाई पड़ा वह पिताजी से कह रही थी "आप कभी-कभी बहुत ही धरुली (धनुषित) बात पुछ न निकाल देत हैं।

"कौन-सी बात निकाल दी जायमान?" पिताजी ने पूछा।

आपने कैसे यह दिया कि सरबल मेरे पास सोएगा। क्या मेरी बहुत धकती सोएगी?

"किसने कहा कि वह धकती सोएगी। सरबल मेरे पास सोएगा और वह ठीक मेरे पास सोएगी।"

"किस सो कहें। आपकी बेटे-बिठाए क्या सूझ पड़ता है कि कुछ सनम में नहीं घाटा? दोनों मोहमार (जवान) हैं यह भी आप जानते हैं?"

"जुब जानता हूँ सरबल की माँ। यह भी जानता हूँ कि ठीक बहुत ठीक बेटे से बार साल बड़ी है दोहरे बचन की है इसलिए मैं ठीक बेटे को अपने पास सुना रहा हूँ। वह महीने संभोट सभा रख दिया तो जोवन भर मौज करेगा।

"मुझे यह भण्डा नहीं समता।

"घोरतों में टीक-बैठीक की पहचान ही कहाँ होती है। आपो अपना काम करो।" उन्होंने कठोर स्वर में हुचम दिया।

माँ घाबला सेकर बाग भण्डा करने भीतर चली गई। साबिबी पिछवाड़े में मोबर पाए रखी थी। उसे सभी तक इस चर्चा का पता नहीं था। वह सदा की तरह मग में जीन थी। मोबर आपने की बप्-बप्-बप्

एक संवीतमय ध्वनि के रूप में मेरे कर्ण-कुहरों में पड़ रही थी। वह मध्यम स्वर में पुनपुना रही थी। मैंने अपने कान लगाए कि वह क्या पुनपुना रही है पर स्वर इतना अस्पष्ट था कि मेरी नाक कोष्ठ के बावजूद मैं उस पुनपुनाने के स्पर्श को नहीं जान पाया। यह नहीं बकर था कि वह अपने घात्र में सम्मिल है। मंगीन स्वर को महज बनाना है। बेजों में 'तेजा' की पुन बरती को चोरने में बहुत ही सहायक होती है।

महा की तरह उस रात्र भी पिताजी की सभा अंग हो गई। मैं उम्मी के पास वाली छाट पर सो गया। बटल चाँद की रात्र थी। चाँद स्प रहा था। चाँदनी मंगार को अपने जीवन में आच्छादन किए हुए थी। जब सब सोम सो गए तो सावित्री आई। उस रात्र मैंने पत्नी बार जाना कि सावित्री बहुत कमुर है। उनसे धरने पाँवों की देखभालें सोप हो थी। वह बीरे-बीरे मेरे पास आई। मुझे उठाया। मैंने हड़बड़ाकर धाँसे खानी। उसने मुझे चुप होने के लिए मंत्रित किया।

मीढ़ियों के बीच ही मैंने उस समयमाया कि पिताजी ने मुझे ठेर पान होने के लिए बना कर दिया है।"

"क्यों ?

"क्योंकि वह मुझे बहुतारी रखना चाहते हैं। उनका विश्वास है कि पहलवानी के माक बहुत-बहुत अस्पष्ट आध्यात्म है।"

"क्या वह धारकी गुरती का बंधा करायेंगे ?"

"नहीं तो।"

"किस ?"

"बहु कहते हैं कि नू मुझसे बड़ी धीर तपदी है। इसलिए वह मुझे हृष्ट-गुष्ट बनाना चाहते हैं ताकि ठेरी मेरी जोड़ी धन्य हो सके।"

वह मुझे हाथ पकड़कर ऊपर ले गई। निजल चौरनी में मैंने उम्मी बसगा से सबसे धाँकों को देखा। वह बहुत उदास थी। उठने मेरे हाथ को धरने दोनों हाथों में पकड़ा। मेरे हाथ पर उसके धार-मन्त्र करते

हुए मचल रहे थे। वह विचलित-स्वर में बोली "नहीं नहीं यह कुछ है मैं आपसे बलब नहीं रह सकती थाप यथोक्त रहें मैं अपनी भा पर पड़ा रह बूँदी पर इज्जत के बाहर का काम नहीं करने। मैं नाम साबिकी है मैं अपने नाम पर कभी भी कर्त्तक नहीं माने बूँदी।"

ससकी घाँसों से मोलियों की तरह घबू घिर रहे थे। मैंने उसे क किया। उसे अपने नीले से सगा लिया पर बात सट्टी ही हुई। मुझे लम्बी बी हमला ससकी छाती पर मेरा सिर जा गया उसका हाथ मेरे सिर पर था। बड़ी नाचना जिसकी मर्मांतक पी बिजु के बंधन की सहा बी जिसकी नहरें मेरे प्रत्येक अंग-प्रत्येक छल्ली बी बाधत हो गयीं। मैं विचलित हो गया। वह मु पत्नी की तरह प्यार कर रही थी पर मुझे लगा कि वह मुझे एक ब की तरह दुनार रही है। मैं उससे उसके गले के साथ बलब गया। हीनता में बल गया। यह पीड़ित बिजुना है। मुझे पहचान बनना चाहिए। बिना अपने आपको पहचान बनाने इस पीड़ा सुनकारा नहीं। मुझे लम्बा-उमड़ा बोनो बनना ही पड़ेगा।

मैं सँभल कर बोला "नहीं ऐसा नहीं हो सकता। पिताजी की बा को न जानने का मतलब है कि उन्हें दुस्ते करना। घर की शान्ति छोड़ना। तु भीरब रह। अब माह का काम है। कहीं मुझे भी देख मेरा सारा अविद्य बरबाद हो गया। पढ़ाई-लिखाई समाप्त। आमो प्रमोद समाप्त। इस पर भी मैं कुछ नहीं करता। आत्मी को चाहता वह पुष्ट नहीं होता। वह कुपरा का खेल है। बिबि का विधान है अंत में मैं बहुत ही उपदेशात्मक अंग से बोलने लगा।

फिर मैंने उसकी ओर देखा। अपार प्रसन्न उसकी आनन प लीला कर रहा था। मैं भारी मन सिने धीरे-धीरे बला थापा प धाकर सो गया।

X

X

X

खर्चा हो गयी थी। गाँवों में जीवन सहनहा उठा था। बेटों से बेसो
 की पंढिया बजने लगी थी। ये मुबह-मुबह पिताजी के साथ बेटा बसा
 जाता था। बरती में बीज हास दिए गये थे। पिताजी ने बेटों के बीच
 एक झोपड़ी का निर्माण कर दिया था। तीन माह की जगह छोड़े तीन
 माह बीत गए थे। मेरा कब तो नहीं बढ़ा पर शरीर के अंगों में प्रामुख
 बल परिवर्तन आ गया। स्पष्ट शब्दों में कहूँ—मेरी सेहत पहले से दुपनी
 झण्टी हो गयी और मेरे लंबी-लंबी मुँहसे खींच आने लगे। उन पर
 मेरी ताकत का प्रारंभ होने लगा। उनकी मजालें बन्द हो गयीं। वे सब
 मेरी इज्जत करने लगे—मय से।

एक बार बिगनु ने मुझसे पूँ ही मेरी बीबी को लेकर मजाल कर
 दिया था। फिर क्या था ? मैंने उसको अपने दोनों हाथों पर उठाया
 और उसे इस तरह उछाला कि जैसे वह छोटा-सा भिट्टी का पुतला हो।
 उसकी कमर और पीठ में पीट आयी। उसका मुँह रोना-रोना आ हो
 गया। वह कई क्षण तक बोल नहीं पाया। कष्टों से मेरी ओर देखता
 रहा। मैंने धकड़कर कहा— अब कभी भी देखने की तो हड्डी-पसली
 एक कर देना। अब मैं पहले वाला सीकिया सरबस नहीं रहा समझे।”

मैं हल्ला कहकर जाता था। इस घटना की प्रतिक्रिया मेरे हृदय में
 बड़ी गहरी हुई। बिगनु अपने को तीसमार खाँ समझता था और मैंने
 पसक झकटे उसका तीसमारयाग उतार दिया। सारी धकड़
 मुना बी। मुझे इतना बड़ा संनौय का और मैं हूँ बेन से बंद-बैठक करने
 लगा। जैसे मुझे अपने मुँह के बीच-बीच का पता लग गया हो जैसे

मैंने इस पहलवानी के रूप में कोई कोहनुर-हीरा पा लिया हो। मैंने अपने मन को धीरे कड़ा व प्रतिज्ञाबद्ध किया। मैं सावित्री की प्रशंसा करने लगा। उससे जून कतराता था। कभी-कभी वह घर के कोने-ठिकोने में मेरा हाथ पकड़ लेती थी पर मैं उसे कुछ भी प्रोत्साहन नहीं देता था धीरे जब वह मेरे समीप आती तो मैं झट से यह कह देता "माँ या रही है या पिताजी देख रहे हैं।"

पिताजी धीरे माँ के देखने व धाममन को सुचना पाकर वह इस तरह भाग जाती थी जिस तरह चन्नेर के साथ छाया।

जब दिन दोपहर को मैं बेठ से नीट रहा था। सरवर की पास से नीचे उतरती हुई मुझे लीला मिल गयी थी। लीला का शरीर दिन प्रति दिन मोमबत्ती की तरह गम रहा था। उम्मीदी धीलों में वार्षिक मनुष्य धैर्यी धर्मीकिक धीप्ति धीरे धीरे वृद्धन गया था। मुख प्रशान्त था वैसे भक्तिनों का होता है। उसने मुझे बचते ही अपने धिर की मटकी उतारी। उसे दीपक की लीला ठगे रखती हुई बोली "तुम्हें एक बात करना चाहती हूँ मैया।"

मैं लीला से दूर नहीं मिला था। मिलने की चेष्टा भी नहीं की। कभी-कभी उसकी बात आयी तो मन को दूसरे कामों में बहुलाकर मुत्ता दिया। मैं नहीं चाहता था कि पिताजी इसको लेकर मुझ पर बिमर्से। इसलिए कभी-कभी मैं लीला को देखकर रास्ता भी काट जाता था। पर पाप मैं लीला से नहीं कतरा सका। यह भी बात थी कि वहाँ बोर एकान्त था। कोई भी प्राणी उत्तम आश-वास बिचलायी नहीं पड़ रहा था।

मैं उसके पास बैठ गया "जब बात करना चाहती हो।" धीरे मैं प्रत्यक्ष दृष्टि से उसकी धार देखने लगा।

कल सावित्री मिली थी। बचायी रो रही थी। सरवश यह कुम्भ क्यों? बाहिर यह पहलवानी तुम्हें क्या लाभ देनी?

"उसका नाम तुम्हें नहीं सुझ सकता। मैंने एक बार अपने घर"

को देखा ताकि उसका क्या भी उस ओर आकर्षित हो कि मैं परल से
 कितना लज्जा भगता हूँ ? उसने मेरे शरीर की ओर नहीं देखा । वह
 अपनी दृष्टि को मूनी पगड़ी पर जमाती हुई बोली "यह घन्तर तुम्हें
 समझा होना । मुझे तो इससे भी अमानक घन्तर दिखतायी पड़ रहा है ।
 मुनो सरसल बहुत घण्टे बरान की है । इनविण वह अपनी छाती पर
 हथोड़े भँस रही है कर्ना तीसरे दिन वह यहाँ से निकल जानी । इनविण
 तुम्हें हाथ बोककर बिनती है कि तू पहचानी घन ही कर पर उस
 बरीब को कुन न दे । जरा मोच कीन धीरत नीन-तान चार-चार माह
 धरने पठि से बिना बाँध रहेबी ? कम-से-कम उमम खो-चार पड़ी प्यार
 स बानबीठ ही कर लिया कर । वह मुझसे रोकन कहने लगी । बहन ।
 वह मेरे संक नहीं सोते तो न सोये । धरने बिनाबी का धायेन माने ।
 क्याकि मैं घर में काम लयाना नहीं चाहती । घर की शान्ति मग बगता
 नहीं चाहती । नारी पत्बर की गिमा है । महना उसका घम है । किन्तु
 वह मुझसे बोले तक नहीं । मुभसे दूर-दूर भाये । ऐसा क्यों ? ऐसा मैंने
 कीन-ना कमूर किया ? बाँहिर मैं भी धीरत हूँ । धीर इस 'धीरा हूँ'
 जैसे गलों में ब्यबा का घवाह सामर लहरा उठा ।

"मैं क्या करूँ ? क्या तू चाहती है कि मैं बापू को छोड़ा दे दूँ ?"
 मैंने सीधे वी बात को काटकर कहा ।

"पर तुने अपने बापू की यह धरणी बात मानी ही क्यों ? भयवान
 ऐसा न करे पर फिर भी नहीं तेरी बहू का पाँव घर से बाहर निकल गया
 तो बगताबी कितनी होगी ? जोय तेरे भिर पर गुन खालेये धीर बहूँदे-
 पढ़ा पढ़वानी करता फिरता है धीर बहू जगह जगह मँह मारनी फिरती
 है । मैं मच बहूती हूँ वह पीड़ा धीर भी अमानक होगी । उसे कोई भी
 सह नहीं सकेगा ।" वह कुछ शरु तक बीन रही । उसके चेहरे पर घवाह
 ब्यबा छा गयी । एक घण्टा बैरना ने उस कमरक मोली दाम्मा की बाली
 में मरसनी का बाँध करा दिया । वह अर्धरात्रि में अवन घापये बोली
 "धीरत को कोई नहीं बाँधता । उसका बाँध के लोई को कोई नहीं बाँधता ।"

जान पाया। सोप बत्ती एक धूल से सम्पूर्ण जीवन को लक्षित करते हैं
 भूम्यांकन करते हैं। यह संचित नहीं। दरघण्टा वह एक घंटा पनेब है
 जो पिन्ने से प्रसन्न रहता है पर जब उसे पिन्ने में बकरत से प्यार तक
 पाया जाता है तब वह मुक्ति का आह्वान करता है और अबसर मिलते
 ही कभी-कभी वह उड़ भी जाता है—नील वन में। फिर उसका कोई
 ठिकाना नहीं—कोई अधिक नहीं कोई ठहरान नहीं। वह उड़ता रहता है
 जहाँ बचता है जहाँ बैठ जाता है, जहाँ बैठता है जहाँ सोप बापस उसे
 पिन्ने में बन्द करते हैं तड़पाते हैं जोड़ देते हैं उड़ा देते हैं और पनेब
 एक दिन टूट जाता है। सरबराह! उसके दर्द को किसी ने भी नहीं जाना।
 उसके मन-सरोव? की किमी ने भी बाह नहीं ली। इसलिए मेरी तुम्ह
 बिलती है कि सारवालाही—मेव बाव इसक पहलें तु अपने घर को
 सम्मान में।

उसकी हर बात का मुँह पर गहरा प्रभाव हो रहा था। हमके
 घबों का लय मेरे हृदय में बहर रहा था। मैंने असह्य की तरह कहा
 'मेरी मा-बारी तुम नहीं जानती। लीखा! मैं एक दुर्बल प्राणी हूँ।'

'इस तरह हिम्मत हारने से काम नहीं चलेगा। जो बही है उसके
 लिए लक्ष्य बकरी है। तेरा बाप तुम्ह पर प्रभाव करता है तेरी बहू
 पर प्रभाव करता है। तू मान बहलानी कर, पर बार साल का
 प्रचार नहीं मिट सकता। वह धमिट घर है, उसको केवल तेरा प्रमीय
 प्यार ही पाट सकता है। उगेना और प्रमगाव बननी पूरी ही बकावेदा।'

बहू उठी और चल पड़ी। मैं कुछ देर तक खड़ा रहा फिर उसके
 पाय जल्दी से गया और बोला 'मैं तुम्हारी बात पर प्रमस करने की
 कोछिग बकेंगा। किन्तु! मैंने बात को बलकर कहा 'लीखा!
 तुम इतने पानी का क्या करनी हो। इन दोपहर में इस तरह घर ?
 मुझे हमने डर लपगा है। रीपा हम में'।

'मैंने एक पैड़ लपगा है न तेरे रीपा की वार में। अपने पैड़ को
 बापन मिटा करने के लिए। वह पैड़ अब मेरे घर के बागे पोड़े रिनों

में लंहाहाने मयेया । प्रभु ने तेरे जैसा को मुझसे छीन लिया था और प्रभु ने ही उसे वापस मुझे सौंप दिया है वना इतनी बल्की यह पेड़ नहीं लगता । देखना, अपने सामने इसमें फूल लगेंगे । उसकी मृगमय से सारा योशला महक उठेगा । पर मैं पहले साल एक फूल भी किसी को नहीं दूँगी तारे के तारे प्रभु के चरणों में चोट कर दूँगी ।”

उसका सारा भर धाया । वह बनी गयी । मैंने मन ही मन कहा “बाबरी कहीं थी ।”

उसके चलने के बाह में पपड़री पर मोचता हुआ चला जा रहा था । रास्ते में कई परिचित मिल । उन्होंने मुझसे राम राम की । मैंने उन्हें जवाब भी दिए । लेकिन मैंने किसी को ध्यानपूर्वक नहीं देखा । मेरे मन में नाबिबी को लेकर सबेरेदुन चल रही थी । बाबिर उमने पर का भेद लीसरे कम में क्यों आता ? इतना दुःख-मताप था तो मुझसे कहती । कभी-कभी मेरा मन उसके प्रति कसगा मे घारे हो जाता था । इधर उसके पारिवान मुख को देखकर और उधर अपने संयम देखकर मुझे लगता था कि मैं पहलवानी नहीं कर रहा हूँ बल्कि अपना दुर्बलता को छुपाने के लिए मैं “लायन का एक अच्छा रास्ता हूँ” लिया है । वना मैं किसी भी तरह नाबिबी से मिल सकता हूँ । पिताजी या उसके लिए बहाना बना है । बसुन मैं स्वयं उससे दूर आकरा चाहता हूँ । बाबी रात को मैं उनसे बातचीत कर सकता हूँ । बीबर जाने पिछवाड़ छग्रे व मिल सकता हूँ ।

“नहीं । कहाँ नहीं । किन्तु कहीं उमने पर मैं बाहर कदम रख दिया तो ? किसी से प्रेम कर लिया तो ? हम जलने प्रभु ने मुझे विनम्र कर दिया और मैं तेरा नवम उठाता हुआ घर की ओर चल रहा ।

गिनाजी गीराबिद् के पास बने हुए थे । बाँ बाग की कोठी माफ कर रही थी । नाबिबी बाबों के लिए “जगार पका रही थी । दुर्गे में पिछवाड़े का नारा एगार परा हुआ था । उन बुपीपार में नाबिबी अभी बची बापव भी हो जाती थी । मैं उसमें बोड़ी दूर चला हो गया । मैं घात्र हमसे बाबव बातचीत करूँगा । लीला दीक बहनी है कि ऐसी कनेजा

करने में मुझाई बिगड़ जाती है।" तब मैंने एक झुलटा के पति के बारे
 दुखों की कल्पना की और उन्हें अपने में धारणसात किया। मेरा रोम-रोम
 सिहर उठा। वही "मैंने किसी दुख से बच-बच कर लिया तो ? तब
 मेरे ममल बिम्बा गोला मैना की वै भाषिकाओं भाष उठीं जिन्होंने किस
 तरह अपने प्रेमियों को प्राण किया और पतिमों को उलझ बनाया। मेरे
 मन में झुरझुरी-सी छूट गयी। मैंने यह निर्णय गुरजित किया कि मैं इस
 लोहा-मैना की पोथी को बट्टी में भोंक दूंगा। बड़ी खराब है यह पुस्तक।

पेपडियों (उपमे) ने घाय पकड़ ली थी। चुपचाँ बीरे-बीरे साफ हो
 रहा था। उसके भाष मैंने देखा—पाँखों को मलती हुई साक्षिणी घा गही
 थी। झुर्रे के कारण उसका पीरा मुझ रोम-रोम सा हो गया था। पर
 जैसे ही उसने मुझे देखा जैसे ही वह स्तम्भित-सी लड़ी हो गयी। उसी
 मुद्रा में लग रहा था जैसे उसे अपनी पाँखों पर विश्वास नहीं हो रहा
 है। एक बार मैं रज्जकर कई दिनों तक जलकर बातचीत न करना एक
 पत्नी के लिए बहुत ही कठोर बंध होता है। देखते-देखते उसकी पाँखें
 सजल हो उठी।

“जब ऐसी मुगीन और सज्जन स्त्री घाय्यखाली को ही मिलती है।
 किन्ता सहीम बंध है इसमें बंधे वह कोई निर्दोष बीवार हो। किन्ती
 गभीरता है इनमें जैसे वह धवाह सामर हो। मैं एक धातु में यह सब
 सोच गया। हमारे ही लग मैंने अपनी माधुरता को संभाला।

“यहमे मुझे इसे डाँटना चाहिए ताकि यह मेरा रोम खाती रहे।”
 मैंने बोला और मैं प्रकट में बोला “सुन तो। मेरे हाथ के इशारे से
 वह मेरे पास आयी।

“तुने लौछा को क्या कहा ?”

“वह मेरे पास झूझ उतारे खड़ी हो गयी।

“मैं तुझे पूछता हूँ तुन लौछा को क्या कहा ?” मेरे स्वर में कृत्रिम
 रोप था। घाबिर घर की बात बाहर नहीं बनी गयी। सुन वह बहुत
 चुपि बाठ है।”

मैंने देखा—उमकी बड़ी-बड़ी धाँसे पर धाँसी हैं। उमके पीरते घरों पर बेदना की छीछि दी जियने उमके घर पर और धारणक सबने लप।

“पर की इगल घरबापी के हाथ में हाथी है। फिर बीसो ठरो मर्गो। जो मुझे घण्टा मरे बहु कर।”

मैं बूमा। मुझे बिरबाप या कि बहु मुझे रोकेगी। पर उमन मुझे नहीं रोका। उमन घरना मुँह छोड़नी के पन्ने में छुटा लिया और बहु कूट-कूट कर रो पड़ी। मैं सो करम बना। मेरे घरम ने मुझे बलने का आदेश दिया पर आत्मा की महारहियों में मोली बापना है मुझे रोक दिया। किस कोने में जागो बापना प्ररमिज ली की तरह मुझे कपा मयो। मैं तुलन बूमा। उमके हँडे मँह को उमाड़ा।

“रोनी क्यों है ? मैंने तेरे मन के लिए यह सब कहा है। बड़ी बापु जी को यह सब मानूस हो गया तो बन्य हो जायगा। उन्हें लीला में बाध करना भी महारा नहीं। वह उन्हें एक धँसी हुई छिनास समझते हैं समझी।”

बनने रोना बन्द नहीं किया। उमके पाखों पर धाँसु बहुत हाँ बा रहे थे।

“मब तू रोना बन्द कर दे।”

“मैंने रोना बन्द कर ? मैं निरमानी धीर करमबनो हूँ। अब मुझे भगवान ने पहुँचे के मन्त्र हो बुल से घटा है तब मैं रोना बन्द कर ? रोनी रहूँगी धीर घरने भाव को बोलनी रहूँगी।”

“ऐनी बाने नहीं करनी चाहिए। जिनाजी हमारी मलाई के बिना ही यह सब कहने हैं।”

वह भड़क उठी “यह कवी मलाई है ? घान बाहर बरा उन्हें पूरे कि इन उम में बहु गुर मामूजी में जिनेने दिन बन्य रहे थे ? बरा मो घांस बनी कि पहुँचे मामूजी के पाग। मामूजी एक बार पीहर बुरी नहीं थी। बापब समय पर नहीं लीटी तो जानने हैं घाव ५३”

जलने लगी । जलती-जलती एक पल्लवारा धीरे छोड़ बयी । 'सुतिने जब प्राप तक जाय तो मुझे बुला लीजियेना साये बकान हुर भूँपी ।' प्रीत बहू गज-मामिनी की तरह मचलती हुई जमी पयी ।

मैं धपन कार्य में निमग्न रहा ।

पिताजी आ गये थे । उन्होंने मुझे घाते ही पूछा 'किसकी बैठकें निकली ?'

मैंने तीन गी बैठकें निकाली थीं पर मैं मूठ बोला 'पाँच ही ।'

प्रातः दू हवा की तरह चल रहा है ?'

मैंने धपनी बैठक की बत्ति जो तेज करते हुए उबड़े स्वर में कहा 'बहु सब प्रमत्ता की बात है ।'

बठरों का डीर समाप्त हो गया । पिताजी ने आत्मीयता से धपने संगीछे में मेरा पसीना पोंछा । मेरे कन्धों को बचाते हुए बोले 'धब तूझे देखकर ऐसा लगता है कि तू—धपने बाप की धाम में बड़ा नहीं लबले दिया । धब मैं तुझे बन्धूक बलाभी भी सिखलाऊँगा ।'

मैं कसरत से निवृत्त होकर छेत् की धोर चल बड़ा ।

सभी रात सावित्री ने मुझे फिर बुलाने का संकेत किया पर मैं बालबुद्ध कर नहीं गया । मैं उससे कठराता रहा । जलने मुझ पर पानी के छींटे पड़े छोटे-छोटे कंकर पर सब व्यर्थ । मैं प्रयास निहा का बहाना बरके पड़ा रहा । एक बहू मिथित हीनता और दुर्बलता थी जिसने मुझे बाहू कर भी उठने नहीं दिया क्योंकि मैं सोचता था कि वह मुझसे ४ वर्ष बड़ी है ।

उनके सात दिन बाद सावन लगने वाला था । मेरे समुर में सावित्री को सेवाने का पहलू ही मँदिरा मित्रवा दिया था । मैं उसे पीहुर भिजने को राजी नहीं थीं । इसका मुख्य कारण था कि सावित्री के जाने के बाद मैं को बबे की तरह उसके काम करना पड़ता था । तब वह पल भर के लिए भी र्भंग की नाँस नहीं ले सकती थी । इसलिए उसने सावित्री को पीहुर भिजने का हृदय में निहायत ही उम्मे डंग से विरोध किया ।

माँ ने अपने सन्ध में गम्भीरता लाकर कहा "पर म काम-नाम बहुत रखा है। मेरा धरिीर भी अब बचाव सा ही ये रहा है। पहुँचेपामी पति भी नहीं रही। फिर बकेले मेरा मन भी नहीं लगता।"

पिताजी चाहते थे कि वह बली जाय। इससे मेरे बहुरूप का समय और बन जायेगा तथा मैं निश्चित होकर डंड बटक दूँगा।

बाकिर बात पिताजी की रही। वह निश्चय हो गया कि माँबिनी अपने मैंने जायेगी ही।

साँबिनी के पीछर जाने और सावन मयने म घड़ी हो दिन पय पे मैं बैठ के चारों ओर जोरी हुई चाई को ठीक कर रहा था। इन साँबियों का उपयोग यह था कि जब रोत-नाचक टिट्टी एक आता था तब हम उन्हें छाइयों में मिट्टी से पाट लेते थे। एकाएक मैंने दूर गगड़ी की गर मजर शीझायी तो देखा कि मिर पर भाता मिर साँबिनी था रही है।

उसके भाता माने का वह पहला अवसर था। मेरा भाता था तो मेरी माँ साती भी समवा कोई गाँव का छोकरा। भाव साँबिनी को लाते देकर मैं हीरान रह गया। मैंने भट-से फावड़ा रखा और गेन में बनी भोंपड़ी में बसा गया।

साँबिनी घायी। उसने अपनी पसरबी बाहर खोली ओर एक सम्वा जान जीबकर चाँसे को जमीन पर रखा। उसकी मस म पामी की मोटरी रोरी से बंधी हुई लटक रही थी उसे जो जमीन पर रख कर उसने एक घमड़ाई ली। उसक हाथ के बंगल बीरे-से खमक उठे और तिर के और के खमकील लग धुप की वतली लकीर के स्पष्ट से बन गया उठे।

मैंने उस पर हटि जमाकर कहा "भाज तू यहाँ कैसे धा मयी?"
 "क्यों मेरा नहीं माना बना है। हरएक परवासी ही अपने परवाने का भाता लाती है, फिर मैं क्यों न लाऊँ? उसका स्वर तेज था जिससे मैं लहम गया। मैं विनम्र होता हुआ कहने लगा "तू मेरा मतलब नहीं समझी। मेरा कहने का मतलब यह है कि तू माँ को कुछ कर ले

“नहीं समझता तो फिर मैं क्या कहूँ ?

‘व्याज बीजिये ।’

‘कैसे व्याज ?

‘आप का मन भी रखिये और मुझे भी कुछ बीजिये । आप बरा सच्चे मन से कहिए, मेरी यहाँ कौनसी सबी नगद-देवरानी बँठी है जिनसे मैं बड़ी-बो-बड़ी मन बहलाऊँ ? इस घर में मेरे लिए जो कुछ भी है वह आप है । जब आप हम तरह भूँह भुकाते फिरते तो मेरे मन की कौन मुनेपा ? आप नहीं जानते कि मैं रात कैसे गुजारती हूँ ? बाहिर तारे भी गिनते-बिनते घाँचें बुलन लग जाती हैं । मन टूट कर बिखर जाता है । पोर-पोर में पौर उठ जाती है । जीवन में हम जैनी विवाहिता औरतों का मूल-मंछोप यही तो है कि वह अपने ‘सैज क सियार’ के साथ दो बार बहियाँ हूँस-बोलें । जब वह नहीं फिर हाथों की भूँदियों की लकड़ की नहीं मुहाली ।

उसकी घाँचें उबड़बा घायी । विचार ने उनके गुलाबी पागो को कण्ठ घर के लिए स्याह कर दिया । मेरा मन क्या स भर पाया । मैंने उसका हाथ अपने हाथ में लेकर प्रतिज्ञा की मैं आज रात तुमसे बहर मिटूँगा ।

‘आज मर नहीं-सब-हमेसा । दो दिन बाद मैं पीहुर एक माह के लिए चली जाऊँगी ।

‘अज्जा महा मिन भूँवा ।

‘मेरी सौम्य आइये ।’

मैंने उसकी सौम्य आयी । वह हपोस्तसित होकर चली गयी । मैं उसके पिछले हिस्से पीर उसकी मस्तानी बाल को धपलक देसता रहा ।

सूर्यास्त के साथ मैं घर पहुँचा । घर में कोलाहल मचा था । पिताजी मचनर बड़े की तरह लकड़ खड़े थे । ताबिची धूपट निकाले एक कोने में कुबकी पड़ी थी । माँ घाघा धूपट निकाले कोर सी रहीं थी । मैं जब पोर गया ही नहीं । बाहर लड़ा होकर सुनने गया ।

पिताजी कह रहे थे "मैं पूछता हूँ कि सरयू की माँ तेरी धसग नहीं बनी पड़ी थी ? तू तो सयानी-समझदार है, बहू को समझ देती ।

"मैंने समझाने में कोई कोर-कसर नहीं रखी । पर बहू ने कानों में तेल डाल लिया । मेरे मना करत-करत चली गयी । मैं उस हम उल्ल में बाँधकर बिट्ठने से तो रही ।

"उमे समझा बती । घाबिर तब पहचानी करता है । फिर मैं इन्हीं लोगों के सुख के लिए यह सब करा रहा हूँ ।

✓ "घाज-कम की छोरियाँ खुसमों में बड़ी मर भी धसग नहीं रह सकती । घाज लोगों का जमाना सब गया । जानते हैं, पहले घाजी-बहू बाठरी में दीवा तक नहीं जमाते थे । भूँस सब बोमन तक नहीं थे । जब नर बहू बटा-बटो न जन मैत्री थी सब तक पनि के मामने जिन् के उत्राम (प्रकाश) में घाजी ही नहीं थी । पर अब के बातें कहानियाँ हो गयी हैं । कमिपुग है—घाज के छोरों-छोरियों की मपुरा छीन लोक से स्यारी हो है । हिमो की कुछ मुनते ही नहीं । हमार साम-मुरर नहीं लकी कर देते थे वहाँ से हम हिमती भी नहीं थी । घाज-कम की बहुरें साम-मपुर की बानों को फुटों का बोकना समझती हैं ।"

पिताजी ने सावित्री को सम्बोधित करके कहा "तुझे धरनी साम के हुरम को नहीं टानना चाहिए । यह बुढ़ी बात है । हमारे घर का परम्परा के बिस्स है । धीरे जो हो गया उससे निरा कोई उपाय नहीं है घागे में ऐसा होगा तो ठीक नहीं रहेगा ।"

सावित्री ने कोई जबाब नहीं दिया ।

मभी धरने-धरने घम्बों में व्यस्त हो गये ।

पिताजी कोपेन-पाटी के दरबार चले गये । जैसे जैसे जुमाज नखरीर धारहे थे पिताजी का महत्व बढ रहा था । सभी दलों के धारयो पिताजी के नाम घाटे थे और उन्हें धरनी मरद करने के लिए कहते थे । पिताजी की धरनी को विशेष नीति नहीं थी । अगर उनकी धरनी इच्छा का सम्पीरवार राहा नहीं होया तो यह साथ था कि वह बाँधन का मुकदम

रात को हम दोनों फिर मिले । गीन और स्वयं साक्षात्करण में
उसने अपने मन की बात कही ।

और वो दिन बार बार अपने पीछे जाती गयी ।

बातें समय उसकी छाँवों में छाँवें मरे थे ।

×

×

×

उसके बातें हीठ की छिछोरे दिन एक दुर्बलता और बटी । बात यह
थी कि बीबटी हरमुख के बेटे जीता ने हमारे खेत की पानी की नाली
को काट दिया था । मैंने इसका विरोध किया । उसने कोई परवाह नहीं
की । मुझे पुस्ता था गया । मैंने उससे झगड़ा कर लिया । उसके घर में
गुन मा गया और मेरा एक दाँत गायब हुआ गया ।

प्रायः सारे प्रतिष्ठित लोग चंद जलों में एकत्रित हो गये । ऐसा
होता था कि ये साक्षात्करण उनके पुनः-संस्थापना का रूप में लेते थे जिनके
परिणाम उनकी प्रीतिपूर्ण को भी भोवने पड़ते थे ।

एक बात और स्पष्ट कर देना चाहता हूँ । यह यह कि स्वतंत्रता
के बाद हमारे वहाँ के प्रमुख दायित्व किसान वर्ग की मांगी हासत बहुत
घण्टी होने लगी थी । जो भरती उनका लिए समिन्धन थी यह सोना
उपलब्ध होने लगी थी । पक्ष-स्वयं किसानों में कुछ भी की भाषा का प्रचार कम
होने लगा और धरातल की भाषा का अधिक । कुछ किसानों में पुष्टा फैलने
की धारणा भी पड़ गयी थी । और तो और पड़े-भिड़े किसान घरों में
देखाओं के वहाँ मुखर गुनगी भी जाने लगे थे । जीता मुझसे बढ़ा था ।
उसका रंग काला और भूँह बग़र की तरह कुछ धागे की धोर निकला

हुमा था। वह राजनीति में भी टाँग मझाता था और अपने आपकी कीमे से भी बहुत समझता था। मेरे पिताजी की हर गतिविधि का विरोध करता था। साथ ही प्रायः वह मैं ही की भी साक्षात्कार था क्योंकि उसके सबर्बक मुट्ठी भर थे। मुझे वह सावित्री को लेकर चिन्ता रहता था। उसके चिढ़ाने का हव भी बड़ा विविध था। परिहास-वर्षास में वह बूने मार देता था।

कहता "वेरी वह तुम्हने बड़ी रानी रहनी होयी।"

"क्यों? मैं पूछता।

'इसलिए तू खनम छोटा है। छोटा बासम बड़ा मुहाम होता है।

या कहता "यार, सब-सब कहना वह हथिनी तुम्हें बच्चे की तरह कोर में जटा सेती होयी?"

मैं उत्तर में उसे कबल चम्बर कह दिया करता था। जब हमने मेरे लेख की नासी काट दी तब पिछली सभी बातों का बदला लेने की मेरे मन में अग्रयाचित था यही थी। मैंने अट से लार्दी निकाल कर उसके मिर पर दे मारी थी।

भीड़ जमा हो गयी थी। भर पिताजी कन्ध पर बलूक मटका कर आ गए। हरमुख भी कम नहीं था वह भी अपनी 'दुनामी' निशान लाया। किन्तु लोगों ने उन्हें रोक दिया। पंचायत बंटी और पंचायत ने उसे हरमुख के बटे की बदमासी ही बताया। मामी बापस लेल दी गयी।

इन उत्तेजना पूर्ण आभावरण में भर पिताजी और हरमुख में एक रात लय गयी। वह छन थी—मरी और जोता की कुरनी। हाताकि हम दोनों पहचान नहीं थे पर पिताजी का यह कृप्य करना चाहता था। वह एक बार हरमुख की पगड़ी अपने पाँवों में डमकाना चाहते थे।

रात लय गयी। सारे दोह वालों के बीच कुरनी बीबानी के बार...

होनी निरपेक्ष हुई। कुछ समय चाहिए—शरीर की शक्ति की वृद्धि के लिए। अब पिताजी मेरे प्रति और समझ हो गये। उन्होंने एक दिन मुझ-मुझ माँ से कहा “सरबल की माँ सरबल की समुदाय कहलबारे कि बहू को बीबाबी के बाद मेजे। जब तक कुस्ती न हो जाय तब तक सरबल अपनी बहू के पास न जाने पावे वरना सारी मेहनत पर एक दिन में पानी फिर आवेगा।”

माँ को यह बात अच्छी नहीं लगी। सावित्री के सच छूटे-छूटे माँ उसके स्वभाव के बारे में जान गयी थी। उसे इस बात का ज्ञान था कि बहू उसके बेटे के बिना नहीं रह सकती किन्तु पिताजी के बीबाबीन कुस्ती के ममल किनी की भी नहीं चलती थी। छविदा समुदाय पहुँचा दिया गया। पिताजी ने राहण की सौंठ ली।

अब मुझ पर विशेष ध्यान दिया जाने लगा। मावति व्यायाम मंदिर के पहलवान मन्मथ महाराज मुझ-मुझ मुझे बीच पेच की सिखा देने धाते थे। बी-बूच की माना भी बढ़ गयी थी। मेरी हर बतिबिबि पर मुझ ध्यान रखा जाने लगा था।

गाँव की चौपालों तालाब के बाटों और बेटों के बीराहों पर इस कुस्ती की बढ़ी चर्चा चल गयी। लोगों में उत्साह दिखने लगा। पिताजी कुछ दिन से अपने पास मेरे अनिरिक्त अपनी बम्बूक को भी सुनाने लगे। क्या पता रात बिरात हरमुख बर पर जाया बोल दे तो ?

पिताजी हर जगह मूँछों पर ठाम बे-देवर कहते थे “इस बार हरमुख की नाक काट कर ही चूँगा।”

जबकि हरमुख भी मीथ में नहीं था। उसका मोटा बटा बिरोधी व्यायाम शाला ‘अधु व्यायाम शाला’ के पहलवान किशना महाराज से शिक्षा में रहा था। जीना क पूट होते धीन-प्रायव उसको कुस्ती में वृद्धि कर रहे थे। उसे देखकर मेरे मन में यह भावना जगती थी कि बहू किसी शम्भान का नहीं बीतान का बच्चा है। मयामक धीर धबकिकर।

मुझ में अंका बाध था गया। जीता की कुलीनी ने मुझ में नई स्फूर्ति

घोर ताजवी भर दी। मैं बूने बेग से कमरत करने लगा। मेरे धर्मों में निष्कार छा घाने लगा।

/ साधन के बूने बेड़ों की शाखाओं में खाम लिए गये थे। सुबतियां मान बीने, बाली पुनाबी घोर बैधरिया बस्त्रों में सज्जित अपने मधुर स्वर में गाने मग मयी थी।

बड़ा धनस्य बीतत था। उस मौन में जब कमरतारे बादल घावाग में घिरे रहते थे घोर सुबतियां जब कवन खनकाती घोर पापतिवी के बंधन बजाती बेतों घोर मरवर की पाल पर रमक भ्रमक करती बुझतीपो उस मुझे सावित्री की भाव दावाती थी। उस दिन नभमी की मुझे उसकी बहुत मार आई। हुआ क्या? बेत में काम करते-करते मेरी दृष्टि साहिब बुझाणे (बाल बाली जाति-बूज पर बड़ बह अपने प्रेमी व बदल में हाव खान जा रही थी। जमे बैधकर मैं उत्तमित्र हा गया था।

मैं नेत्र में मग मारे बठा हुआ बूने हुए धनुषों का देग रहा। दूर-दूर तक बाली पटाओं का नासाय्य छाया हुआ था। मौन बहता है रहा था।

म जाने क्यों मेरी हजरा नाछ मे बिनने की हो गयी। मैं क्या। मुझे हर बदन पर भव लय रहा था। रिमात्री के सामने रिमी ने हमरी चुपली कर दी थी? -- 'बीधकर मैं तामाबित हो रहा था। परहूबय बुझ बैर नित्री रबी से बात-बीत करना चाहता था। बात का रिपय कोई भी हो इनमे मुझे कोई आपनि नहीं थी।

मैं घोर की तरह नाछ के घर बैठेक गया। वह जमी बड़ मे पानी लीच रही थी। उसके बेहरे जबाह जयमाद था। उमरी पकरों के घोर बीने से थे।

"लीछ!" मैंने उसे चींहा दिया। समीप जाकर बोला 'इत पैड़ के तुम्हें बड़ा मोह हो गया है।

"हां मरवर। यह पैड़ तेरे मेदा की याद के रूप में है। लीन-जकारे मैं इसे बीधती हूँ। एक दिन यह जयज जय हो लीन-जकारे

मुझे इन्ने देखकर हिंसे का मुक्त संतोष मिलेगा ।

‘मुझे मरना बहुत प्यार आता है ।’

‘घरे पगले मैं यदि सौध सेना भूल जाऊँ तो उसे भी भूल जाऊँ । मेरे रक्त की एक-एक बूँद मैं बह बस गया है । जानते हो कि मैंने मेरे मन का जीवन किसी धीरे को बना दिया था पर मन ने उसे भी स्वीकार नहीं किया । यह तो धन्य ही हुआ कि मन जाने से मेरा माता बत्ती ही हूँ मरना धीरे तेरा मे’ ।” उसकी धार्मिक चरमायी ‘मरणा’ सेह के चलते ही मैंने बुद्धिवादी तोड़ भी माँह में मिश्रित भरना बन्द कर दिया । भाग मुझे कुलटा कहते हैं पर मैं कुलटा नहीं हूँ । मन से तेरा को ही बरा ना धीरे उल्ल भर उसी की ही दलदल गहरी पर मुझे निरन्धरी के तेरे धन्य माय कहाँ ? बह बना गया । मेरा ससार सुना करके बन्द गया ।” भाग मैं भी उमी साताब मैं ब्रह्म मरती ।”

‘मैं उसकी अछोर ध्येया से जीग गया । तब मेरी समस्त म नहीं थाया बा धि बह कैसा प्यार है ?

मैंने उनसे कहा किसी के पीछे अपने जीवन को नाश करना ग्याय नहीं साँचा । धर्महीन त्याग का क्या मतलब ? फिर वहाँ तुम्हारी दशा भी धन्य ही है ।”

‘त्याग धर्महीन नहीं होता । किसी की याद में चलना धन्याय नहीं । धन्याय तो वह काम है जो धारणा के बिना किया जाय । धारणा जिसे स्वीकार करती है नहीं अथ कर्म होता है । उसकी अथता को कौन स्वीकार करेगा ? नहीं दशा उसके बारे में मैंने सोच लिया है ।”

साँचा के सम्मुख मैं अपने को नादान-सा महसूस करता था । मुझे लगता था कि मैं इसे बातों में नहीं जीत सकता । यह अपङ्ग-नाशक जले ही हूँ पर प्यार की पीड़ा ने इसकी चेतना को पुनर्जित कर दिया है । इसके अन्तर के तम को धामोचित कर दिया है ।

बहु पैर के चारों ओर बनी पास की टीक करती जाती । उसकी दृष्टि पैर पर थी । मेरी ओर अणु भर के लिए देख कर उसने कहा “माय

तु रास्ता कैसे भूल गया ?”

“जुना नहीं हूँ लीला आन बूम कर पाया हूँ । तुमसे मिलने को इच्छा हो रही ।”

“क्यों ?”

“ऐसे ही ।”

“एक बात मानोगे मेरी ?” उसकी घाँटों में प्रश्न था ।”

“मानूँ या ।”

“यहाँ न घाया करो । मुझे मान्यता हुआ है कि तारे बापू मुझसे बोलने पर नाराज होते हैं । बापू को नाराज करना मजबूर देखों क नसब नहीं है ।”

मैंने उसको देखकर कहा “बापू हर काम में जोर जबरबस्ती करते हैं । उनकी इच्छा ही सबकी इच्छा हो यह कम सम्भव हो सकता है ।”

“मुझ भी हो उन्हें नाराज करना पड़ता नहीं है मरवा । मैं पराधीन हूँ । मेरे बिना तुम लोगों का कोई काम नहीं चलने वाला है ।” वह चौंक कर बोली “और हाँ मैं राह जा रही हूँ ।”

“क्यों ?”

“मेरी सहेली न बुलाया है । गहर में बरी एक शाम सहेली है उसने कम “जना ही मिना है कि गन पड़ने की एक बार आयाओ । कम है मेरी मुझे । “मैं वहाँ एक बार तो आऊँगी हो ।”

“दिर तुम्हारा यह पेट ?”

“यह ऐसे ही फरेवा-फरेवा ।”

“कौन देम-देम करेगा ?”

“माँबनी आगिन । वह कम में इस घर में आकर रहेगी । मैंने उसे यह दिया कि मेरे दो-तीन रुपये भेजें ही सय जार पर मेरा यह पेट नहीं भुलना चाहिए । यह मेरा जीवन है ।” वह एक पल गरी कीर बोली “कभी कभी दो-दो रोज़ खुश भरना पड़ता है । भुन नहीं वाला जाता है तो बुझा भी नहीं जपता है । बड़ी रिफ्ट मरवा बन जाती

है। तब सोचती हूँ—सोढ़े दिन के लिए नहीं बनी बाऊँ।" "बान्ते हो पिछले तीन दिन से कुछ भी नहीं खाया है।

"सोढ़े ! मुझे कहना क्यों न दिया ?"

"हाथ पँताने की पाबत नहीं है। फिर सहेली का क्या ?"

"मेरे बापक कोई काम-काज ?

"नहीं। तू बिचपु हो। बेचारी साबितरी को कुछ दे।" उसका स्वर कसड़ा से भर गया "बहु माय है सरनण। उसकी कुसी ही ठेरी कुपी है। उसे तू बितना कुछ देना प्रभु तुझे बतना ही कुछ देना। /

"लेकिन बापू ने उसे चार साह के लिए पीहर से न खाने का हुक्म दे दिया है।"

"बहु सज्जा नहीं किया। वह केवल यही रहना चाहती है। उसे पीहर में बड़े ब्रह्म सुनने पड़ते हैं। उसकी छोटी बहिन उसकी सजाक चढ़ाती रहती है। तू उसे यही पर बुला ले।"

"पर बापू भी ?"

"वह बीच में ही बोल पड़ी "अधिक नादिरखाही सदा कुछ कम देती है। कभी-कभी ठेरे बापू ठेरी बहू से अपना बड़ा अपमान करायेंगे।"

"वह बंसीर हो गयी। मैं पत्थर की तरह निश्चिन्त बड़ा रहा।

×

×

×

सावन के बीतते ही सावित्री बिना किसी सबर के घर आ गयी
हम सभी लोग उसे देखकर विस्मित हुए। पिताजी की ओरों में उसे
देखकर कई प्रश्न एक साथ जाग उठे।

“तू किसके साथ आयी ?” पिताजी ने आश्चर्य से पूछा। वह मौन
रही। सात-असुर के समय वह नहीं बीसती है—हमारे राजस्थान के
माय-सामीण परिवारों में।

“मेरी बात का जवाब नहीं दिया।” उन्होंने स्वर को कठोर
किया।

मां ने बीच में प्रवेश उत्पन्न किया “वह आपकी कैसे जवाब
देती ?”

“वह मुझसे नहीं बीसती मुझसे नहीं बीसती। फिर मैं आने का
कारण कैसे जानूँगा ?” पिताजी ने सीधे कह दिया। उनके चेहरे पर
ऐसा भाव रहा था।

मां तुरन्त हमारे परिवार की एक छोटी लड़की को बुला लायी।
उसे देखकर पिताजी ने कहा “मादी बाहर अपनी बाजी से कुछ वह
किसके साथ आयी है ?”

मादी सावित्री के पास खड़ी गयी। सावित्री बड़ा घुँघट निरामे
हुए थी। उसने अपना कुछ बीजों की ओर कर दिया था। उसने मादी
से कहा “मैं आपके साथ आयी हूँ।

मादी ने पिताजी से कहा “बाजी घरेली आयी है।”

“घरेली।” पिताजी बीच में “यही घर की बहु-बेगियों के क

॥ लपका होते हैं। अगर रास्ते में कोई इज्जत से खेल जाता तो ?
 ५ छिः।" पिताजी ने अपने मुँह का बूझ निगल कर कहा "क्या तेरे
 पा को तुझे इस तरह भजते हुए धर्म नहीं धायी। ऐसी कौन-सी सुख
 पायी है जिससे-बेटी को इस तरह भेजा।"

माही ने बताया "काकी कहती हैं मुझे बापू ने नहीं भेजा मैं उन्हें
 जना पूछ यहाँ जसी धायी हूँ। वह तो मुझे बीबासी के बाद ही भेजने
 पा ने पर मेरा मन यहाँ नहीं लगा।

बिना पूछे। पिताजी सफ़ट में जा गये "अपने बापू को बिना
 छे हुए। राम राम ! बेबी नरकण को माँ ठेरी बहू की करतूत। बिना
 छे हुए जमी धायी है। जैसे बहू इसे साँप बिष्णु काटते ने।"

माही ने फिर बताया "काकी कहती हैं यहाँ मुझे साँप-बिष्णु
 ही काटते व पर यहाँ मेरा मन नहीं लगता बा।"

यहाँ नहीं लगता बा। जैसे पर बी बहू-बेटी इस तरह जावने लय
 हायगी फिर रह यमी पगड़ी की इज्जत। धात्र तू यहाँ भाग कर धायी
 कस तू कही और भाग जायबी। हे प्रभु, वह तू मुझेकिस जन्म का
 डि दे रहा है।" वह ईश्वर से बिगती करने लगे।

माँ ने कहा "अब आप कुछ रहिए। घर की इज्जत का सवाल है
 और बीबारो के भी कान होते हैं समझे। अब आप लपचीजी के यहाँ
 रहना बीबिए कि वह हमारे घर पहुँच यमी है। बात का बतंगड़ बनाने
 व कोई फायदा नहीं है।

पिताजी का स्वर ठेक हो गया। वह झकड़ कर बोले, "नहीं। वह
 जिस पाँव धायी है इसे उसी पाँव वापस आना पड़ेगा।"

माबित्री ने मिर हिसाकर बड़बड़ाया।

माही ने बताया "काकी यहाँ नहीं जायबी।"

"उस यहाँ जाना पड़ेगा।"

माबित्री भीतर की धोर जाती हुई माही से बोली "माही कहते
 मैं धायी जान दे हूँगी पर पीहर नहीं आऊँगी। 'धीर वह भीतर जमी

गयी। पिताजी का पीछा बीच सड़ा। उसकी छाँछों में रक्तम होरे जमक उठे। वे बड़क कर बोले “बहू! जानती है तू किसके सामने खोप रही है। जो घाइसी धपसी बात की रखा के लिए श्रापों की आजी सगता धाया है उसे यह चुनौती।

माँ ने उन्हें चुप करके कहा “घाव पीरज रक्तम यह प्रिया-रुठ है। यह मर्या फिर नहीं उगरेगा।

उसके चुप होते ही हम मोर्षों ने माहिरी का रोना सुना। रोने के साथ उसका बड़बड़ाना “हमने घण्टा है कि मुझे धार गन्ना पोंकर मार दीजिए। न खेया होम धीर न बजगी बाँसुरी। रोज रोज क भ्रमट से तो बाप बटे।”

पिताजी ने ध्यान लगाना पर जोर का कपड़ मारा और वह चिट्ठे कर बोले “मरवाण की माँ! चुप कर दे इस बेघम को। साज-गम को जैसे पी गई है। कभी की तरह जबान बसाती जा रही है धर मामने। हाय! कैसा प्रमाना धा गया है। हमारे माँ-बाप मरवाण की माँ की बोर्षी मुनने के लिए उन्न नर लजपते रहे।”

माँ ने फिर पिताजी को हाथ ओढ़कर कहा “मैं घावको हाथ मोड़ती हूँ घाव चुप रहिए। क्यों कर की इज्जत को धपने हापों ही कीचड़ में भर रहे हैं। जो हो गया उस जहर का बूँट समझकर पी जाइए।”

“तू मुझे कहती है। उस बदबू बहने वाली बिड़िया को क्यों नहीं कहती।”

उस समय पिताजी के चेहरे के आर ममममम प्रतिद्वन्द्वी के सहग ने।

“बहू मूर्ख है पर घाव तो मममदार है। घाव उसने बराबर क्यों हो रहे हैं।” माँ ने फिर कहा।

मैं कहता हूँ इसे बहू के कि वह बारम धपने मेंके जमी जाए।” उन्होंने धरने पाँवों को इकट्ठा किया। उस पर दोनों हापों को रखा जैसे आचारणउसा बानक बट जाने पर रगते हैं।

यह एक मोह-सम्वारी है जो अपने राह चलते पति के लिए आकाश में चढ़ती बदली की तरह छाया करती रहती है और एक सावित्री है जो सुख की सोच भी नहीं लेती है। उसने एक बहरीम नावावरण की रचना कर रखी है।

मैं बिचारों में लो गया। अमरत्यादित मुझे बचका-सा लगा। एक मिहिरन-सी बीज नई-मेरे मन में। कहीं सावित्री मेरा विरोध कर बैठती तो ? तब मेरे सम्मुख उसका बलिष्ठ शरीर नाच उठा। मैं पचरा गया। कदाचित मेरे मन के अवचेतन में उसके बलिष्ठ शरीर का धार्तक बस गया हो।

फिर मुझे अपने कुरब पर ग्लानि हुई। मुझे ऐसा नहीं करना चाहिए। आगिर वह मर्दा रहना चाहती है तो पिताजी उसे क्यों नहीं रहने देते ? वह भी इतना ठठ क्यों करते हैं ? बकर कहीं उसे उसकी सहेलियाँ बिछाती होंगी ? उनके दुर्भाव पर मैंने बहाने की बबल कहकहे लगाती होंगी। साविर हर आदमी का अपना ग्रहम् और स्वाभिमान होता है। उस ग्रहम् को जोड़ पहुँचाने का सीधा तात्पर्य यह होता-है कि उसे मर्यादक पीड़ा पहुँचाना उस बिड़ोह करने के लिए तैयार करना।

मैं इसी उबेड़बुन में भर पहुँच गया।

उदास-उदास ता घर। उषाम-उदास सी हवा।

पिताजी घर में नहीं थे।

माँ और सावित्री मरा की तरह नाम-काज में व्यस्त थीं। माँ का बूँह उतरा हुआ था और सावित्री का बुझा-बुझा और जूँबट में कुपा हुआ था। मैं उसे देख नहीं पाया पर मुझे यह तुरन्त मासूम पड़ गया कि आज उसका बाँव बहारा के हिमक पंजों में दबोचा हुआ है।

सावित्री बपड़ियों को सजा-सजा कर रख रही थी। माँ दूध को चूँट्टे पर बड़ा कर बड़े नुरपे से हिसा रही थी।

मुझे देखते ही उसने कहा "गरवण चल रोटी खा मे।

मुझे पूछ लग लगी थी किन्तु मैंन दृष्टा के विरुद्ध आवाज करके

पुस्ते में कहा "मुझे भूख नहीं है।"

मैं मैड़ी पर घाकर बैठ गया।

घम्बेरा परिचय से उतर कर केतों-केतों में भूमती वृक्षों उनकी छायाओं उनकी पत्तियों बरती से निरुलसी बेसे धीरे बामों को घपने में लीन करता हुआ बड़ रहा था।

धीरे-धीरे घम्बेरा घरों की धुँबियों को निगल गया धीरे निगल गया—
बार की एक-एक बीमार को एक-एक कोने को।

पुरे हिनाने की घाघाओं 'सी लूँ' धा रही थी।

घाघाज कछो।

माँ ने कहा "बहू! मन्दिर में दीया-बत्ती कर दे।"

मन्दिर में दीया जला।

सदा की तरह सावित्री ने माँ के चरण-स्पर्श दिये। मैं भी ऊपर से कहा "माँ! पगे माबूँ।"

माँ ने आजीर्णद दिया "बीते रहो बटे, तुम्हें चाँद-मूरज की उमर लगे।"

धीरे फिर उसने स्नेह-सिक्त-स्वर में कहा "बिछनी भूख है, उतना ही नासे।"

मुझे जरा भी भूख नहीं है।"

"एक-दो कुल्ले हो लाल।"

मैंने कोई जवाब नहीं दिया।

"बहू!" माँ ने पुकारा।"

बमारी पायल बजने लगी।

"बहू! तू जाकर उसे ऊपर लाता दे घा। कभी-कभी न जाने किन पार्श्वों का दण्ड मुझे भोगता पड़ता है। यह सब माँ ने घरने धाप से कहा और वह घरने काम में तन्मय हो गयी।

बहू की पायल की बजती-बजती झंकार ने मुझे पटा लग रहा था कि वह घागा परान रही है।

थोड़ी देर में वह बाली निकर ऊपर आयी । वह पहला धक्का खा । क्योंकि पिताजी सदा कहते थे कि खाना माँ के हाथ से खाना चाहिए । वहाँ ही हो । उनके इस कथन में माँ की धारणा की धारणा बिल्कुल प्रकट होता था । माँ माँ अपने बेटे को भोजन में कभी विच नहीं दे सकती । उसके प्रतिरिक्त प्रायः खाना मैं धीरे पिताजी साथ ही खाते थे ।

सावित्री मेरे सम्मुख खड़ी थी । उसने झूट हटाना सोच नीचे रखा । फिर उसने वाली को मेरे सामने रखते हुए कहा 'रोटी बीम बीजिये ।

'मुझे कुछ नहीं है । मैंने उसे छिड़कते हुए कहा ।

उसने मुझे हाथ जोड़ कर प्रार्थना की 'आपको मेरी सौगन्ध है । देखिये 'मुझ समझती को धीरे अधिक समझती गत बनाइये ।' उसने मेरे पाँव पकड़ लिये ।

'देख मुझे तंग न कर, आज मेरा मन बिलकुल अच्छा नहीं है ।' मैंने बड़ी स्वाई से कहा । मैंने अपनी दृष्टि गहरे होते हुए धन्नेर की ओर कर ली ।

उसके स्वर में कण्ठा ठीर आयी 'आ बीजिये ।'

'नहीं ।'

उसने मेरी छोटी भुमाकर मेरा मुँह अपनी ओर किया । मैं उसने मुझसे का विचार नहीं देख पाया । उसके चेहरे पर विलुप्त मंदार पतल था ।

मैंने अपनी सौगन्ध खिलवाई है आपकी क्या इन छोटी सी बातें लिए भी आप मेरी सौगन्ध नहीं रखेंगे ।'

'पहले मेरी बात का जवाब है तु सचची स्त्रियों की तरह बिना कुछ कहे नहीं या यही ? कुछ तो सोचना समझना था । उसके नहीं को देखना था । किन्तु तू ? जानती है बापू की माँओं से बरा-सरा के लिए भिर गयी ।'

‘जैसे मेरे पीहरवाले समझ जायेंगे कि मैं यहाँ ही आयी हूँ ।

“यह तो बापू ने कहलवा भी दिया है । पर तूने यह हिम्मत कैसे की ?”

“मुझे घातकी घोकूँ लीज लायी । मैं घापके बिना नहीं रह सकती । मुझे घापके बिना सब मूना-मूना लगता है । इसे घाप कुछ भी समझ लीजिये । फिर मुझे वहाँ का वातावरण अच्छा नहीं लगता ।”

“किन्तु बापू ने जीता से मरी कुत्ती तय कर ली है । कुत्ती में जीतना बुरी है क्योंकि यह बापू की गान का सवाल है ।”

“घाप बीसा हुआ होये उसे मैं सिर-धाँतों पर रख लूँगी । मेरी केवल एक ही धाँत है कि घाप मुझे पीहर मत भेजें । घाप नहीं जानत कि पीहर में मेरी सहस्रियाँ मेरी बितनी मज्जाक बनाती हैं । लोग धाँत बापों एवं इज्जतों से बिराते हैं । मैं वहाँ किसी भी हालत में नहीं रह सकती ।” और उठने अपने हाथ से मुझ सहला घोर दिया । उसके घावह को घब टाँसने का चेष्टा साहम नहीं हुआ । मैंने गाना सा लिया । वह बहुत प्रसन्न हुई । बिहलजा के गारे धाँत बहा बँटी ।

‘पिताजी बाहर से आ पड़े थे । उन्होंने अपने साफ को माँ के हाथ में देते हुए कहा घरवाला कहाँ है ।

“ऊपर ।”

“क्या कर रहा है ?”

“रोटी खा रहा है ।

“ऊपर ? क्यों ? क्या बात है ?”

माँ ने सहज स्वर में सत्तर दिया “खाना नहा खा रहा था । मैंने बाँट को हाथ दिया कि घब तू उसका खाना ऊपर दे या ।”

“यह तू ने अच्छा नहीं किया । जीता पहलवानी करने घेर की तरह टैगर रहा है और तू ।” पिताजी व्यापाधिकुल हुआ । लपे स्वर में बोले “सरबरा की माँ मैं जब कुछ गलत करता हूँ पर लजियों को तरह रेकारा नहीं मूना लगता ।” प्यार से भले हो बहने पर नजर बदल कर

नहीं। मगर जबकी कि बन्धूक बाहर निकली।" वह दूटे हुए इन्सान की तरह हतास हो बैठ गये "भाबे बहू के जबाबों ने मुझे यह धहसास करा दिया कि मैं बूढ़ा हो गया हूँ। मेरे प्रताप का सूर्य मग्ना पड़ गया है। भाबे एक बुराबन की भी बहू-बैटी मेरे सामने छि पगरबी पहन कर नहीं बुझती है। मेरी बात का जबाब नहीं दिया है। ऊठ! मेरे पुष्पों की महिमा समाप्त हो गयी है।

'बहू मादाम है। मैं ने ने उन्हें ठंडा जल पिताते हुए कहा "कुछ दिनों में अपने आप सब समझ जा जायेगी।"

"इस उम्र में समझ नहीं जायेगी फिर कभी नहीं जायेगी। कभी मिट्टी को ही कोई धक्का दी जा सकती है पत्थर पर नहीं।"

तभी मैं नीचे उतर आया।

मेरा छिर अचानक की तरह झुका हुआ था। कुपचाप धाकर पिता की के पास बैठ गया।

पिताजी ने मुझ पर व्यंग किया "बहू के हाथ से बाल जीम आने? क्या मैं तुम्हें बहुर जितना देती?" पिताजी ने मालों जल कर कहा। मुझे उनका व्यवहार जरा भी अच्छा नहीं लगा।

मैंने कोई उत्तर नहीं दिया। पिताजी मोन-गम्भीर होकर बोड़ी बैर बैठे रहे घन्ट में वह बोले "क्यों बेटा मैं अपनी हार ही मान लूँ। बीठा से कुस्ती लड़कर तू नहीं जीत सकता। बाहर में लौन बुरी तरह मेरी पकड़ी सजावटें इससे अच्छा है कि मैं पहले ही हरमुख के पाँवों में अपनी पकड़ी डाल दूँ।"

"मैं बीठा से गिरावत नहीं हूँ मैंने अपनी बाबुषी को बधाते हुए कहा "मैं उसे कापस के पुतले की तरह मरोड़-मसोस सकता हूँ।"

"कुम्हरी बात है नहीं ताकत है लड़ी जाती है और तू घाटों पड़ी बीसठ पहर अपनी बहू के नापरे का डेर (बूँ) बना रहता है। वे तो बिपरीत काम किस तरह होनी?" वे मुझे उपदेश देते रहे। झिझकते रहे समझते रहे।

घरत में मुझे जोश था यथा मैं धारण में होता "आगे से मैं अपना संगोष्ठ बिगड़स सज्जा रचूँगा। यदि उसको फूटा नहीं तो आपकी सोचना।"

मैं धीरे पिताको एकदम चौक उठे।

मैंने आवाज की धीरे निहार कर कहा "मैं जीता की पीटी की तरह समझ सकता हूँ। बीबासी क्यों नल ही बुझती लहराये न।" य बहुत उत्तेजित हो गया था। धारण में कौपने लगा।

"बात का मजा कुछ पर ही धारणा। बस तू अपने हाथ-पाँव में भावने में लमा रहे। कुछ भी जो पानी की जगह थी।"

उसी रात मैंने अपनी प्रतिज्ञा को कई बार दोहराया। दोहराने का एक स्पष्ट था कि मैं अपनी धारणा का मजबूत कर रहा था। मुझे बार-बार भय लग रहा था कि मैं अपनी प्रतिज्ञा से बिगड़ न जाऊँ।

दूसरे दिन मैंने अपनी यह प्रतिज्ञा सावित्री को भी सुना दी।

सावित्री को एक बार सरी बात पर विस्वास नहीं आया। मुह बिचका कर, पुनर्निर्माण नचाकर बोली "भीष्म पितामह का श्रुत नहीं है मेरे भरदार। (प्रोत्साह)। इस जमाने में ऐसा प्रतिज्ञाएँ निमाना जसते सीपों (घंकारों) पर चलना है।"

"घबर नू साथ दे तो यह सब सम्भव है। मुझे तेरी धीरे से ही बर लयता है। नू बादल देखाकर बावली हो जाती है धीरे बिजलियाँ देगकर तेरे गून में मचलको ठठ जाती है। परीहा को पोक-पीऊ मुन कर तेरा हृदय निमा के लिए विकल हो जाता है धीरे 'भीष्मापा' मुन कर तेरा मन धाने भरगार के प्यार करने के लिए उगावला होने लगता है।"

"आप मुझ सोच देखें हैं। मैं उसे स्वीकार भी करती हूँ। दिन भर की मेहनत के बाद आगिर मैं क्या करूँ? इतना बड़ा धूपट इतना लम्बी भून (बीन)। न किसी से हँसना सोचना धीरे न किसी से हँसी-जवाब। एकदम नूना जीकन धीरे बटोर भट्ठन।"

"यह ठीक है। ऐसी बात नहीं कि मैं तेरी बीर को नहीं समझता हूँ पर पर की जान इन सब से बढ़ी होती है। प्रतिज्ञा सम्भव है बनी

बहु शोनों का हाव रहना ही चाहिये । तुम तो थोड़ी पड़ी-भिल्ली हो । रामायण के राजा बसरव की रानी कैंकषी अपने बलि के संग कुछ भूमि में बची थी । जब राजा के रज के पहिये की कील टूट गयी तब रानी ने अपने हाव की रेंगली डेकर राजा की छान को बचाया था । क्या तुम ऐसा हाव नहीं देती ?

“एक रात पर हूँगी ।”

“क्या ?”

“आपको सदा बड़ी हो बड़ी मुझसे होना-बोझना पड़ेगा ?”

वर मौका मिलने पर ।

हम शोनों ने यह निश्चय कर लिया ।

दिन बुराने लगे ।

×

×

×

शरीर बीच छा गयी ।

मरीच बीच की हमारे यहाँ गाँव में कुपित्या होती थी । प्रत्येक घन्टा के पहलवान बल बना कर दूसरे घन्टा के जाते थे । बहुत घपनी घपनी जोड़ से कुपित्या लड़ते थे । जिस घन्टा के पहलवान जिसने अधिक जीतते थे उस घन्टा के विजय घोषित की जाती थी ।

गाँव में दो बड़े घन्टा के और दो-चार छोटे ।

मैं फरार जोर-घोर से कर रहा था । इन दिनों मेरी बत्ती मेरे ब्रह्मचर्य में कुछ सहयोग देती थी वह कभी भी । उत्तेजित नहीं होती थी

घोर न कभी मेरा बासनात्मक स्पर्श करती थी। हाँ, कभी-कभी मैं प्रवरय बासना सा हो जाता था तो वह मुझे उपदेश देकर ठंडा कर देती थी। मुझे पिताजी की सौगन्ध की बार दिला देती थी। घोर मेरा सारा सम्भार बँटार जाता था।

एक दिन मैं बेत में था। माँ के पाँव में मोच या घई थी इसलिए सावित्री 'माठा' लेकर आई।

घोर एकान्त था। बीता अपनी वह के साथ जुहल जागियाँ कर रहा था। मुझे क्या सूझी कि मैंने सावित्री का हाथ पकड़ लिया। वह अपना हाथ छुड़ाने की चेष्टा करने लगी पर मैंने उसे दोनों हाथों से बकड़ लिया। दोनों हाथों से बकड़ने का एक कारण और भी था कि मुझे अब भी अपनी दृष्टि पर इतना विश्वास नहीं था कि मैं एक हाथ से सावित्री को अपने काबू में रख पाऊँगा।

उसने कातर-स्वर में कहा "मुझे छोड़ दीजिए।

'देखो मौखन कितना मज्जा है।' मेरी पाँवों में बासना का मर्मकर पदार था।

"घापको अपनी प्रतिष्ठा का ध्यान होना चाहिए।" उसने डरते हुए कहा। उसकी दृष्टि में मन को बकड़ा पहुँचाने वाली मासुमियत थी। मैं एक पल के लिए विमूढ़ हो गया।

मैंने उसकी बात को अनगुनी करके कहा, 'वह बोटा है न अपनी वह के साथ देर उबर'।

'मुझे घाप छोड़ दीजिए।' उसका स्वर कठोर हो गया। वह बोड़ी थोड़ी पुस्त में काँपने लगी घापको जरा भी साज-सज्जा नहीं। अपने बाप की कसम खाई है, समझे।

फिर भी मैंने उसका हाथ नहीं छोड़ा। उस अपनी बांहों में पकड़ने लगा। बोला 'वह भी तो पहलवानी कर रहा है।'

अब उसने अनुमति छोड़ दिया। उसने कोप में बिखरकर मुझे इतने घोर से बकड़ा दिया कि मैं पश्चात्त से फिर पड़ा। जरा भूँड़ भूल-भुगति

हो गया। मुझे एकदम गुस्सा हो गया। मेरी हड्डियाँ हुईं कि मैं उसे दौड़ लगा कर नीचे गिरा दूँ और यह प्रस्तावित कर दूँ कि मैं तुम्हें बहुत ताकतवर हूँ। तब तक मैं कुस्ती के बहुत दौड़ सीख चुका था। बगली, मुमताजी टांग बोली-यात्रा थाकि। मैं धूल भण्ड कर बैठा। उसने घेरनी की तरह घूम कर कहा “बहरवार मुझे छुपा तो ठीक नहीं रहेगा। मैं एक पल में सारी हड्डियाँ जुमा दूँगी।” और तब मैंने उसे बताया मैं यह समझ गया कि उसका कम बहुत लम्बा हो गया और उसका सारा घीर किसी मायवी रानी की तरह प्रचंड और प्रचंड हो गया है।

मैं सहमा हुआ सा बसा रहा। मैंने अपनी दृष्टि दूसरी ओर घुमा ली। मैं जेलिंग की बाहर बसा था। वह मेरे पीछे ठेक कम उठती हुई आई और मेरे पाँव पकड़कर बोली “घाप बुरा मत मानिए। मैंने जो भी किया है वह आपकी मलाई के लिए किया है। बाकिर घापने अपने बापू की कसम खाई है। अगर उन्हें कुछ ही मया तो सारा दोष मुझ प्रबन्धन का ही कहनायगा। नीप मेरे पीछे बालों को कोने से घीर मेरी बहानी को न मासुम फिटनी बंदी बातों से सजाएँ। आप मेरी बात के मर्म को समझिए। मुझे दोष मत दीजिए।” कहकर वह रोने लगी। उसकी आँखों से धीसुधों की बार प्रसन्न करके बहने लगी। बेहतर करण से ब्रिंग गया।

मेरी बासना घर चुकी थी। जो बसबना योड़ी बैर पड़ने चाया था वह बना गया था। पर मेरा प्रहम अपने घरवालों को स्वीकार करना नहीं चाहता था। मैं द्वार कर भी अजेय बनना चाहता था। तो उसे भिड़कते हुए बोला “तु मेरी आँखों से दूर हो जा।”

वह बैचारी अशक्त सी प्रभु बहाती लगी गई।

फिटनी हृद-प्रतिष्ठ हो गई है मेरी छाविनी। मैं मात्र उसके समक्ष गत-भारतक हूँ।

हमारा बस अपने बिरोपी प्रलाड़े मैं पहुँच गया। मेरे कपड़े पर लाल लंगोटा और लाल कमी पड़ी थी। हमारे सामने रख-बाख्श प्रदान

छोटे पहलवान थे । मैंने बाते ही तमाम सत्ताड़े में हृष्टि दीवाई । सामने जीता बड़ा था । हम दोनों की धाँसें टकराईं । धाँसें टकराते ही हमारे भीतर का पहलवान जाग उठा । मैंने सीना फुलाकर धँसवाई भी । उसने भी ससका जवाब दिया ।

छिटर कुरितियाँ शुरू हो गईं । मैं सत्ताड़े की बनी कच्ची मिट्टी से लिपी पोती पहरी पर बैठता था । घरे ठीक सामने जीता बैठता था । वह अपनी मूछों पर बार-बार ताब दे रहा था । मैंने भी अपनी मूछों पर ताब देना शुरू किया । हालाँकि मेरी दोनों मूछें बहुत कम गहरी घौर भारी थीं । किन्तु भला हो थोघने नाई का जो उसने उस्तरे में बार-बार मरी बाड़ी मूछें काट-काट कर उगईं कुछ गहरा बना ही दिया । ठोड़ी पर बाड़ी घोर हल्की मूछें घाने समय ही गईं ।

कुरितियाँ होती रहीं । कभी मैं पहलवानों घौर कभी मैं जीता को देगता था । हमारे सत्ताड़े के गुररु ने अन्तिम कुरती मरी । बिजयोप्तास में हम तानियाँ पीट-पीटकर पायलों की तरह बिम्बाने सये ।

तभी जीता ने बड़ी नाटकीयता से मेरा हाथ पकड़ लिया और मुझे उसने लमकाया ।

बृजा महाराज ने बीच में घाकर कहा, “घब अपने दल की हार को धार (डेप) में मत बदलो ।”

फिरन महाराज लपककर आए, “क्या बात है जीता ?

जीता ने अपनी जाँघ पर घापी लगाकर, बन्दर की तरह उछलकर मुझे लमकाया “मैं सरबल से कुरती लड़ना चाहता हूँ । मैं उसे बहारना (लमकाया) हूँ ।”

बृजा महाराज बड़े धीरे प्रहृति के व्यक्ति थे । उन्होंने उसे नममात्रे हुए कहा “तुम दोनों की कुरती बीचाली के बाद होगी तब है छिटर क्यों अभी बसेड़ा पड़ा कर रहे हो । जीता पीरज रहा ।”

जीता इस तरह उछल रहा था जिस तरह सागर को पारने के समय बजरपबली नाचे थे । वह बहाड़ कर बोला “एक बहुत घनी घौर

इसी बख्त होगी ।”

बूढ़ा महाराज ने भेरी घोर देखा । मैं अपने अन्तः की भावना को बचाते हुए कहा ‘एक क्यों हो जाइत हो जायें ।’

हालांकि मुझे अपने पर पूर्ण-रूप से विश्वास नहीं था, फिर भी आत्म-सम्मान और स्वाभिमान ने मुझे इस तरह जवाब देने के लिए विवश कर दिया ।

देखते-देखते अन्धाका लाली हो गया । मैं और बीता लगेटे और कष्टिए पहुँचने लगे । दोनों पहुँचकर तैयार हुए । मैंने जपकर घाट-बस बेटों और बस-बीस बस निकाले । एक बार मैंने समस्त उपस्थिति की ओर देखा । बुद्धी के चरख-स्पर्श किए । अनुमान की की आराधना की और बस बहरण के अन्धोप के साथ अन्धाई में बूढ़ा । उधर बीता भी उतरा । वह मुझसे देखा दिस रहा था । उसकी आकृति बड़ी अचानक सग रही थी ।

दोनों ने अपना-अपना धूल ली ।

निह पड़े ।

हमारे अन्तः में मिलते पड़ते हाथ-पाँव बचपन-बचपन की अन्धकारों कर रहे थे ।

मोम—‘बाह-बाह’ क्या कहने हैं ‘आवाज बीता’ ‘कमास है सरबल’ कह रहे थे ।

और हम दोनों ने बूढ़ा भेड़ियों की तरह लड़ रहे थे । कभी वह नीचे और कभी मैं नीचे । ओर की धावती टकराहटों से हमारे मुँहों से लून अलकम लबा । आवाज बगैरे तक कुस्ती होती रही । अन्त में ‘बराबरी’ पर अंतर्भा हो गया ।

बही अन्धकार ।

मैं ही आलिया ।

मोमों ने बीता को अलकम । क्योंकि वह मुझसे अलकम में अनुमान रिपताई पड़ रहा था । वह मुझे लेकर हजारों तरह की अलकमों बार

रुका था।

कुरती बराबर रही पर पसड़ा मेरा भारी रहा। सभी सोमों ने मुझे ही साबामी की। एक तरह की यह जीता की हार ही थी।

मेरी कुरती की बाहर पिता जी को पहुँच गई।

पिता जी भागे भागे आए। कुरती खतम हो चुकी थी। सोमों ने उन्हें बूब बजाई की घोर बिरोधकर मेरे सड़ने के डर की समझति बूब मरोसा की।

पिता जी ने मुझे मोद में उठा लिया।

हम लोग घर आए। हमारे साथ बृजा महाराज भी थे। बृजा महाराज ने बैठते ही कहा 'मरकण जीता के बाँवों से मछली की तरह 'सर-सर' निकल रहा था।

पिताजी ने पर्व से मेरी घोर बेजा।

दूध-पानी सभी पहलवानों को पिता जी ने अपनी घोर से पिसाया। काफ़ी रात तक हमारी यह मोछी बमतरी रही। सभी का यह विश्वास था कि बीबासी के बाद मैं जीता को बाँव मिनट में बिल्ल मारूँगा। मैं बरमस्त था—उस समय।

बृजा महाराज ने उठते हुए कहा 'किन्तु बीबरी यह सब सच्चे संघोट पर निर्भर करता है। बिना ब्रह्मचर्य के कुरती नहीं लड़ी जाओ। जीता का क्या घरीर है? देखने वाला बकरा जाय पर है मोषा। संघोट का लक्ष्य बिलकुल नहीं है। शर उपर मुँह मारता छिरता है। देखो घाव कितनी बड़ी बैदग्धती हुई।"

पिताजी अपनी बूछों पर ताब देकर बोले 'मेरे बेटे ने मेरो सींगम्य खा रसो है महाराज।"

इस बटमा के बाद पिताजी मुझसे बहुत प्रेमम रहने लगे। बूह ने प्रति मे घमी जी पूर्ववत् उदासीन थे।

×

×

×

साँझ बनी गयी थी।

कभी-कभार उसका प्रेम में तपा हुआ आनन्द मुझ मेरी दृष्टि के सम्मुख नाच जाता था। तब मैं उसके घर की ओर चल पड़ता था। उसके घर में अब दूसरे लोग रहते थे पर वे उस पैड़ के प्रति किञ्चित् भी आपरवाह नहीं थे। पैड़ की छात्तारों विराट के हजारों हावों की तरह खँस रही थी।

मुझे आश्चर्यचकित बना देकर नयी खातिर के पुछा क्या देव रहे हो माई ?

कुछ नहीं।”

“समझी इस पैड़ को देख रहे हो। यह साँझ की आरम्भ है। इसकी छार-सँभाल करना हमारा धर्म है। जाते-जाते कहा था इसके सूखने के साथ-साथ मेरे छतरे का साथ रह नूल जायेगा। यह पैड़ अब अपने प्राणों से भी व्याप है।”

मैं वहाँ से पिचता पिचता छा जाता था।

प्रम की विविध कहानियाँ सुनी थीं। विविध है प्यार करनेवाले। उन विविध प्यार के दीवानों में नाँझ भी एक थी। छोटी जाति की (जिसे हमारे बीच में चुन कहते हैं) उस युवती की प्रेम-तपस्वा वास्तव में अनुकरणीय थी। लोकनायिका ‘सुमल’ की तरह वह प्रीतम की यात्र में भुर-भुर कर पित्रर हो रही थी।

इस संसार में कोई किसी के अस्तव के धर्म को नहीं जानता। तब तबही ठौर पर साथ की खोजते हैं।

नाँझ की जहाँ कभी-कभी मैं सावित्री से कहता था। धर्म से उबकी

प्रस्ता करता था "आज तो है तु, वह बेबी है। उसने मेरा के लिए अपना सब कुछ भ्रष्टाचार कर दिया। ऐसा त्याग इस कलकाल में भी कहाँ?"

पर सावित्री को वही प्रस्ता बहुत अच्छी लगती थी जिसमें हल्के बंधीर रूप में उसका अपना प्रथम आता रहे। रिखी की वह एकांकी प्रस्ता लगातार नहीं सुन सकती थी। जब मैं साक्षात् की शारीक करता ही जाता तब वह झुंझना जाती थी और कहती थी "उसका त्याग राम के बाद का है। मैं आपको एक ऐसी लड़की बता सकती हूँ जिसने राम की स्मृति भी नहीं देखी। पुरा जीवन बंधन की घाम में मुसला कर रख दिया। किन्तु अपने प्रिय की याद को नहीं भूली।

"और तू?" एक ऐसा प्रश्न मेरी धारों में कमकता कि वह जिहर जाती। मेरे मूँह पर हाथ रखकर वह धपलक देखती। कुल से उसका मुख स्याह हो जाता और गहरी व्यथा में हुबे स्वर में कहती "ऐसी बात मुख से मत निकालिये। मैं जानी पार दूब जाऊँगी। इतने बड़े संसार में मुझे भीठे बोल बोलने वाला भी नहीं रहा।"

तब उसकी धारें सजल हो जाती।

इस बीच कई बार मुझे जीता दिला था। जब उसके मन में मेरी शक्ति को लेकर ठंड कुल गयी। मैंने वास्तव में अपनी छाछ को पूरी छछ से बझना शुरू कर दिया। सावित्री भी जब मुझे कुछ गर्व से देखने लग गयी थी।

उस दिन सोपहर से ही बारिश आसमान पर छा रहा था। कभी-कभी रूप में कोई बैच-नंद बूँद बरसा जाता था। हरे-भरे क्षेत्रों के आसपास के बेटे मुण्ड-मे-मुण्ड रूप में तानियाँ बजा-बजा कर गा रहे थे।

सावित्री में मेँह बरस

भूत-भूतली परनीवें।

ईसे लोक विस्वास है।

तुम में पागी बरसेगा और भूत भूतनी का विवाह होगा। जब

बरस बस बीमारे में क्वाँटी बढ़ी खानी रे
मना नू तो बिल खानी रे
इस छि में मल का बालम
परदेसा खानी रे-

इसका मायुर्य से भीगा स्वर सुँवता रहा भीर में बसा धाया ।
उसने अपना गाना-बजाना बन्द करके कहा "पनसा कड़ी का घर में
कोरु कोरवार भीर पिया नहीं है विनवार ।"

बह बली गयी । बीता के डेठ में चुस गयी । बीता उससे बढ़ी डेर
तक पीठ सुनता रहा । उसे डेठ के बाहर तक पहुँचाने आया भीर मुझे
देखकर बोला "अरे धो चाहिए हुनुमान बाबा की बय तो बोम ।"

उसने डोलकी पर बाप देकर कहा "हुनुमान जी की बय । यह
धम्म मेरे बड़ाचर्य उस पर बा ।

बीता ने फिर उसे कहा, मेरे घर 'बजाबा' के पीठ घुक हो गये
हैं । नुन चाहिरा तुम्हे ही सार पीठ गाने हैं ।

"अर मेरे राजा ! तू बिठा न कर, सारे पीठ में ही बाळेंपी ।
पीठ बल बल तुल तुल काम' दाई' अजाबण' सभी पीठ में ही
बाळेंपी । ऐसा बाळेंपी कि लोग सामा-पीना नून बायेंगे । धम्म
बलती है ।

बह बली गयी । मैं जवाब ही गया ।

सौम पड़ी ।

मैं घर पहुँचा । घाबकल म प्रायः डेठ में ही छोटा बा । बह मन
के डिकने की कम सुँबाइरा रहती थी । घर घाब चाहिरा के जाने के
बाद न मानूम क्यों मन भारी भारी हो उठा । बदन में दूटन सी व्याप्त
हो गयी । घर धाया । घाबर बाट घर छो गया ।

मैं ने पूछा "क्या बात है सरबण ?"

“सिर में दर्द है।”

पिताजी चिंतित हो गये। बेघा जी को धाम कर बुला लाये। बेघा जी ने नाड़ी का व्यवसोकन किया। अपने ससाट पर बल बास कर कहा “तबीयत मारी है केबल। बेत की सील मरी मिट्टी का यह घर है। आज इसे छान्ने के नीचे सुला दिया जाय। धनिया मिसरी की ठकासी पिता बी पाय।”

मुझे मँड़ी में सुला दिया गया।

घोजन के लिए कहा गया। मैंने ‘ना’ कह दी।

म उदास पड़ा रहा। जब नींद आयी म नहीं जानता रात को मुझे सपना आया था। मने सावित्री को देखा था सपने में बस मरी तबीयत घोर तराब हो गयी। पिताजी की चिन्ता बढ़ी और रह रह कर घेर मस्तिष्क में सावित्री का चित्र उमर कर गहरा होता गया।

मेरे तन की टूटन बढ़ गयी। रोग-भाग में एक विचित्र घासस्य भर आया। सावित्री को देखकर मुझमें एक आधीच मुरझुपी छूटी थी। मान मन को रोकने के बावजूद भी हल्का होती थी कि मैं सावित्री की घोड़नी में अपना प्रतिबिम्ब छोड़ूँ।

पिताजी निश्चित थे। वह अपने बेटे को इतना पिरा हुआ नहीं समझते थे कि वह ‘उनकी कसम के बाब भी पतन के पटु में गिरना। किन्तु उनका बेटा जाने में उस निम यौन-पीड़ा से अक्षय हो उठा। मुझे कोई भी थोड़ा धक्का नहीं समझती थी। दूर गतिविधि में मुझे एक सदासीनता गहरा जाती थी। म अन्तस की अनुपस्थितियों की अक्षय धाम में जन-जता सा जा रहा था।

मुझे आज भी धक्की तरह से याद है कि मैं ने मुझे बुलार कर पूछा था “क्या बात है सरण्य आज तू बड़ा बेचैन दिख रहा है।”

मन मन बिह्वलता से भर आया और आँखों के छोर बीच से गये। अम्यव्यवस्था से बोला “कुछ नहीं माँ।”

माँ को इससे संशय नहीं हुआ था। वह बार-बार मुझसे पूछती

बरस बस बीमसे में कबारी नहीं बनानी रे
 ममा पूँ तो बिल बानी रे
 इस रितु में मठ का बासम
 परदेसा रबानी रे-

उसका माधुर्य से भीगा स्वर मूँबता रहा भीर में बसा धारा ।
 उसने धपना गाना-बजाना बन्द करके कहा "पयला कहीं का घर में
 जोक मोरवार भीर पिया नहीं है बिलवार ।"
 वह बली मयी । बीता के छेठ में चुस गयी । बीता उससे बड़ी देर
 तक भीर सुनता रहा । उसे छेठ के बाहर तक पहुँचाने आवा भीर मुझे
 देसकर बोला "मरी छो साहिब हनुमान बाबा की बय तो बोक ।"
 उसने डोलकी पर बाप हैकर कहा "हनुमान बी की बय ।" यह
 ब्यप्य मेरे बहावर्ष छठ पर था ।

बीता ने फिर उसे कहा मेरे घर 'बसाबा' के भीर धुक हो गये
 हैं । तुम साहिब मुझे ही सारे गीत गाने हैं ।

"मरे मेरे राजा ! तू बिठा न कर, सारे भीर य ही पाळेंगी ।
 पीड़ बरस बस मुस मुस जाव' बाई' धपावण' छबी भीर में हो
 पाळेंगी । ऐसा पाळेंगी कि लोम जागा-पीना भूल जायेये । धण्डा
 चलती हैं ।

वह बली मयी । मैं तबास हो गया ।
 सौम्य पड़ी ।

म घर पहुँचा । धाजकस म प्राय लेठ में हो सोता था । वहाँ मन
 के डियने की कम मुजाहद रहती थी । पर धाज साहिब के जाने के
 बाद न मानूम क्यों मन मारी मारी हो छटा । बचन में टूटन तो ब्याप्त
 हो पसी । घर आया । धाकर लाट पर तो गया ।
 माँ ने पूछा "बसा बाव है सरबण ?"

१ बाई २ धपावण ३ पीड़ लोक गीतों के नाम

“सिर में दर्द है।”

पिताजी चिंतित हो गये। बेंच जी का हाथ कर बुला लाये। बेंच जी ने बाड़ी का घबलोकन किया। अपने लसाट पर बस डाल कर कहा “ठबीयत बारी है कैबस। खेत की सीत खरी मिट्टी का यह प्रसर है। धाब इसे अपने के पीछे सुला दिया जाय। बनिया मिसरी की ठकाली पिछा ही जाय।”

मुझे मँड़ी में सुला दिया गया।

घोबन के लिए कहा गया। मेरे ‘मा’ कहरी।

म उदास पड़ा रहा। कम नींद आयी मैं नहीं जानता रात को मुझे सपना आया था। मेने साबित्री को देखा था सपने मे बस मरी ठबीयत और पण्ड हो बबी। पिताजी की चिन्ता बड़ी और रह रह कर मेरे मस्तिष्क में साबित्री का चित्र उभर कर बहुरा होता गया।

मेरे कम की टूटन बढ़ गयी। बीच बीच में एक विचित्र घामस्य भर आया। साबित्री को देखकर मुझमें एक भारीब झुरझुरी छूटती थी। नाथ मन को रोचने के बावजूब भी इच्छा होती थी कि मैं साबित्री की झोकनी में अपना मस्तिष्क छोड़ूँ।

पिताजी निश्चित थे। वह अपने बेटे को इतना चिरा हुआ नहीं समझते थे कि वह “उनकी कसम” के बाब जी वतन के गड्ड में गिरेगा। किन्तु उनका बेटा मांने मैं उस दिन धौल-पीड़ा से घबरा हो उठा। मुझे कोई भी चीज अच्छी नहीं लगती थी। हर गतिविधि में मुझ एक उदासीनता गजर आती थी। मैं अस्तस की अनुपस्थिती की महसूस घाग में बस-जला ला जा रहा था।

मुझे धाब भी अच्छी तरह से याद है कि माँ ने मुझ बुझार कर बुला ला आया बात है सरबला धाब तू बड़ा बेचैन रिघ रहा है।”

मेरा मन बिह्वलता से भर आया और माँखों के छोर बीच से बने। धम्यमस्वरा से बोला “बुझ नहीं माँ।”

माँ को हमसे संतोष नहीं हुआ था। वह बार-बार मुझमें घाएँ

एही घोर में उसे टालता रहा ।

घाब दिन भर पिताजी घर में नहीं थे । वह बाहर में बने बसे थे । मेरे बचेरे माई ने आकर मुझे बताया था 'बोरा सिंह को कांग्रेस-टिकट नहीं मिलेगा । उससे कोई भी व्यक्ति संतुष्ट नहीं है । और इस बात की जर्नी यर्म है कि काका को इस बार टिकट मिलेगा । काका इसीलिए कांग्रेस के जिलाध्यक्ष से मिलने के लिए बाहर गये हुए हैं । सुना है कि वह कांघ प हाई कमान में बड़ा बबबबा रहते हैं ।'

पिताजी के साथ सुमेमान भी गया था । सुमेमान की इच्छा थी कि मेरे पिताजी को कुछ चुनाव में लड़ा होना चाहिये । सारे मुसबमान उन्हें ही बोट दिये । बापू बीसा सच्चा और कर्मठ इन्सान बाब भर में नहीं है ।

माँ को पिताजी की घाब की अनुपस्थिति पण्डी नहीं लगी । वह मेरी सबासी के साथ बड़बड़ा सठती थी "छोरे को इस दसा में छोड़कर सहर बसे हैं । बीसे हरदम सरबसा-सरबसा की रट लपाने रहिये और मुद्रियों भर भर कर बड़ाई करेमे और जब सरबसा की लभीयत सराब हो गयी तब प्राप बसते बने लम्बा हेसा (पुकार) घोड़ी प्रीत ।"

मेने माँ को सात्तना थी 'मुझे इस तरह बेचैन नहीं होना चाहिए । बीस थी ने कहा था न लभीयत माटी है ठीक हो बामेबी ।"

माँ जब लोटा लेकर बंगल की ओर गयी तब सावित्री मेरे पास घाबी । मेर पाबठाने बैठकर मेरे पाँवों को बीम-बीमे दबाती हुई बोली

"कँठा है की ?"

"पण्ठा है ।

घाब बहुत सबास सपते हैं ।"

मेँ उसे अपने पास बुलाता बाहुता था । इसलिये माँसों को मूँद कर बोसा "सिर में बडा रब है ।"

वह उठकर मेर सिरहाने बैठ बयो । अपनी हथेली से मच सिर बवाने लगी ।

मेरे धन-धन्य में उत्तेजना भर पठी । मेँ उसके मुख को देखता

रहा । बेबठे-बेबठे मैंने उसे पागल की तरह अपनी बांहों में भर लिया । उसके कपोलों पर चुम्बनों की वर्षा कर दी ।

धीरे बड़ धाहत सापिन की तरह अपने पम्पू का फटकारा देती हुई बठ खड़ी हुई । मैंने उसका हाथ उसके पकड़ लिया ।

उसने अपना हाथ छुड़ाने की चेष्टा की । वह नहीं छुटा । जब मेरा हाथ भी इतना कमजोर नहीं था । उसने उसे जकड़े रखा । वह मुत्सुकीने स्वर में बोली "आपको साब नहीं धाती । छोड़िये मुझे ।"

मैंने उसका हाथ नहीं छोड़ा । उठकर उसे अपनी बांहों में छिर भरना चाहा । मैं बहुत उत्तेजित हो गया था ।

वह बाहर की ओर लपकती हुई बोली "कि: कि: आप कौन हैं ? आप की सींगम्य को मिसरी की तरह बोल कर पी जाना चाहते हैं ।"

किसी ने मेरे कनेजे पर हथोड़ा मार दिया हो ऐसा मुझे प्रतीत हुआ । मेरा घटीर गिबित पड़ गया और मैं टूट कर साट पर पड़ गया । मेरे बिर में एक घड़ीब भलभलाहट थी ।

ओह ! मैं वासना में घग्घा हो गया था । घड़ी क्या कर बैठता ? परचाप की धाम इतनी प्रखर और प्रबल रूप कि मुझे जलाने लगी कि मैं रो पड़ा ।

इस मातृकता का प्रभाव जोड़े क्षण ही रहा । मरप मुन्नर होने लगा । वासना की धाम फिर रोम-रोम में बमकर मुझे बिबल करने लगी ।

मैंने मुझे खाने के लिए कहा । हामांति मुझे बड़ी मूक की पर मैंने माना नहीं माया । गाबित्री दूध निकल जायी । उसे देख कर मेरे मन की समा एक चिड़े हुए इम्मान की तरह हो गयी । उसने मुझे प्यार से दूध पीने का धमुरोह किया पर मैंने जलते हुए स्वर में उत्तर दिया, "मुझे नहीं चाहिए दूध-मूक ।"

उसने मंथत स्वर में कहा "ओहा सा पी लीजिये न ।"

"बह दिया न मुझे एक बूँद भी नहीं पीना है ।"

वह बैचारी मुँह फ़तार कर बनी ययी ।

चोड़ी देर में सप्ताहे की बीरती हुई सोक-धीत की पंक्तियां गुनायी पड़ रही थी—

“मेड़ी तो मेड़ी करबो पिया बाकरी बी

साँझ पड़मा बर घास बाबो गोरी रा बलमा बी ।”^१

धीत स्त्री का था पर गा रहा था कोई मर्द ।

उसी बाहर से तुलसीदास काका भी आवाज गुनायी पड़ी ‘सरबल्लो सरबल्लो’ ।

मे घबरा ससके पहुँचे ही मैं उसके पास पहुँच पड़ी । मैं को देखते तुलसीदास ने कहा “राम-राम बीबाई सा ।

“बीता रह । बूझ-डोकल हो । बहू को बड़ा मुजब है ।”

प्राणीबाई बेने के मामले में मेरी मैं बड़ी कष्टार हूँ ।

बीबाई, घास बीचरी काका बाहर से ही रहेंगे । कम संभ्रम तक धार्ये ।

“क्यों ?”

“कोई बात काम सा गया है । बीबाई बी इस बार अपना बूँसा (नपाड़ा) ही बजेना ।”

“मतलब ।

“काका को टिकट बकर मिलेगा ।

मैं क हाथ में जालटेल बी । उसकी ओत को बहू टीक करती हुई बोली “तेरे बाका को भी बैठ-बिठाये तथा सस्ती-मुस्ती मूमली रहती है राम जाने ।

“राम गया जाने सारा बाहर जानेना । इस बार काका बीत गया तो हरमुज की नाक कट जायेगी ।

तुलसीदास बला गया ।

१ पिया बहुत समीप नीकरी करता है ताकि साँझ के साँच घास बागध पर भा जावे ।

माँ मेरे पास आकर बैसन से बोली 'तेरे बापू को भी क्या मूमती है ? पब टिकट लेंगे नुमाव लहेंगे । राजा बनने । दि. ।

मैंने माँ को समझाया कि ये सारी बातें तेरी ममझ में नहीं आयेंगी । माँ कुछ बड़बड़ाती हुई बली गयी ।

घर का सारा काम पूर्वगत चलता रहा ।

माय मुझे पिताजी की अनुपस्थिति पच्छा सगी खैम मेरी कुछ कृतिवों को प्रोत्साहन बिलन का अवसर मिल गया हो । फिर वहीं माय माँ मुझे उत्पत्त करने लगी । रह रह कर मेरा बदन टूटने लगा । मुझे ऐसा महसूस हुआ कि मेरे तिर पर बड़ा भारी बोझ पड़ा है । मैं धीरे धीरे मूँद कर पड़ा रहा ।

सप्तभूषि मंडल आकाम में बसक रहा था ।

आकाश-बंया अपने पूरे मौन पर थी ।

मुझे नींद नहीं आ रही थी । मैं ही ऊपरमून इतमनों में ठमसता रहा । ठारें गिनता रहा । अपने मन को नाबिबी के ध्यान में हगता बाहा पर मन माय मुझमें बिजोह करने के लिए तैयार हो गया था । माय उसने मुझमें असहयोग करने की ठान ली थी । बार-बार नाबिबी का साथ में बना हुआ शरीर मेरे सम्मुख नाच जाता था ।

म ध्वज होकर टूटने लगा ।

टूटता रहा । नाबिबी बाहर मौन-मीन था रही थी । रूपा हुआ समस्त वपत्त बड़ा था । दूर-दूर गेह के घाम पास बसकती रैन मूम मरी बिबा भी लग रही थी । मैं उम्हें देखता रहा ।

घापी रात हो गयी ।

घावन में नाबिबी लोपी हुई थी । घावन के बाहर दरवाज के घामे माँ गुरगि भर रही थी । माँ के गुरगि कभी-कभी बहुत ही ठंठ हो जाते थे ।

मैं अनुप्य घापी में घननापी हुई बेन की तरह लोपी नाबिबी को देखता रहा । नाबिबी उलक दूरे शरीर को डँक रहा थी । मैं बाचना में

धंसा हो गया। मुझे मेरे पिता की सीखना नहीं रोना सही। सीखना
जैसी प्रत्येक छात्रा के पीछे कितने ही धर्मगुरु के मैं उन सबको भूल गया।
मेरे बचपन एक तस्वीर की गोपी हुई सावित्री की।

मैं बछरा। बड़े पाँच बच्चा। यह-रहकर मैं टीका से काँप जाता था
कि मैं उठ न पाय मैं जाय न जाय ? मैं बाहिर सावित्री के पास
पहुँच गया।

सावित्री पहली नींद में थी।

मैंने उनके पास पर जाय गया। वह मुन्दरा वही जैसे छोटे बच्चे
नींद में मुन्दराते हैं। मैं कुछ देर तक बिस्कुट का बैठा रहा। मन में
कुर्बान नमस्ते बचने गया।—बासना और पिता की सीखना का। मैं काँप
छा। मुझे लगा कि पिता की सीखना गोपनी ही वह घर जायेंगे।

तब मुझे बचपन की एक बात मझमा जादू हो आयी।

बच हम नेमते के पीर हम ने कोई बचपानी हो जाती थी। एक
स्वप्न हमनी पुनरावृत्ति न होने के मुझी हृदय को किसी न किसी देवता
की कमल दिना देने थे। हमें बड़े संकर का साधना करना पड़ता था
और हमें अपनी हृदयों के रिपरीत बनना पड़ता था।

तब अत्यंत मझका हमारे मझके से कहता—

बूँदें माये कूकड़ी

पाणी सोमन छतरी।^१

उन दिन जैसे मैं बचपानी हो गया था। अंतिक पराजय में मैं दूधर
दिखर गया था। नादान बच्चों की तरह मैंने भीज-स्वर में कहा—

बूँदें माये कूकड़ी

बापू री सोमन छतरी।

वह एक कूठी रिकाना थी। बापायकीन बात। वर मुझे एक बहाना
बाहिये था। बाहिर वह बहाना मिल गया और मैंने बात बाहर सावित्री
को पीरे से दिखोड़ा।

१ बूँदें पर मुर्गी हैं और ऐरी कलम छतरी पड़ी है।

सावित्री हड़बड़ा कर उठी। उसकी धीलों में भय-मिश्रित विस्मय फैल गया और उसके चेहरे पर जड़ता की भावना गहरे रूप में झलकने लगी। मैंने उसे ऐसी धमाम कबड्डी से देखा जैसे मैं कोई पाँसी की सजा पाया हुआ इन्सान हूँ और अन्तिम बार अपनी पत्नी से मिलने के लिए भापा हूँ। सच है, उस मुद्रा ने उसे सिहरा दिया। वह वहाँ से उमर बन आए।

वह विगलित स्वर में बोली "क्या हो गया है आपको?"

मुझ में बोलने की शक्ति नहीं रही। जैसे पत्थर की बगलक उठे बना ने मुझ में ऐसी जड़ता ला दी थी जिसने मुझे एक तरह से पबु बना दिया। मैं उसे पूर्णचत करणा से देखता रहा।

"ऐसा काम आपको नहीं करना चाहिये। यह ईश्वर के प्रति धन है। हमसे ईश्वर हमसे माया हो जायेगा और हम कठोर बड़ भोगना पड़ेगा। हम पाप के बुरे में गिर जायेंगे।

उसका स्वर ममता भरा था और वह मुझे इन तरह कह रही थी जैसे कोई पुत्रारिण उनसेग वैनी हो। तब मझे हम दोनों के धातु भेद का ज्ञान हुआ। लेकिन उस समय ममी जाने मेने लिए गीए थीं। मुझमें एक ज्ञान ना छाया हुआ था।

मैंने हकलाते हुए कहा "मैं मैं"।

उसने बिगड़ी भरे स्वर में कहा "आप ऐसा अथर्व मत बोलिये, कहीं ममुर भी को कुछ हो गया हो तो?"

"कुछ नहीं होगा।" और मैंने एक बालक की तरह कहा "तु मेरी भोग्यता उतार दे।"

मैंने?" उसके स्वर में आश्चर्य था।

कहते—हूँ ऊपर बुद्धि

बात की सीमा ऊपर।

वह पीरे से हँस पड़ी। जैसे मैं बहुत अचोख बनाराम हूँ। मेरे हाथ की पकड़कर उसने मुझे बठने का संकेत किया और बोली "बौद्धिक

वही उगार सकता है जिसकी सीबन्ध खापी जाती है। बाहने घोर मन को समझ कर मो जाइये।”

पर येने उसकी एक नहीं सुनी। जब उसने मेरे घनुरोच को नहीं माना तब मैं एक-एक बिगड़ा घोर उसे वही जमान में जला-बुरा बड़ा घोर अपने आपको नाम करने की बयकी थी। येने इस बाध का भी उच्छ्वास किया बाप पर तो माता रहे पर मैं उसके पीछे नहीं मर सकता। उसकी छाँवें छू वहीं फिर धानुषों में मर जातीं। उसने बराबर स्वीकार करनी। वह पराजय उस नारी की विवशता की परम भीता थी।

हमके बाद मैं धारमन्त्राणि में जलता रहा।

× × ×

रु-रु कर कुछ बयना था कि मैं धम्यायी घोर अपनी हूँ। मैंने अपने बाप की सीबन्ध को तोड़ा है। मैंने अपने बाप से छल किया है।

मैं तब धनुमान की के भण्डित गया। उनके नाम 'प्रसाद बोला' धनर मरे बापु की कुछ भी नहीं हुआ तो मैं मुझे तथा अपना का प्रभाव बर्नया। बार मनलहार व जग रन्ना।”

इस दुष्कर्म का (बार में वह मुझे दुष्कर्म का ही प्रतीत हुआ) मुझ पर बहुत प्रभाव छाया रहा। मैं अपने बापको अपनी सक्कले लगा। पिताजी के सम्मुख मैं जाना तो जगजगल किसी धम्यस्त शक्ति द्वारा मेरी निगाहें मुझ की जाती घोर मैं ज्ञानि की पीड़ा में जल जाता।

पिताजी बड़े लुप्त थे। क्योंकि उन्हें निर्वाचन-टिफ्ट जिसने का कुछ

भरोसा हो गया था। सभी कुशाव होने में काफी समय था, पर रिताजी का अस्त्राह-अस्त्रास देना कर लपटा था कि कुशाव एक माह बार ही होने वाला है। अब उन्होंने बेटी में ध्यान देना भी बंद कर दिया था।

पीरानिह हवाय हाकर बिगेही बन गया।

एक दिन वह रिताजी के पास आया। तब दोनों के पार रिताजी मुझे बन्दूक बनाने का अध्ययन करा रहे थे। अब मैं रिताजी पदस्ते में समा मरता था। कभी-कभी उड़ते हुए पक्षी को मार देता था।

बीर सिंह ने "जै माताजी की की।

रिताजी ने उनका हाथ थोड़ कर स्थापन किया और वे दोनों बही बैठ पर बैठ गये। मैं मा उनके पास बैठ गया।

रिताजी ने कहा "गलत बनाना हालाँकि हमारा धर्म नहीं है। पर समय ही कुछ ऐसा था गया है कि धारजी अपने कम पर समय नहीं रह सकता वही बीर सिंह का?"

"धर्म तो बीरजी दल पर बंद गया है।"

"ऐसी बात नहीं है।" रिताजी ने धमकीर होकर, दूर तक जैनी हरियानी पर नजर लगाकर कहा "धरमा धर्म अपने पास ही रहेगा। छोटे टापुर। धर्म क बिना पृथ्वी एक पल भी नहीं टहर सकता। धर्म की बुरी ही इन सभी पृथ्वी का बोझ नैमान हूँ है। सभी कुछ बग़ावतों में बड़े-बड़े मुनि-ग़ाली धर्म की धरमा को नमाने हुए है।"

"जैनी बात करते हो बीरजी। एक तो मुझे अपना धर्म रमा? मुझे टिकट दिखाने का धाम्बागल दिया और मुह बाकर अपनी निधरिय कर आवे। धर्म रहा ही नहीं है?"

"ऐसी बात नहीं है छोटे टापुर। धरमनल बात यह है कि हमनुन में धारने कूड़े-मल्ले बिम्बे बनाकर ममा कोषन के बावकर्मादा को मरवा दिया। वह बरा ही दुष्ट प्रवृत्ति का है। "और आप तो जानते हैं ही छोटे टापुर, वह बेच दुरमन है और इननिह सिने निर्र उबरे

विरोध में अपने किए बीर लगाया। चापके बीच में कभी भी टीपार नहीं बनता और हरमुख को मैं अपने सामने धुंध पर तार लपेटे हुए नहीं देख सकता।

“यच्छा वह बात है ?” पीरसिंह को बहुत विस्मय हुआ।

“विश्वास न हो तो मुझेमान को पूछ लो।

बात वहीं पर खत्म हो गयी।

दोनों की बाँहें बचान हो रही थी।

इधर बीच बिल बीच बने। मेरा ध्यानम पूर्ववत् था। कभी-कभार मैं सावित्री के पास जाता जाता था। सावित्री इस बात से बहुत दुखी थी। वह बार धनिष्ठ-मार्गका से सिहर जाती थी।

आखिर वह समुद्र बड़ी घाड़ी गयी।

अचानक सावित्री चहुर जाकर बिर पड़ी। उसके घाल की बरह जाने लगी। एक-दो के भी हुई। मैं बचप उठी। उसके नीचे की बमीन छिन्नक गयी।

“वह सब क्या ? उसका भस्तिष्क में वह प्रसन्न हवा के चुनावदार अक्षरवाचित उठने वाले ‘भूतेलिये’ की तरह चहुर विकसलने लवा। उसकी समस्त में कुछ भी नहीं आया। वह किसे अपने मन की बात कहें।

आखिर बड़े मन्त्रन के बाद उसने वह निश्चय किया मेरी वह वास्तव में कुमटा है। बकर सेठ भाते-जाते इसने किसी। ”

उसके मन में सबिह के बादल समझने लगे और वह ध्वज का उन बुझकों से सावित्री का सम्बन्ध जोड़ने लगी जो यथा-कदा मेरे घर में पाते थे। पर उसकी हिम्मत इस बात का उद्घाटन नहीं कर सकी।

उसने इस रहस्य को सुपाये रखा।

छात्र पड़ी किसी भी तरह सावित्री मेरे पास आयी। मेरे सम्मुख चिड़चिड़ा कर वह बोली “यव क्या हुआ ?”

“क्यों ?”

“क्यों ? आपके कर्मों का फल प्रकट हुए बिना धब नहीं रहेगा । मेरा नाँव मारी हो गया है ।

“हूँ !” मेरी धीनें निस्कारित हो गयीं ।

“हाँ । उसने हठाप-स्वर में कहा “धीर इसका सामूजी को पता भी पड़ गया है । मुझे धध की बात धीर प्रस्तियां होने समी हैं । मोर से सामूजी मुझसे बल मया कर बात-चीत भी नहीं कर रही हैं । वह समझती है कि मैं ।” उसने मुझे हाथ जोड़ दिए । उसकी दृष्टि में दया की झलक थी “माय माँ को कह दीजिये कि सत्य क्या है । नहीं तो बात का बतंगड़ होते बेर नहीं सवेयी ।”

बैरा साप सरीर पसीना-पसीना हो गया ।

ये मैं उमे डाँडन बेंचाया ‘तू पिता क्यों करती है ? मुझे जब माँ पूछेगी तब मैं सब कुछ बता दूँगा ।”

माँ इस बात को दो दिन तक छुताती रही । उसकी यदिमा धीर उनके व्यवहार को देखते हुए ऐसा प्रतीत होता था मानो वह बात माँ के उतर को ‘मण्डन-उतर’ बना रही है धीर उसकी मनःस्थिति इनके कारण बढ़ी विविध हो रही है ।

तीसरे दिन उसने मुझ-मुझ मुझसे पूछा ‘बेटा तुझे अपनी माँ की सोपन्य है उन माँ की जिसने तुझे भी माह तक अपना सून दिखाया है खुद ने ठंड-नार मारा धीर तुझे नहीं सहने दिया है उस माँ की सोपन्य है कि तू सही-मही बतायेगा ।”

मैं चुप रहा ।

“बहू के नाँव मारी है ।”

। ये मैं माँ की धीर एक बार प्रत्यक्ष मेरी दृष्टि से देखा । धीर धीरे से मेरी गर्दन मुझ पर गयी ।

“तेरे बापू इसका लहू पी जायेंगे ।”

“पर माँ ?”

“बेटा ! तूने अपने बापू की सोपन्य खा रखी है फिर क्या”

हमारी मात पीढ़ी में भी ऐसी स्त्री पैदा नहीं हुई, वह बड़ा भारी कर्तक है।”

एक बार मयाजक बुला जिते हिंसा का पर्यायवाची ही कहूँगा मेरे मन में जायी धीरे से सोचा कि भूठ बोल जाऊँ। बकर मरे मन में वह शीतला भी कि मैं उससे छोटा हूँ धीरे वह मुझे समय-बसमय तप करती है। इसलिए हम कर्मक को उमक पाये सोच हूँ। जितने बाप हरे घर में निकलते हों धीरे धीरे हमारा विवाह हो जायेगा। मेरे लिए मरे सामक वह जायाययी।

इसलिए मैं गुप रखा। मैं ने कुपी का धर्म लवा लिया कि वह हुमटा है। वह जोर में लाल-पीली होकर बसी गयी।

पापक साबिबी ने हमारी बात-बीत को गुन लिया था। इसलिए मैंने रिताजी को उमने देखा। वह घर पास आयी धीरे बानी “पापने मैं को लच-लच क्यों नहीं बताया ?”

“क्या ?”

“कि पेट आपने रखा है।”

“कह हूँ। तुम्हें किस बात की बतावना है। बाहिर मुझे भी यह सब कहते लाल आयी है।”

मैंने अपना वाक्य समाप्त किया ही था कि पिताजी ने पर्व कर कहा “मरवाए मरवाए !”

“क्या है ?”

“मैं तुम दोनों की बातें गुन चुका हूँ। धीरे धीरे मरवाए की मैं आपने हम कमीने की हरकत देना इसने मेरी मौगम्य लाली थी। इसने मेरी मौगम्य लाली थी।” पिताजी पापनों की तरह भीख पड़े।

“क्या बात है ? आप हम तरह क्यों भीख रहे हैं।”

“देखी आपने मैं की करतूत।”

“क्या ?”

“देखी वह ?”

४ “मेरे बेटे की नहीं यह हमके किसी ।”

पिताजी बीस पके “सरबल की माँ ! बबान को मगाम दो । बहू पर लाँगन न लगा कर अपने इस गालामग मंफोल घोर कुष्ट बेटे को पिछारो इन कमीन ने यह नहीं सोचा कि मेरा बाप मर जायगा ? क्या तू समझती है कि सौगन्ध का कोई समय नहीं होगा ?

“आप पहले मेरी पूरी बात सुनिये ।”

“मैं सुन चुका । जो इरादे तुने मुझे पहले क्यों नहीं कहा । नीच पापी ।” घोर पिताजी ने मुझ धूम्रों से पीटना शुरू कर दिया ।

मैं पत्थर की तरह लड़ा हुआ मार खाता रहा । पिताजी मुझ मागते मागते इतने उत्तेजित हो गये कि वह स्वयं अपने को पीटने लगे । माँ ने मुझ बस्के बैट्टर बाहर निकाल दिया । जैसा कि सदा होता आया है । माँ ने मेरा ही पक्ष लिया और वह माफिजी को कोसने लगी ।

मैं उसी सज पर से बाहर निकल गया ।

बागम की तरह घूमता रहा—मेजों और मूनो पम्पडियों पर । रत के टीनों की निर्बलता ने मीने कई बार धाँसू बहाये । मेरी आत्मा स्वयं मुझे कचोटन लगी । अन्त्य की ध्वनियाँ मजबूत स्वर में बिल्माई “तू घपराची है । तुने सौमन्ध तोड़कर ईश्वर को माराज कर दिया है । ईश्वर तेरा कोई न कोई धनिष्ट धबस्य करगा । उनकी सर्वम्यापी हट्टि से कोई भी धिर नहीं सकता ।

मैं जैसे अपने संस्कारों में आजांग सा अनुमान की के मन्दिर की घोर जल बड़ा । मीने बिह्वल होकर अपनी गरज उनके धामे भुजा बी । धधुधार वह उगी । मीने धम्मर्बता के साथ अनुमान बाबा से कहा “मैं एक वर्ष तक तेरा धन रत्नगा प्रसाद बनाऊँगा गल घर तेरी म्मुति में जामरण कराऊँगा ।” मैं वहीं मरणात्मक था पड़ा रहा । अन्ध विश्वासों के प्रति धाम मैं स्वर्जत रूप से लोच मरता हूँ पर उन समय ईश्वर और उनके विविध दृष्टांतों व जयत्कारों के प्रति तनिक भी धनास्दा करना मेरे मन का रोग नहीं था ।

वे दिन भर घर नहीं गया । दो-तीन बार मुझे बुलाया भी गया

मैं हड़बड़ा कर उठा ।

बाहर जाकर देखा—

पिताजी सोये हुए थे । मैं उनको देखता रहा । कम्पना करता रहा ।
 मैंने पिताजी को मार दिया है । यह पिताजी नहीं उनकी लाश है ।
 इनमें प्राण नहीं है ।

भोग मुझे क्या कहेंगे ?

घोर मुझे लगा कि साच गाँव मुझ दुत्कार रहा है नीच कमीना
 और नाजायब कह रहा है ।

भीड़ ! अपार समूह ।

छटकारें ।

फिर ?

मैं बाँव छोड़कर भाग जाऊँ ।

उस समय न कोई भीड़ थी और न कोई मुझ छटकार ही रहा था ।
 वह सब मेरे बाह्य-मन्तर भावनाओं का मजानक स्रवण था । मुझे मेरे
 मन्तर के अन्तर्-विदवाओं और अपने आपको आपराधी समझने की प्रवृत्ति
 पचसय दे दी । उन्होंने ही मुझ गगा बिया ।

मैं बाँव छोड़कर भाग आया ।

तब मुझे ऐसा लगा कि कोई मुझ पीछे से दौटता रहा है । हजारों
 आवाजें मुझे अमाने के लिए प्रेरित कर रही हैं । यदि सत्य नहीं था तो
 फिर मैं एक मपाटे के साथ अपने बाँव को एक बोग दूर बँस छोड़ आया ?
 मेरे पाँवों की पिङ्गलियों में नाँटों की चुपन की लकीरें पड़ गयीं । एक
 तो जगह लून भी रिसने लगा । मैंने ऊबड़-खाबड़ रास्ते की भी परवाह
 नहीं की । वह सब क्या था ? वह सब किसके आदेश न हुआ ? उस
 देन मैं नहीं जान पाया था, पर आज सब स्पष्ट है ।

यह सब मेरी मन की अपराधी मनोवृत्तियों का ही कारण था । मेरे
 मन्तर में चुन्नी हुई अनेक पलायनवृत्तियों का आदेश था ।

मैंने पहले विधाम नर सोचा भी कि मुझे यह नहीं करना चाहिये ?

तब मैंने अपने दिल को समझाया 'पिताजी मेरा मूँह बैचना नहीं चाहते और' ?"

उस समय मैं अपने इस वाक्य को पूरा नहीं कर पाया था पर जब कर रहा हूँ कि जानने की प्रकृति के पीछे एक कारण मेरी बीबी की आयु का बढ़ा होना और मरी हीनता का भी था। उसकी प्रसन्नता भी थी। धारमगमनि और परमी के प्रति प्रवेदन य पुरी गुणा भी थी—

मैं शहर जाता था। एक शहर से मैं दूसरे शहर जाता था। तीन दिन लगातार उपवास के बाद मुझे रोटी मिली मैंने एक सेट के यही काम कर लिया क्योंकि जब मैं घर से जाता था तब मेरे पास कुछ भी नहीं था—एक कुटी कौड़ी भी नहीं।

मैंने जिस दिन घर छोड़ा उसी दिन सारे गाँव में हलचल मच गयी। लोगों ने मेरी बहुत खोज-बीन की। इधर-उधर ढूँढ मकर बीड़े। तालाब में बुझिबी भगाकर खोजा पर मैं सबका धमकाने रहे। घर में कुछयम मच गया। माँ रो रो कर निहास हो गयी। माँबिना गुमगुम भी बैठी रही। न वह बहाइ मार कर रो सकती थी और न धाँमुओं के मुझार को सीने में छुसा सकती थी। भयानक दुःख। महारा बिपाद।

पिताजी के अन्तस में यह भावना गहरी जाती गयी कि मैं जब जिन्ना नहीं रहूँगा। तीसम्ब कभी भी भूटी नहीं होनी। प्रभु उन पर को किये बिना नहीं रहेगा। और वह नींद में भी नींद पड़ते थे कि मुझे प्रभु अपने पास बुला रहा है। वह रात दिन इसी भय में घाबरा रहते थे और निराश्रयता की तरह बार-बार ईश्वर के आगे महान अपराधी की तरह ठिर मुँहाकर रोया करते थे। लोगों ने उन्हें बहुत समझाया पर पिताजी के हृदय पर कोई धतर नहीं हुआ। वह उन धर्म विरवान के धातक में बहकते गये और उनकी दशा एक महानारी का तरह हो गयी थी। उन्हें अपने भी भयंकर आने लगे। वह किसी की बात पर विरवास नहीं करते थे। कुछ प्रचलित वह बचावें थी उन्हेंने रट भी थी जिन्में इस बात का उल्लेख था कि फर्मा ब्यक्ति के सीर्वा

कापी धीरे धीरे बीच में छोड़ बैने से लगे कुत्ते की भीठ मचाना पड़ा।

धीरे धीरे पिताजी का बेहरा इतना पीसा धीरे सचेत हो गया कि वह घरवालों के बीमार से लड़ने लगे। उनकी छाँटे भीतर की धीरे बैठ बड़ी। भुँरियाँ गहरी हो गयीं। उनके उमार उनके बेहरे को धीरे विह्वल करने लगा। शोभा साबिक धीरे पंक्ति में बाहु टोने किने घर सब ध्ये।

वस्तुतः जब यमुना के अपने हृदय में होता है। यह बाहरी शक्ति का पिताजी के लिए ध्ये रही धीरे उनकी बीमारी बढ़ती गयी। उनकी विनिमय का कोई निवास हुई नहीं मिला।

इसका माँ साबिकी को लड़ने लगी। वह इन सभी घटनाओं का शोष साबिकी पर बैठ रही थी। यह सही थी कि बोली बोधिन से न दबे तो बेचारी लगी के काम लीने। दुर्बल की कोई जुवा नहीं होती। तो, माँ साबिकी का बात-बात में लाने कहने लगी। उसका जाना-पीना बहर कर दिया। उसका सोना-बैठना हराम कर दिया।

इस पर कुछ प्रकृति का हरमन धीरे बीठा धीरे पाँव में एक की बर्षा करते रहते थे "जाला कायर या जाल यया दित में कुस्ती के नाम से सभी बैठ गयी।"

पिताजी को लोन या-याकर यह सब बातें कहते थे। इससे उनके मन में पीड़ा का अमानक लुप्तन बढता था।

(परिश्रम यह निक्ता कि मेरे मापने के एक बड़े माह बाद ही पिता की मनन निम्ना में ली गये। धीरे लीनों का यही कहना था कि बाप का इतना उसका धनना बैठा है। बैठे ने बाप को धार दिया।)

मौत की घटना की बड़ी विधि लख से गयी।

पिताजी प्रायः नींद में चौक बैठते थे। जबकि रात दिन वह अपनी मौत के बारे में ही सोचते थे, इसलिए उनके मन में मृत्यु की धारणा गहरी होती गयी। बात करती-करती वे बीच में यह बैठे थे कि घर में नहीं बीटेंगा। रात लूके बापराज की बरतना में इनका नामा ही

“मैं हूँ जीता ।” सावित्री कुछ देर चुन रही । जाता मुझमें उम्र में बढ़ा था । जब उनसे जाने का श्वास ही नहीं लिया तब वह मर्यादा तोड़ कर बोली “घानम खोजना भरा धर्म नहीं है लेकिन घाप जाते नहीं इसलिए पूछनी हैं यही घाप क्यों घाये हैं ?

“तू नमस्ती नहीं ।

सावित्री हटाव खाई हो गयी । वह झेंझकी क बाहर निकलने के लिए घाये बनी “मेरे घाये से हट जाए ।”

“अभी हटूँ तो ?”

“जीता थी । घरेली नार डेनकर अपने को बाहर मत प्रकटित । एक पटक में शान्ति खाने चित्त साइली । एक मुकते में बस्तीमी हाथ में दिखेगी ।”

वह ही-ही-ही करक हुआ । उसकी छाँटों में बाढना बहक उठी । उसकी हँसी बन्द नहीं हुई । वह पुनः पुनः कहा रहा ।

सावित्री का मन लाल घर के लिए बाँध रहा । उसने अपने हाथ का एक पटक दिया “हट बाइए सामने मैं बर्बा घनर्ष हो जावेगा ।”

“घात्र घनर्ष करने ही घाया हैं ।” उसने बड़े धमक स्वर में कहा “घात्र मो” मनाइया । घण्टा दिया कि नूने घनर्ष लयन को कडा-कडा कर बदा दिया । बाग्यु लोम भी बहते हैं । छोटा बग बग डेन-नरदेन ? दोनों बराबर ही हैं । धीरे धीरे मैं किसी से बहूँया भी नहीं । तुमसे मेरी लाम लय गयी है ।”

‘बदनामी का लाम तुरी मेरे धामने नहीं छूने वाला है । घाप घनर्ष घनर्ष बाइते हैं तो शिथ बग घाये हैं उनी पग लौट बाइए ।” वह गुस्से में ‘बहर कर बोली ।

“मैं घात्र लोच-अमरुवर ही घाया हैं ।”

‘जीता बाउनामिबून होकर घाये बदा । उनके होंदी पर बही प्यापी मुम्कान थी ।।

“मान बाइए, मान बाइए जीतामी मान बाइए । मुक कहेगी

को देखकर पुष्प मग करे, 'बीताबी' 'बीताबी।' लेकिन बीता ने उस बीहों में सदेटना मुक कर दिया। जब सावित्री क्या कहे ? बीता उसकी ओर रीह बढ़ा रहा था कि सावित्री ने ओर का धक्का दिया तथा पलक झपकते समीप पड़ा होंसिया उठाया और छपाक से बीता पर मार कर दिया। बीता की नाक कट गयी। वह 'थोथ माँ' कहकर सावित्री पर झपटा पर सावित्री उसके पंजे से बाहर ली।

उसके हाथ में लहू से रना हुआ था। उसका रूप विकराल और प्रचंड था। उसने मुझे में ठपकर कहा "अब आप जल बाइए बनी मैं आपकी जान से लु ली। मुझे ऐसी-वैसी लुपाई मत समझिए। मैं पतराम चौधरी की बेटी हूँ। कभी पर बनूक रख कर मतली हूँ। बाइए, चुपचाप जले बाइए। उसका साँस फूल गया था।

बीता उस ठेकसी मुक को नहीं सह सका। वह ध्माकुल-सा चुप चाप जमा गया और अपने क्षेत्र में जाकर बैठोछ हो गया। सावित्री का आनेप बोड़ी रेर में समाप्त हो गया। उसके समक्ष लून हैं लकपन हुआ पड़ा था। कटी हुमा नाक पड़ी थी। जब से उसका छारा लून जम गया। उसे चक्कर-मा घाने लगा। वह-अम् से बही पर बैठ गयी। कुछ पल वह अपने को स्वस्थ करती रही। बीरे बीरे उसने अपनी घाँसे छोली। सामने कटा नाक देखकर उसकी आत्मा काँप उठी। एक मीन बीख-नी निकली और घाँसे बोड़ी रेर के लिए पुन जन्म हो गयी।

घाँसिर वह उठी। उसने एक मंजै हुए अण्डापी की तरह लून से हमिये को साफ किया। उस नाक को कपड़े में सपेट कर अपने सेत क बाहर भरती में गाड़ धायी। आलंकित और भयभीत होकर बैठ गयी। फिर न जाने उसे क्या सूझा कि वह सीधी लूकान गति से अपने पर धा गयी।

उसका छारा धीरे पसीने से लकपन था। बार-बार उसके लसाट पर पसीना जमर आता था। रू-रू कर लौक पड़ती थी। लपटा था—
'अभी हरमुन बड़ी भीड़ के साथ उसके घर घर हुजता करेगा। लून-

विक्रान्त मूर्ति सीली थी। सो एक रात उसी डर से भयभर कप से घाबराया होकर वह खाट से उठ गये और घर की काँटेदार 'बाड़' की ओर चल पड़े।

वह थोड़ी ही दूर गये थे कि उन्हें साँप ने काट लिया। पिता जी इतने विचलित थे कि वे चिन्ता भी न पाये। वहीं पर मिर कर झबेठ हो गये। मुझ ही मरवालों को इसकी खबर लगी। बेच सपना सब हो गया। घाव में उस घटना पर सोचता हूँ तब लगता है कि वह केवल प्रचंडिरबास था। उस घटना के साम्य में सिन्धु कार्य-कारण के सम्य कुछ नहीं था। कभी बुद्धोपचार ऐसी घटनाएँ हो जाती हैं।

कुछ भी हो नाँव गानों में मुझे ही उसका हाराम बताना।

माँ की बेरुजा का कोई पार नहीं था। वह सावित्री पर अपना गुस्सा उतारती थी। हार्मोनिक लोच उसे उलझा की दृष्टि से देखते थे। घृणा भी करते थे। जब वह पानी भरने जाती तब स्त्रियाँ उसकी निंदा करती थीं और कोई-कोई पर-पीड़ादायक स्वभाव की स्त्री उसे सनुर की हारामिन तक भी कह देती थी।

दुल के सानर में वह एक टूटी नाव सी थी। सब कुछ सहकर भी उसने धर्म को नहीं छोड़ा। वह मर्यादा की बनी नाटी की तरह काम करती रहती। माँ चाहे उनसे बोले भवना न बोले उसे किसी की भी चिन्ता नहीं थी। वह किसी को कुछ नहीं कहती। शेष बेटी तो केवल अपनी तकदीर की।

वह धरमनी गेठ जाती। साँझ होते तक वह उनमें काम करती। सहयोग दिया मेरे जबरे जाई गोमी ने। वह एक मोला मासा घोर मर" छी २ था। वह रात को नेन में सोता भी था।

५. दिन दोपहर की बात है।

सावित्री गेठ में धरमनी बँधी थी। जान पड़ गया था। वह माँ से घाव लड़कर आयी थी। "घातिर दिने कीन सा धपरध विना है ? सामू भी घातिर बार-बार मुझे क्यों उस्ती-उस्ती गुलावी है। यह

घाया-बार-माम्याम क्यों ?”

माँ ने उससे कहा “तू बड़ी धरुम है। तेरे कारण मेरा सुह्राग और गोद दोनों उबड़ बसे।”

साबित्री भी बिबड़ कर बोली “मैंने इस घर में आकर मुँह की माँस भी नहीं ली। हर बड़ी कोई-न-कोई गई राइ।” कनूर कोई करे और बंड किसे ही मिले ? मैं तो सब वहाँ से उफ़ल गयी।”

‘ससुर के मरने के बाद तेरी बुबाल बड़ी पैच हो गयी है। साज नहीं आती साज से बबाल लड़ाते। गुस्सा तो ऐसा धाता है कि’ ।”

‘कि मिट्टी का लेन छिड़क कर जाता हूँ।

ऐसी मैं मूरख नहीं हूँ। तेरी कोख को मरी है। नहीं तो घर से बाहर बकर निकालती। बितनी भुलतनी है सारे घर को उबाड़ दिया।” इसर माँ रोती और उबर साबित्री।

कभी-कभी माँ अपने मुँह को पीकर रड़ जाती। क्या करती वह ? साबित्री भी सहते-सहते पक गयी थी। फिर उसकी कठोर मेहनत से भी माँ परिचित थी। वह सोचती कि यदि वह सबकुछ बसो कवी तो उसका घर निस्सन्देह उबाड़ हो जायेगा। कीम इतना काम करेगा। स्वार्थ उसे दुर्जन बना देता। फिर जाती घर को बैचकर बूढ़े की दकुबड़ करते हैं।

माँ देने उस दिन रोटी नहीं खायी। साबित्री भी भूखी बैठ बसो आयी थी। वह बड़ी दुःखी थी। उसका कलेजा दुःख से फटा था रहा था। वह बिमड़-भी पड़ी रही झोंपड़ी में। उसके आँगु पल पर के लिए भी नहीं रुक रहे थे।

तभी मा गया पीता।

जने

साबित्री को झोंपड़ी में सेटी बैचकर वह बोला “ऐसी छोपी पड़ी है जैसे छायी रात।”

“कौन ? साबित्री उबककर बैठ गयी। उसने मूट-से धुँबट निकाल लिया।

घेर होता है। 'अब हम आजाद हैं अब सड़क होगी बराबर की। अब राजपूतों को मातूम पड़ेगा कि बाटों में निरुत्तरी ताकत है।'

बीरसिंह के गानों में जब ये बातें पड़तीं तब वह मुस्करा कर कहता 'मैंने कहा न कि वह सटिया गया है। साठी बुद्धि नाठी। साठ बरस के बाद धारमी की बुद्धि भाग जाती है। धीरे इन बातों के बारे में सभी सोच करते ही हैं कि बाटों में शक्ति नहीं होती। स्वभावतः ही वे निरक्षण और निर्मल होते हैं। बरा भी कुटुम्ब और छत्र प्रपन्न नहीं रहते। इसीलिए ही तो बात की बड़ में न आकर वे घट सड़ने का सताक हो गये हैं। हरमुख हम तरह मेरी शक्ति को कम करना चाहता है। तुम मुझसे 'बीच' नहीं आ सकते तब इस मामले को जाती यता का रंग देने लग गया है। मैं सब समझता हूँ। चाहे वह कितना ही कुल की तरह भुं भुं मीठता रहे मैं घाँस नहीं बरसने वाला।'

हरमुख ने यह सुना तो तड़पकर रह गया।

वह बैठ गोपीचन्द के पास गया।

सैठ गोपीचन्द ठहरा बनिवा। जाति की अनुराई उसमें दूट-दूटकर घरी हुई थी। वह अपने छत्र-सन्तों से शब्द-शब्द मुलियों की बुद्धि निकाल लेता था। हरमुख का भी बही 'खबर' था। क्योंकि वह चाहता था कि हरमुख सारे बाटों को लेकर राजपूतों से इन बातें ताकि वह हम बीच अपनी शक्ति को मजबूत कर लेता। इसीलिए वह हरमुख को बार बार कहता 'बीचरी तुम मेरी बात की गाँठ बाँधलो एक न एक दिन छोटे टाकुर तुम पर हमला करेगा ही। तुम बाटों को टप्पा मत होने दो।' धीरे वह हरमुख की पीठ पकपकाता रहता।

एक दिन वह उसे राह में गया।

राह में पाकर उसने कहा 'बीचरी! मैं तुम्हें एक बात का यकीन दिलाता चाहता हूँ कि मैं केवल तुम्हारा ही हूँ। इन बार मुझे बुरा उम्मीद है कि 'बीचत-टिफट' मुझे ही मिलेगा। 'धीरे मेरा बीया मुझा बिना छोटे टाकुर में होगा। यदि तुम मजबूत रहे तो मैं इसरी बमानत

बन्ध करवा के छोड़ेंवा । राजपुत्र यहाँ घोर सोनपुर में ही अधिक हैं बाकी बाँवों में बाट घोर बनिये । मुझे बाटों का समर्पण मिलना चाहिए । मैं इन्हें बड़ा जान पहुँचाऊँगा ।

हरमुख ने विश्वास के साथ कहा “सैठजी आप मेरी घोर से निश्चित रहिए । मैं आपके लिए जान बका हुआ ।

‘मुझे भी कम मत समझना । मोपीचन्द ने पर्वत के मूठके के साथ सम्मीर होकर कहा “तुम मुझे बह रहे ब न कि कोई तथा बंधा बताओ । मैं तुम्हारे लिए एक बड़ी कोठी खरीद रहा हूँ । उस कोठी का भाड़ा पूरे दो सौ रुपए पाएँगे । मैं उस कोठी को तुम्हारे नाम कर दूँगा । तुमसे पाठ पाने प्रति सँकड़ा ब्याज लूँगा । हाँसाकि तुमसे ब्याज लेना मैं बख्शा नहीं समझता किन्तु न लूँगा तो तुम्हारी मेरी बोस्ती में कर्कषा आयेगा । तुम मेरा बहसान मानोये और बहसानमन्त्र को नजर नीची करनी ही पड़ती है । इसलिये ही मैं तुमसे ब्याज ले रहा हूँ । वैसे मैं बार रुपए प्रति सँकड़ा ब्याज लेता हूँ ।

“बहु कोठी किसने की है ।”

“पन्नीस हजार की ।” सैठ गुरन्त बोला और सिबरेट बसाने लगा । हरमुख कुछ सम्मीर हो गया था । सैठ सिबरेट का कस बीच कर बोला “कोठी तुम्हारे नाम से खरीदूँगा और वह मुझसे ‘पिरबी’ रहेगी । अपना ब्याज काटकर दोब रुपए हर महीने तुम्हें दे दूँगा । धीरे-धीरे तुम उस कोठी को बड़ाना और मेरे रुपये चुकाना । सब कहता हूँ तुम्हें उस कोठी का हजार रुपए तक किराया था सचता है ।” वह बहुत ही विनम्र हो गया “और मैं तुम्हारे लिए क्या कर लूँगा ।”

हरमुख बहबह हो गया । अयाधिनूत ना होता हुआ वह बोला “सैठ मैंने तुमचन्द जी को एनदम बटा लिया है । वैसे वह समझी घोर सच्चा है । पर जिना मन्गी है न वह बड़ा लाभी है । वह मेरे बाँव में नहीं था सच्चा । बड़ा मोहमा है ।”

“वह इच्छा बनिया ।”

परायी होगी । पुलिस चापेगी । उसे बचकर-जा घाने लगा । वह घेरी
बाहर निशान-सी पड़ गयी । उसे लगा कि वह निर्जीव हो जायेगी ।

वह रुब घायी—सास को यह पता ही नहीं चला । वह बार-बार
बाहर की ओर देखती । उसका कसेबा धड़क उठता । हाय राम ! क्या
होपा ? वह ईश्वर को हाथ जोड़ती । कभी-कभी वह मोच बटनी कि
उमने हँसिए को बाक किया कि नहीं ? तब मय भून-मा उमकी मन-मन
ही दौड़ पड़ता । वह चोर की तरह मुँह छुपाए साँफ रुक बठी रही ।

पाँच बर में बीठा के भाक कटने की खबर फैल गयी । उसे घहर के
परनाम में भर्ती करवाया गया । सेठिन बीठा के भाक कटने की खबर
म प्रकार पाँच में फैली कि बीठा रोम में बैठा था कि पचानक मुचकों
को बपड़ों से छुपाये चार सटन गेज में चुमे घीर उसे पीटने लय । बीठा
के कड़ा मुचाबिना दिया । पर तब से दो मिट्टी के भी बुरे होते हैं ।
घीर के जिवा चार थे । घागिर बीठा बेहोश होपया । बहोशों में के चारों
सटन उमकी भाक बाट कर से गय । लोगों का यह भी अनुमान था कि
चारों घागमी गीरासिंह के थे । क्योंकि घीरासिंह को जुलाब में टिकट
दिसाने में यन् कोर् बाधक बना है तो हरमुन ने घपन मित्र घट गयी
रुन को बाधन टिकट दिसाने की पूरी बाध कर सी । इसी बाध का गीरा
सिंह ने हरमुन से यह बदला लिया है ।

गाबिरी जब महमती दरती नीचे उतरी घीर बाहर गयी तो उनकी
महोमिन ने उसे यह खबर दी । उसे इस नाटकीय परिवर्तन पर बड़ा
आश्चर्य हुआ । घागिर बीठा ने यह कहाणी क्यों मड़ी ? उनके पीछ
बोन-मा रहस्य हो सकता है । बल्लुन, वह इन्सान का पीरर था । मरे
की मर्दानगी यह बगई मान नहीं कर सकती कि उसे किसी घोरत ने
मारा है उसीन लिया है ।

बेचारी गाबिरी को इस घटना ने चानी बर्य मिला । बिन्दु दाँव
का बागावरण यम हो उठा । हरमन ने घीरासिंह को मन्जार दिया ।
घागिर हरमुन भी चौकरी था । उनने चनुरा से नाम लिया । उनने

इस बार प्रत्येक बीबरी को जातीयता के नाम पर समारा । बाताबरण पहरीला होता था । एक बार सरवर पर झड़का होते-होते था । गौरासिंह ने धीरे-धीरे भर लिया । उसने स्वयं हरमुख को समझाया "मैं राजपूत हूँ चाहे धान हमारी बाँसें धान-सम्मी लाने के काम मसे ही जाती हों चाहे हमारी तलवारें धर की घोसा मसे ही बढ़ाती हों चाहे हमारा धोर धीरे धीरे मुरा की माबकता में मसे ही जो गया हो पर हमारा धर्म धीरे धीरे धमी नहीं मिया है । मैं धान का बढसा बेटे स महीं से सम्मता । बीठा मेरे बेटे सम्मता की तरह है ।"

गौरासिंह इतना कह कर चला गया ।

बीब म बीबरी बन में इस बात को इस तरह रखनी मुक की "राजपूतों के धरके तुझा धिए हैं बीबरियो में । धन के धवन धान धीरे धपराध पर पही काम रहे हैं । एक बरु धा कि धीरासिंह किसी इस्मान को इस्मान नहीं सम्मता धा धीरे धान बह हमसे इस तरह धर रहा है धंसे धुहा बिल्सी से धरता है ।"

धेपता की धान धैमन मगी ।

गौरासिंह ने राजपूतों को नहीं मझकामा । बह इस बार बडा तदस्य रहा । धनने धीन धारण कर लिया । क्योंकि बह धानता धा कि उसम धधका कोई धान नहीं है । बह ध्यर्ष इसमें क्यों धसधे ?

/ धन कमी धोटे ठाकुर धानार से गुजरते से तभी कोई ध्यंय से मुककरा कर कहता "धोटे ठाकुर न जाने क्यों धीगी बिल्सी बन मने हैं । इस बार धीधध में धेर को धरा धिया ।"

गौरासिंह ने कोई धिरीध नहीं किया । इस मामसे मैं बह बिल्मुम धीधीधारी बन गया । एधधम धात धीरे मध्मीर । धीरे हरमुख धोर धाये धाँप की तरह धँ-धँ कर रहा धा । बीबरियो धा उसे धमर्धन मया धिस मया धागी धसमें धैधनान-ता धन धा मया । बह धही नहीं धी धाता बही धपनी धीरे धपने धाटों की धक्ति की धाधी बधात करता धा । बहता "धहने राजपूतों का राग्य धा । धपने राग्य में धुता धी

रही। उसने अपनी नाक को पकड़कर हिनाया। वह हरबल गौरासिंह को बिचित्र मनी। वह उसका आवाज नहीं समझ पाया। वह पुन बोला "आप मेरी बात को हलके रूप से मत सीझिए, मैं आपको सब कह रहा हूँ मुझे राह नहीं बझानी है। मुझे व्यर्थ की मूल-शराबी में जरा भी मन्ना नहीं माना है।"

"मैं हरमुन को समझा दूँगा। पर छोटे टाडुर आप समझे सम्मकर रहियेगा। वह अपने आरतीय संघटन को बेवकूफ समझा हो गया है। वह आरतीयता का जहर कभी न कभी देगा जो स बूझता। देगा न विमारा कर देगा। इन्सान को इन्सान के सह का प्यार बना देगा।

गौरासिंह अपने हाथ को हिनाकर बोला मैं राह नहीं करना चाहता, किन्तु कोई मेरे पीछे पर चढ़ने की कैप्ट करेगा तब मैं कुछ नहीं बँटूँगा। मेरे भी दो हाथ हैं समझ।"

गौरासिंह अपनी मूर्खों पर ठाक बैकर जाता गया। उन मठ की बात तीर-सी मनी। बाहिर वह किम्वदन्त है? इसलिए वह बाद में पाँव के बड़े-बूटों के पास नहीं गया। फिर उसने किसी न भा बिनता प्रार्थना नहीं की। वह अपने जेरे में आकर बैठ गया कि जकर कोई अनम होने जाना है। इसलिए उसने अपनी सम्पूरा टीक कर ली।

मठ में उन दिन अपना अविनय बड़ा ही उत्तम किया। वह पाँव के प्रत्येक बड़े-बूटे के पास गया। उसने उसने प्रार्थना की कि वह हरमुन और छोटे टाडुर का आग्रह में निपटारा करा दे। उसमें सम्मोक्षा करा दे। दो-बार बड़े-बूट हरमुन और गौरासिंह के पास दर भी पर सब दोनों सम्मोक्षा के लिए तैयार नहीं थे।

हरमुन ने स्पष्ट दण्डों में कहा "उनके बंटे में मेरे मठाये को पीना है। मेरे पाँव के सामने उनकी पगड़ी चढ़ान कर बना दया। इस आग्रह को मैं नहीं सह सकता।

गौरासिंह को समझावने के लिए तैयार किया दया। मुनेमान ने दया प्रस्ताव रखा।

‘माफ़ी माँगने से लयता क्या है ? कहावत है कि ‘अकटे की माफ़-टी पीरह जैयली पीर बधी। गीरासिंह ने अपने बेटे को कह कर हँस रखा है। वह फ़िजगी सुन्दर बाल-बस रहा है। हाथी को हँस बल कुत्ते को कह गीक।’

सुनेमान गीरासिंह के पास गया। गीरासिंह अपनी बेंच में बैठ आ हुक्का बुझ-बुझ रहा था। सुनेमान को देखते ही वह हुक्के का त्मा कटा खींच कर बोला ‘ज्यों सुनेमान कैसे धाना हुआ ?’

‘मैं एक प्रार्थना करने आया हूँ। चाप ही कुछ नरम हो जाइये। छोटी-छोटी बातें कमी बढ़ा बंध करा देती हैं। बून की नदियाँ बहाती हैं।’

‘बून बहाना मझ नहीं है सुनेमान !’ ज़ुगा से मुँह फ़िफ़ा कर रहा गीरासिंह ने ‘महार्ज नहीं कर सकता है जिसने अपने सिर पर कफल नाँव रखा हो। मैं हरमुख को जानता हूँ। वह बही हरमुख है न जो मैं अपनी हथेली पर बूकता था। जिसे मेरे तसुबे छहलाने से फ़ुलत ही नहीं मिलती थी। बल की बात है। फिर भी मेरा बल इतना बराब नहीं आया है कि कोई मेरी पनड़ो आमाजी से उछाल कर जला जाय। अच्छा यही है सुनेमान तुम जाकर उसे समझा दो बर्नो मैं ककर का हवाब पत्थर से दूँगा। वह अपने आपको क्या समझता है। हूँ ! इस पर मैं सुनेमान उसे समझता रहा पर गीरासिंह नहीं माना। उसने कहा कि कनूर बोनो का बराबर है। उसके मर्जीने ने वहूने धम्पू को छेड़ा वन देरे बन्ने ने उसे पीटा। धन मैं किमी तरह का समझौता नहीं कर सकता। मेन-मिलाप करा सकती हैं—बराबरी है।

सोठ ने मर्जी के सामने हरमुख को समझाया पर उसकी धान्तरिक अच्छा यही थी कि हरमुख और गीरासिंह आपस में लड़कर धाकड़िन हो गये। वह सज्जी बंग से सज्जी समझता रहा और खींच होते-होते वह हरमुख के बलों में बहुर ज़ेन कर पड़र जाता गया।

गीब का सारा बातावरण उस दिन आर्थकाओं से बरा था। बही

‘तभी तो डर लगता है। आपको यह कहावत याद नहीं—‘बामण कुत्ता बलिया बात देल पुराय।’ बीच में ही हरमुख बोला ‘कहीं यह ही आपका ब्रह्माक्षर न कर दे।’

‘न-न-न।’ सैठ व्यग्रता से बोला ‘मैं इसे शूब पहचानता हूँ। उसे बामण बलिया नाट राजपूत मोबी भाई किसी से भी सेना-सेना नहीं है। उसे बल सेना है, केवल बज्रकमहारम से। उसे इपया चाहिए, बबल इपया। उसने कांग्रेस का बोला ही घोड़ा है अपने व्यापार को बढ़ाने के लिए। मैं उसे इपया देकर पटा नू वा।’

‘घोर सुमनचम्प जो को मैं।’

लेकिन दूसरे दिन ही यह सुमनचम्प की से मिला घोर बात ही बात में उनके मूँह से यह निकल गया कि शार्ङ्गदयान का प्यान चौपटी हरमुख की घोर भी जाने सबा है। उन्होंने घावे कहा ‘मैं आपको धँसे में नहीं रन सकता सेठजी। हरमुख के बीतन को प्यादा सम्भावना है। मैं चौपटी मासापम से मिला था। यह किसी चौपटी को ही टिक्ट मिला जाने की धपेया रखता है। घोर यह खेब अधिकतर पारों या राजपूतों का बहुमत लिये हुए हैं। मैंने मैं आपका विरोध नहीं करूँगा।’

‘मैं केवल आपसे प्रार्थना कर सकता हूँ। आज आपकी मेरे पर पार्टी न घाना है।’

उस दिन सैठ के यहाँ पार्टी का आयोजन था।

बाँधस के बरिष्ठ नेता एवं बाहर के प्रतिष्ठित नागरिक उसमें उपस्थित थे। पार्टी के वातावरण को देखकर सब रहा था कि सभी साग सैठ के पक्ष में हैं घोर उसे टिक्ट मिला जाने की सम्भावना है। सैठ ने यह भी आश्वासन दिया कि वह चुनाव फंड में दलीम हजार इपया बाँधस पार्टी को देगा। उसने आज यह भी डके की ओट नहीं कि वह प्राजादी के पहले भी कांग्रेस की पुने बप से मदद करता था। क्यों हरमुख स्वामी नरोत्तम को मैंने धपबी हनेमी में पुताया था कि नहीं? ‘घोर आज मैं अभी पार्टी को अपने रेशा पर शासन करने देखता हूँ तब सब आगायी

घोर बुधियों से भर आता है।" फिर क्या वा स्वर्ग बिना मन्त्री ने सैठ को एकांत में ले जाकर कहा, "भाप निश्चित रहिए सैठ जी।"

धरे ही धापका वह नीकर धंकर है न उसे मने २२१) अपने आपके व्यवहार की सहायता के रूप में ले लिए हैं।"

'मुझे मान्य है पर यह बहुत कम है।'

"क्यों?" वे- बिनाबिनाकर हँस पड़ा 'धरे भाई साहब यह कुछ है ही नहीं। बिना सहायता तो मैं आपको बाद में दूँगा।"

रात हो गई। सभी सोव चले गए। शांति छा गई।

सैठ जी हरमुख मंत्रीप्रापूर्वक धकेले बातचीत करते रहे। सैठ ने हरमुख की बुद्धि सुरक्षित निकाश की। उसने उसे वह मरोछा रिता बिना नीचसिंह तुम्हें पीटने की कोशिश कर रहा है मेरी समझ में उसे तुम पहले ही धर-बोध हो।

हरमुख ने कहा "कैसे बोध" वह परवर की दैवमी (सूति) बन गया है। बिना ही कुछ कहो पर उसके कारों पर वृ भी नहीं ऐसी है।"

'बोध तो मने तो तुम्हें सही स्थिति बता दी है। सोच फिर ऊँचा करे हमसे पहले ही उसे काट दोये तो भाव में रहोवे।"

वरप्रसन्न सैठ एक तीर में से निधाने करना चाहता था। वह चाहता था कि हरमुख घोर नीचसिंह आपस में लड़ते हो वह घोर धातिमान हो जायगा। उन दोनों का पक्ष ही बतका उत्पन्न था। इसलिए वह उन दोनों को बहका रहा था।

दुर्बोध समझिए कि उसी दिन रात्रि के अंधकार मन्दिर के मेले में हरमुख के भतीजे ने श्रीरामसिंह के मेले में दौड़वाणी कर दी। फिर क्या था? जवाब जून उबल गया जीन उनसे उसकी लूथ पिटाई कर दी।

रात्रि में यह बात हुआ की तरह फैल गई।

श्रीरामसिंह गुरमुख सैठ के पास आया और उससे उससे मार्गना की कि वह लक्ष्मी की समझा है। मुझे बात बहाने में नसई बिलबन्नी नहीं है।

उसके इस अनुरोध पर सैठ के होंठों पर हलकी-भूटित मुस्कान नाच

उसकी घाँसों घोर हृदय में डर की एक लकीर-सी बिख गयी । वहू के प्रति प्रत्यक्ष भी हृष्टा घोर वैमनस्य को भूतकर वह संछिन्न स्वर में बोली, "हरगुप्त ने बकर कोई गड़बड़ की है । आज दिन भर गाँव की मुपाइयाँ डर रही थीं । राम ही जब हम बाँध में घाबित करा सकता है । भाड़ में जाय—यह जुगाब-जुगाब । घादमी-से घादमी का बैर क्या दिया ।

साबित्री चुप रही ।

वह बीमार का सहारा लिए सोच रही थी कि वह जाकर बीठा को पीटे घोर चीककर बहे कि यह झूठा है भक्कार है बुराचारी है । इनकी नाक छोटे ठाकुर के आसक्तियों ने नहीं घेने काटी है । क्योंकि यह मेरी इम्कन लूटने आया था । वह बहुत उत्तेजित हो गयी । उसकी घाँसों व घाँसू धा बदे । उसे मौन देखकर माँ बोली, "वहू ! आज मे होते तो वह घनब नहीं होता ।"

साबित्री कुछ नहीं बोली । वह फटक-फटक सी डनी । रोड़ी-रोड़ी बोली "मैं बहुत ही निरमायी हूँ । सामूची आज हम पर किसी का भी साया नहीं रहा ।"

माँ उसे चुनचुनी समझती थी । बात-बात में तानें देती थी पर उसे पचाहूँ गुन में ठकवै-तिमकड़े बेख उसका हृदय भी अछोर व्यासा से विरोहित ही क्या । उसने उसे भीमे से जवा तिया घोर वह निःशब्द बार बरमाने लगी ।

घोर घोर भयावह हो गया ।

हरगुप्त घोर उसके पगड़-बीस छाबी गौरासिंह के घर पर अचानक चढ़ बैठे । चुप पटरन सीप घटनास्थल की घोर लरके । गौरासिंह भी लगे में घायी घाजन को देखकर चूप बैठ गयी । वह गुन उसका बटा चम्पू घोर उसके दो जीकर धा भिड़े । गुन कर साक्षियों का प्रयोग हुआ ।

धमपेरा ।

धीर बुधियों से भर जाता है।" फिर क्या वा स्वयं जिज्ञा मन्त्री ने सेठ को एकांत में ले जाकर कहा, "आप विविधत रहिए सेठ जी।"

अरे हाँ आपका वह नीकर छंकर है न उसे मैंने २११) रुपये आपके धनधार की महामता के रूप में दे दिए हैं।"

"मुझे मायूस है पर वह बहुत कम है।"

"कम ! सेठ विनम्रतापूर्वक हँस पड़ा "अरे माई साहब यह कुछ है ही नहीं। विशेष सहायता तो मैं आपको बाब में दूँगा।"

पट हो गई। सची सोप चले गए। छाँटि छा गई।

सेठ धीर हरमुख समीरतापूर्वक घड़ेसे बातचीत करते रहे। सेठ के हरमुख की बुद्धि गुरन्त विकास भी। उसने उसे वह मरोसा दिना दिना "गीरातिह तुम्हें पीटने की कोशिस कर रहा है मेरी समझ में उसे तुम पहले ही बर-बखोष दो।

हरमुख ने कहा "कैसे बखोष ? वह पत्थर की देवली (मूर्ति) बन गया है। दिना ही कुछ बड़ो पर उसके बानों बर जूँ भी नहीं रेंवती है।"

"तोच तो मैंने तो तुम्हें सही स्थिति बता दी है। साँप मिर ऊँचा करे हमने पहले ही उसे काट रोके तो लाभ में रहोये।"

बरमसल सेठ एक तीर में बो जिज्ञास करना चाहता था। वह चाहता था कि हरमुख धीर नीरसिह सावत ने लड़ते तो वह धीर छल्लवान हो जाना। उन दोनों का पतन ही उसका उत्पान था। इसलिए वह उन दोनों को भड़का रहा था।

बुधोंप समझिए कि उसी दिन गाँव के भैरवाथ मन्दिर के मेल में हरमुख के भतीजे ने गीरातिह के भेटे से सेइबानी कर दी। फिर क्या था ? प्रधान गुरू जबस गया धीर उसने समझी शूब पिटाई कर दी।

गाँव में यह बात हवा की तरह फैल गई।

गीरातिह गुरन्त सेठ के पास आया धीर उसने उससे प्रार्थना की कि वह उसी को समझा है। मुझे बात बड़ाने में कतई दिलचस्पी नहीं है।

उसके इस अनुरोध पर सेठ के होंटों पर हलकी-बुदिल मुस्काय नाच

उसकी धाँसों धीरे हृदय में डर की एक लकीर-सी खिच गयी । वह के प्रति दमस्त की कृपा और बेमनस्य को सुभकर वह खिन्न स्वर में बोली "हरमुख ने जरूर कोई यड़बड़ की है । आज दिन भर गाँव की मुनाहरी डर रही थीं । राम ही जब इन गाँव में साम्प्रि कर सकता है । माह में जाय—यह मुनाह-मुनाह । माहमी-मे-माहमी का रँगर करा दिया ।"

साबित्री चुप रही ।

वह बीमार का सहारा लिए सोच रही थी कि वह जाकर बीजा को पीछे छोड़ बोककर नहे कि यह मूटा है मक्कर है दुपचारी है । इसकी माक छोटे टाकुर के धारमियों ने नहीं मीने काटी है । क्योंकि यह मेरी इज्जत नूटने धाया था । वह बहुत उछेजित हो गयी । उसकी धाँसों में धाँसू धा गये । उसे मौन बैठकर मौ बोली "बहू । आज के होते तो यह धनर्ष नहीं होता ।"

साबित्री चुप नहीं बोली । वह छक-छक रो पड़ी । रोती-रोती बोली "मैं बहुत ही गिरमायी हूँ सामुजी आज हम पर किसी का भी माया नहीं रहा ।"

पौ उसे चुनछली समझती थी । बाठ-बाठ में लाने देती थी पर उसे धयाह चुन में छकपटे-तिमकटे देख उसका हृदय भी धधोर धवा से छिछाई हो गया । उसने उसे मौने से मया लिया और वह निश्चय धार बरसाने लगी ।

मोर मोर बयाबड़ हो गया ।

हरमुख और उसके पगल-बीम साथी गौरासिंह के घर पर धनमक बस बैठे । चुप टटल नीप बटनास्वय की धीरे लारके । गौरासिंह की पने में धापी धाफल को देखकर चुप बैठ गयी । वह चुप उठता बेटा सामु और उसके दो मौकर धा बिडे । चुप कर लालियों का धनैय हुआ ।

धधेय ।

घोर घोर साठियों की घाबाराह ।

पाँव के कुछ लोब जो घटना स्वप्न की घोर सपक रहे थे सगके हाव में साजतेनें थी ।

साबिर हरमुख के घाबमियों ने धंभू को बेर लिया । धंभू पर के घाबमी इस तरह टूट पड़े जिस तरह भूखे बान कमूतर पर टूटते हैं ।

धंभू जोर से चीखा "मुझे बचाओ मुझे बचाओ ।

बीरसिंह का जून लीन उठा । वह खोर से बहाड़ा "साठियाँ रोके दो हरमुख । मैं बन्धूक बसाता हूँ ।"

पर साठियाँ नहीं बकी ।

बीरसिंह ने एक बार पड़ने बैठे की चीख सुनी घोर सतने बाँय से बन्धूक धगधरे में जापती हुई काया पर छोड़ दी ।

हरमुख का जखैरा भाई डेर हो गया ।

"हरमुख ! छोड़ दो मेरे बेटे को । मैं जून बाधूँगा ।"

तभी एक साठी बीरसिंह के छिर पर पड़ी ।

बैलते-बैलते भीड़ टाकुर पर घूट पड़ी । पाँव के कुछ लोब स्वप्न से इस जून बराकी को ककला मरी हट्टि से बैल रहे थे ।

मुसैमान कह रहा था "हमाध 'मानसा (इस्मानिस्त) बूब ममा । ऐसा कर्मीनापन मैंने पहले नहीं देखा । कौन जाकर रोके इन जानवरों को ।

तभी पुनित इन्स्पेक्टर कई विप्राधियों के साथ आ गया । घोर सतने हवा में क्यपर किये । जन्मोने बकाबक विरप्यारिया करनी शुरू की ।

तभी सेठ भी आ गया ।

जमने घाटे ही भीड़ पर प्रभाव जमाना शुरू किया "मैंने इन दोनों को बहुत समझाया पर इनके छिर पर जून तबार हो गया था ।"

टाकुर का छिर फट गया । बरती लहुलुहाण हो गयी ।

इस निरावार सड़ाई में बीरसिंह घोर सतना जखैरा भाई मर

की स्त्रियों में भी उस दिन इस सड़ाई की बड़ी चर्चा थी।

कुछ दरपोक घाबरी घाम सौंभ पड़ते ही गीदकों की तरह अपने अपने चरों में भुम गये। उन्होंने अपने आप से कहा कि तीन बूसरों की राह अपने गले बांधे ?

इसर साबित्री की बधा बड़ी घोजनीय थी। वह अपने आपको बार बार यह कहती थी कि यह सब जमक कारण ही हो रहा है। वह अगर अपनी अकाल के ताला नहीं लगाती और सीमा टोंक-टोंक कर यह कहती रखती इन दुराचारी की नाक मैंने काटी है तो यह भयानक मौजबत यहाँ तक पहुँचती ही नहीं। किन्तु अब क्या हो सकता है ? बाग लगने पर कूँबा सोचना सरासर भूषणता है।

उसने पठकर चाटों धोर देखा। असीम शक्ति छापी हुई थी। ऐसी शक्ति जो तुच्छन घाने के पड़ने छाती है। जो तुच्छन के आयमन का सदेगा देती है।

साबित्री ने सोचा "हाँ, लक्ष्मण तुच्छन धायेगा। बम्बूक की मोतियों का तुच्छन। लून से बना हुआ तुच्छन। उसके संग भय में भुर-भुरी छूट गयी। पेट में दर होने लगा। वह एक अज्ञात धातुक न सिहर उठी। पेट का दर्द ? कहीं पेट का गर्भ उसके अन्तर्गत के भय से फिर न आय ? वह भय भीत सी सास के पास पहुँची।

मान गहरी नींद में सोयी हुई थी। उसने हाथ से हिलाकर उठाया। उसने धमरे में ही पूरा पट त्रिजाल रखा था। उसने बबराकर बताया कि उसके पेट में दर्द है।

माँ समक कर पठ बीटी "पेट में दर है।"

केवल सिर हिलाकर बतलाया "हाँ।"

"कैसे हुआ ?"

उमन दीवार की घाड़ में रगि थी। वह "न तरह बोसो जमे वह जो बह रही है वह दीवार को बह रही है" आज मुझे दर लग रहा है। उसके प मेरा भी बबराता है।

“फिर नीचे आ जा । मेरे पास सो जा ।” धीरे धीरे अपने आप वह बढ़बढ़ाती पेट में बर्त पैदा न कर, इस में मेरे बंध का खयाल है ।” पर साबित्री ने सोच रखा था कि सास सदा की तरह जलजुग कर उसे ताने बैठी पर घाज उसमें उसमें स्नेह पाया । अपनाए पाया ।

हजार पैरी माँ पृष्ठा है भरी हो । हजार माँ साबित्री से लड़ती हो । उसे कोसती हो । उसे बला-बुरा सुनाती हो पर नहीं उसके बंध की रक्षा का प्रस्न थाया वहाँ माँ उसके लिए बाबली हो जाती । सख्त भर में बंध उस केकर सोम्य तक को बुझा जाती ।

माँ ने साबित्री को अपने पास बुला लिया । उसके सामीप्य ने साबित्री के लिए भयमोचन का काम किया । किन्तु उस दिन उसे मेरी माँ कुछ थायी । वह उस में डेर तक जानू बढ़ाती रही । अपने आपको समझी कहती रही । उसे विश्वास था कि धब में कभी नहीं सौदूया धीरे उसे सारी उन्न एक मुहामिन विषया का जीवन बिताना पड़ेगा । तब उसके मायस पटल कर हजारे प्यार धीरे मनुहार के रंग बिरंगे चित्र खिलने लगे । वह उन्हें धाव करके धीरे की धबा-ध्याकुल हो गयी । उनके धंग-धन में उम्मादित पीड़ा का संचार हो गया ।

तभी माँ में जोर का हो-बुल्ला मचा ।

लोनों की नीचे टूट गयी । शेष सब लगे । पंथा भयानक धीरे माँ में इसके बहने नहीं हुआ था । माल मायस्थित हो गए ।

धीरे बहानक होता गया । लोनों की यह समझी डेर नहीं लगी कि बात क्या है ? क्योंकि आज मारे दिन यही वर्षा चल रही थी कि छोटे ठाकुर के कुंवर ने यह काम धण्डा नहीं किया । पार जाये हुए हरगुण को छोड़ा है । कोर-न-कोर धनिय एक दो दिन में होती ही ।

साबित्री के मन में जो धायाका थी वह समय में बरतने लगी । उनसे भयभीत हजर में माँ से कहा “बकर कोई धनर्ष होने वाला है । मुझे बड़ा डर लग रहा है । इतना हल्ला-बुल्ला ?”

माँ ने सीपा बताया ।

मया । योराभिह के हाथ में सभी भी बन्दूक पड़ी थी । गीब बाते घाँठ फिट थे । प्रभु को याद कर रहे थे । सभी कह रहे थे कि कैसा बमाना था मया है । आदमी-आदमी के झुल का प्यासा हो गया है । पुलिस ने सड़को पकड़ लिया है ।

तब भी साबिजी घर से बाहर नहीं निकली । कमका रोम रोम बाँप रहा था । कमका सारा धरीर पनीन से लपपप हो गया । सास थोड़ी बैर के लिए बाहर बनी बनी थी । वह गुरगुर यह सबर लेकर आयी "बहू ! मजब हो गया छोटे टाकुर घर मये ।"

"हूँ !"

"हाँ धीर एक बीबरी भी ।"

"कौन ?"

"मुन्नु ।"

"हाय राम बड़ा मजब हो गया । वो छोटे-छोटे बच्चे । मुन्नु तो सिर्फ २२ बरस का ही था । मौना भी बार बप पहले हुए था ।"

तभी मुन्नु की माँ बहाइली बिपाइली धीर घरना फिर पीटनी हुई घर के सामे से बुझरी "हाय मैं मुट मयी हाय मुझे पानी देने जाता कहाँ बना गया ? ओ रे हरमुन तेरा सरमाना हो ।"

कई स्थिती उमे पकड़े हुए थीं । वह बीर-बीर से घरना सीना धीर फिर पीट रही थी ।

बटन ही बसीना हट्य था । साबिजी उमे देखकर पून्-पून् कर रो पड़ी । माँ को संता हो गयी । उमे ताँत्वना देनी हुई बह पुप बँटी "घरि पू रन लख छानी चढ़-जाड़ कर क्यों रोनी है ? मुन्नु तेरा तो पुप नहीं मयना है ?"

बह मजम मयी । उमने रोना दबादक बन्द कर दिया । लेकिन कमका आवाज उन बह रही थी "यह सब मुन्नाई कारण हुआ । इसकी जिम्मेदार तुम हो ।" धीर बह फिर घर घर आयी ।

दाँव में राजघर दीड़ पून होती रही । रोना धीर बरबना रोनों की

निमित्त आवाजें हुआ मैं तीर रही थीं। गुना बा रहा था—दोनों दल फिर से तैयारियाँ कर रहे हैं।

सेठ पोसीचन्ग ने दोनों की सम्झना और सबसे प्रार्थना की कि वे कानून को अपने हाथों में मत लें। रात भर वह दोनों दलों की सहानुभूति प्राप्त करता रहा।

उसकी बीड़-बूच, उसकी छटस्पता उसकी बातों को सुनकर कोई भी वह अनुमान नहीं लगा सकता था कि वह सीधा-सादा इन्सान ही 'काचर' का बीज है। स्नेहायु के साथ वह पूर्वीवासी व्यवस्था का बीड़ा भी सोच रहा था कि अब उसको टिकट मिलना निश्चित है। वह एम० एम० ए० बनेगा। फिर मिनिस्टर। उसकी सुपुत्रार्ण उस सहस्रमुहान बरती पर सबलें लगीं।

वह सबको हाव भोड़ रहा था। समझा रहा था। लड़ो मत। लड़ना दुष्ट है। पीपी भी ने कहा है कि हिंसा अनुप्यता को खाम कर देती है। इन्सान को इन्सान से प्यार करना चाहिए।

और इन बापी बरछन बातों की वह मैं उसकी दुपछा बतती बा रही थी—जमानक हिंसा के हम में।

X

X

X

सावित्री तीन दिन के बाद दुली बन मुन्नु की बह के बात मयी ।
 वह तीन दिन से मुंह में छत्र का बाना भी नहीं डाल रही थी । रोते रोते
 छत्रकी छोटें सूज मयी थीं । बेहरे का रंग उड़ गया था । उसके मूछे
 सूखे मुन को देखकर लगता था कि वह कई रोज से बीमार है ।

सावित्री से वह पिछले दिनों पनबट पर कई बार मिली थी ।
 सावित्री को उसका हँसमुख-स्वभाव बहुत प्यारा लगता था । मुन्नु की
 बहू 'मन्नी' जब कभी बात करती थी तब चिड़िया की तरह बहकती थी ।
 हान-परिहास उसके गण्ड-शर में घरा रहता था ।

सावित्री को देखकर उसका रसक बाँध टूट पड़ा । वह प्रसन्न पड़ी ।
 सावित्री ने उसे अपने सीने से लगा लिया । उसे हम तरह दुलारती रही
 दिन तरह कोई माँ अपनी नन्ही कसी ली बच्ची को दुलारती है ।

"बीरज रस बहुत । बिबि का लेग घबिह है । उसके मामले ईस्वर
 की भी नहीं बलनी । भयवान भी कुम्भ को भी भोल के तीर से बरना
 पड़ा । बाँव पाँदरों को शिवालम में जाकर बलना पड़ा राम को बनवास
 जाना पड़ा और सीता को बोली बलना पड़ा । भाग्य वा रिता कोई नहीं
 पड़ मचा है ।"

"मैं क्या बकूँ बहुत मैं कासी पार पूव गयी । मर के बिना स्त्री
 की कोई बह नहीं ।"

"तू टीक बहती है बहुत कि मर के बिना तिरिया की कोई
 बह नहीं है । उनका जीवन अशरय हो जाता है । उसे कोई प्रेम नहीं
 करता । उसने कोई दो भोले बोल नहीं बोलाता । वह बैचाटी बिना
 मानिष की माय की तरह अशरय हो जाती है ।" और मित्री की बजार

ध्वजा में सावित्री की धवाह बेचना मिल गयी। ठुठुक ठुठ ठुठुक पाँव बहने लगे।

मित्री अपनी भाँसें खींचती हुई बोली "यह राम मारा हरमुख रात दिन घाटा घोर कहता गुन्नु। तू मेरा छोटा भाई है। इस बार हमने ठाकुर के पीठ चट्ट कर दिखे तो मैं जाटों का राज कायम कर दूँगा। तुझे नहरी इलाके में जमीन दिलाऊँगा। वहाँ की जमीन घोना जमजती है। 'पर कौन जाने बहल कि मेरा बैठ उनके लिए 'कास' का कुत था। मुझे यदि वह मासूम पड़ जाता कि इसके पैर में इतनी सुरिबाँ कटरनिबाँ हैं तो मैं उसे अपने द्वार की नहीं बहने देती। हाव। मैं मृत गयी। हाव मैं पीठे की मर गयी।"

सावित्री ने उसे हिम्मत बँबायी। मित्री उसकी मोर में मुँह छुपाये सिखरती रही।

सावित्री सोचती रही "इसका पति इसे सदा सदा के लिए छोड़कर चला गया और मेरा पति अब बीटेया मैं नहीं जानती। बीटेया भी ना नहीं?" मटके के साथ उसकी बिचारबाधा पर बँक लगे गया। वह सिहर पड़ी। मन ही मन बड़बड़ा पड़ी 'नहीं वह धायवे लेकर धायवे। मैं उनका दर्शन किये बिना नहीं मर सकती। मेरे प्राण सभी के चरणों में निकलेंगे। मैं उनसे लगे पाँवूनी। कहूँगी कि धन धायको जप भी नहीं सताऊँगी।"

वह फिर रो पड़ी। मित्री ने मुँह छुपाये हुए ही कहा, 'घोप ना मैं मर गयी।"

"बीरज रघु बहल। मैं जानती हूँ कि तेरी उम्र बहाड़-सी हो गयी। तेरा दुल धनंत हो गया पर हीतना रग। मेरी छोटे-छोटे बूझा समुर और यह बूझी जान। धन तुझे ही मरने की तरह पुनर्पार्थ करना है। कुप हो या कुप।"

गुन्नु की यह हठान् पठती हुई बोली "सत्यानास हो इस बैठ हरमुख का अपनी लाय (घाव) में सबको जला गया है।"

मुन्नु की माँ धा बयी थी। कस तक उस बूढ़ा के माथे पर बोर बँधा हुआ था। हाथों में चूड़ियाँ थीं। माथे में किन्ही भी पर धाज उसने भी बिबबा का बैप बना लिया था। उसने साबिबी को देखते ही रोना शुरू कर दिया। साबिबी ने उसे भी धैर्य बँबाया 'घाप क्यों रोती है ? घापने हिम्मत हार दी तो हमारा क्या होगा ? हमें कौन बीरज बँबायेगा ?'

'क्या करूँ बीनखो। इने बिबबा के बैप में देनकर मेरी छाती पट्टी बा रही है। कस से मैंने घापने लन पर से मुहाय के सारे चिन्हा उतार दिये। सभी लोग स्मृत हो गये हैं। कहते हैं—यह सब धामुम है। यमल है। पर बबान बीनखी के समय मुझे यह सब पहनते पकझा नहीं लपटा। छाती पट्टी-पट्टी जाती है। वह एक पल रुककर बोली "इसे समझाओ यह तीन दिन से घाप का एक बाना भी मूँह में नहीं बाल रही है।"

मझी ने सामू के समता कुछ नहीं कहा। अपने पृथक भी निवास लिया था। जब वह बनी बयी तब साबिबी ने उससे प्रार्थना की 'ऐसा करने से क्या होगा बहन ? जो जान में लिखा था वह तो हो ही क्या घाह हृदय को बाबस देने में ही समझाती है।"

"क्या करूँ कीर यम क नीच उतरता ही नहीं है। बार-बार बनकी मूरत धाँसों के आये जा जाती है कीर कीर बने में जँम बाजा है।"

"हृदय को समझाओ।

वह बड़ी बेर तक मझी को समझाती रही। कई बार उसक मन में यह भी आया कि वह मझी को बतादे कि उसने ही जीता का नाक बाटा है। किन्तु किन्ही घमास कारणों धीरे एक भय से वह इस रहस्य को होठों पर नहीं ला सकी। जब वह रहस्य उसके घम्टरण में चुटन पडा करने लगा तब वह बड़ी से बनी आयी। वह बाम करती हुई रो रही थी। उसे बार-बार यह विस्मय होता था कि वही रन बाँड की त्रिमेवार है। केवल वह !

सुलेमान मेरे घर आया था ।

“भीजी घर में है क्या ? उससे पाते ही बाहर से आवाज लगायी ।
माँ बाहर निकली । स्नेह भरे स्वर में बोली “आमो सुलेमान
आमो हुआ घरों ।

“नहीं भीजी हुआ अभी सैठबी के बहाँ पीकर आया हूँ । कहीं क्या
हाल-बाल है ? सहर का रहा हूँ । कुछ काम है ?”

‘एक ही काम है सुलेमान मेरे लाले को बुझना इस तरह की
बातें बेस-मुनकर तो मेरी माँओं की नींद ही उड़ी जा रही है । रात-
रात भर ऐसी उन्दी-सीपी बातें सीपती रखी हूँ कि तुम्हें क्या बताऊँ ?”

“भीजी जगजग पर भरोसा तो तुम्हें अपने बैठे से भिलावेगा ।

“अबू आनकल हमसे कटा हुआ है प्रिया । उसकी कुदृष्टि हम पर है
बर्ना आज यह घर बैठे के होते हुए उससे गुना नहीं होता । हाँ एक काम
करना कुछ कपड़े-भस्त्रें सहर से मँगवाने हैं । तु जोया देखकर से माना ।”

“टीक है ।”

“धीर लड़ाई मक्के का क्या हाल है ?”

“दुश्मनी बात ही न कर भीजी । ऐसा बमाना जगजग न दिखाने
तो अच्छा । इस तरह की लड़ाई धीर नकरत तो मैंने बोलन घर में भी
नहीं देखी तुम्हें माद होना कुछ सोच हमारे घर में जोरी करने कुछ घामे
से । माँद बातों को मानून हो गया था । सौ लालियाँ एक साथ निकली
थीं । बीपरी ब्राह्मण धीर राजपूत समी के । “पर बाहरे कमिषन !
बीपरियों ने राजपूतों की बुझनी करा दी राजपूतों के बिनाफ ब्राह्मणों
को बढ़वा दिया । इसर कुछ मैता सोय हमारे पास घामे धीर बोले कि
बाई सुलेमान घर पर गुम हवें तारे मुसलमानों के बोट दिया वो तो मस्जिद

को पूरी मरम्मत करवा दिये। बम्ब है इन लोगों को। हममें अन्धाराप भी था। मोदी! बड़ी अन्धाराप को मुझे बंधों के दिनों में मारने भावा था। जिसने मस्जिद को लूट-लूट करने की योजना बनायी थी वह छाती टोंक-टोंक कर बह रहा था—मुनेमान आई मस्जिद को छेड़ कर बनवा दिया।^१ “राजनीति इस्लाम को बिटना कीठ धीरे मक्का बना देती है। मान-अपमान दोनों राजनीति के लिए एक छे होते हैं। तब ऐसी मुसलमानों को देखकर ऐसा भय रहा है कि सारे बंधों और इमानों को जमा दूँ। पब्लिशरों को हाथों में लेकर कहूँ—अविष्य में किसी ने मुक्त समान को मुसलमान हिन्दू को हिन्दू कहा उसे जेल में बन्द करा दिया। कोई जातीपता धीरे कौमियत पर एक शब्द भी कहेगा उसे इस्लामियत का दुश्मन धमककर कठोर बंद बूँदा। सभी के लोग सच्ची राह पर आये। हम केवल इस्लाम के नाम में जाने जाएँ बस।”/

माँ का चेहरा कसला से अन्धविश्व हो गया “मुनेमान आई, मुठ कोमू तो ईश्वर मुझे बंद दे। मुझ की वह इस तरह से रही की कि मेरी छाती फटने लगी। भयानक इतने इरमुन को। एक पारी सारी माँ को दुखा देता है।

तब कहता है मोदी इस बार मोरानिह की मे बड़े बीरज धीरे धवन से काम लिया था पर इरमुन का बसती छाती पर ही जा बड़ा। छाती पर जाने पर कील मम जायेगा। बाहिर हरएक के दो हाथ होते हैं। हरएक का मान-अम्मान होता है।”

“यह क्या स्थिति है ?

सिपाहि यह है कि पुलिस इन चीयरियों को नहीं छोड़ रही है। बेबाप मे मोदीबंद कोटिप कर रहा है। पर इनको सजा हुए बिना नहीं छोड़ी। इर मुमुन का केन बीजा भी हस्वनाम से जा गया है। हजारों रुपये लब्ध हो जाये।”

तब मुनेमान आई एक बयाना था कि माँ का हर आदमी दुगरे घादमी के मुल-दुल में शामिल होता था। पर इन निरोगी कुमारों के

घादमी-घादमी में बहुर मोल दिया है। इससे राजाओं का राज लाख बरबें चोटा था।”

“ऐसा मैं नहीं कहूँगा जीजी राज माही मोखा है पर बुरी है घादमी की बुदबुदी सचका मोल। हर घादमी किसी तरह अपनी बात पकामा चाहता है। जब वह अपनी बाहवाही के लिए बाति बर्म घोर ईमान सबको दीव पर लगावे से नहीं चूकता। दरघसल घादमी बहुत गिर चुका है अपने उधुनों से।

“को बँधा करेवा, बैठा पायेवा।

“राम राम भीजी।

‘छहर, तुम्हे रुपये लाकर देती हूँ।’

माँ भीतर बची। वह अपने निकाल कर लामी। सुनेमान उसे अपने कुत्तों की भीतरों केब में रखता हुआ बसा गया।

माँ दूधोड़ी पर खड़ी रही।

घाम उसे अपना पति याद आ रहा था। उसे पक्का बिस्वास था कि अगर वह होते तो वह नून-सराही नहीं होती। वह किसी पर भी सम्भाव करते घोर होते नहीं बेच सकते। माँ का मन घापी हो गया। वह घाकर रोने लगी। उसे बेचकर लामिनी जी ठिसकने लगी। अपनी अपनी व्यावा और अपना-अपना रोना। सब माँ फिर लामिनी को पिट्टनी बटनामों के लिए बोली द्यूटने लगी। लामिनी सदा की तरह चुप रही। उसे बिस्वास था कि सात का मन सब मँसा नहीं है। वह घटनती है खुल्ले पर बर्म होते दूध की तरह पोड़ी बैर।

×

×

×

समय बूढ़े बत्तों की तरह उड़ गया ।

सावित्री ने एक पुत्र को जन्मा दिया । उत्सव-आयोजन नहीं हुआ । मुस-मुस दोनों से । बाद की थोड़ी बाप का सापता और मोठे का जन्म ? एक मुस-मुस विधित्त धर्मीय बिकाल । माँ रोसी भी और मुल्करायी भी । बेटी भी बहुत धम्पी हुई । हरमुख व प्रम्य तीन बीप रियों की धार्मीयन कायबाध हो गया । उन्होंने छोटे ठाकुर पर बालि माना हुमाता किया था वह भी उनक घर पर । बीता ने अपने पिता को छुड़ाने के लिए पैसे की बानी की तरह बहाया । घर-जमीन सभी बेच दाने । कंपाल हो गया । दाने-दाने को मूँहताक हो गया पर वह हरमुख को नहीं बचा सका । सेठ बोरीबन्ध ए०० ए०० ए०० (बिबाध सभा का सदस्य) बन गया । वह अपनी अनुयाई से दोनों बत्तों को धंठ तक महान नेता की तरह अपनेप देता रहा कि कानून को अपने हाथ में मत लो । जब उनकी धक्ति बड़ गयी भी पाँच में ।

जो चुनाव के दौरान में धंभू और मुनेमान ने लक्ष्मी धर्मासित बानी । सेठ राजपूतों के पास गया । उनसे बोला कि मैं बीपरियों का बानी दुरमन हूँ । वे जाटबाद करना रहे हैं । मैं कहते हैं कि जाट की बेटी जाट को जाट का बोट जाट को । पर मैं आपका सहयोग चाहता हूँ । मैं इस मनबड़ धम्पी को साथ नहीं ले सकता । अपने ठाकुर बीरा निद्र के बेटे ने कहा "पुलित इम्पेक्टर मैं ही लाया था । हरमुख को बम-रूप दिया कर ही छोड़ूँगा ।"

बीर मुनलमान को अपने कहा "राजपूत जाट का देश का भसा करेदे ? उन्हें आपस में लड़ने से भी पुर्नत नहीं है ।" यही राजनीति

कुचक उसने बताया। मिहक और नाबी के नाम से वह बहुत से बीठ गया। साथ ही अपना नंगापन भी बता गया। समझदार उसकी घसमि मल जान पड़े पर बहुत बार में।

घब मुसमान और शंभूसिंह उसका विरोध करते थे। वे समझ-बूझ यही कहते थे—साबिकानों में नफरत का ज्वार फैलाने वाला यही साप है। पहले हम भी इसकी घसमिमल नहीं जान पाये थे। पर अब हम भी जान पड़े हैं।

कुस भी ही गाँव में एक बार पूर्ण क्षांति आ गयी थी। समता बा—माँ बरिनी जलिक भूचाल के बाद स्थिर हो गयी। गया धमन चैन आ रहा है। तब बुझर रहे थे।

मेरी माँ कुछ भी।

और अब उसका पोता उसके पुत्र की प्रतिष्ठा लेकर धर्म में टमक-टमक घुटनों के बल बजने लगा अब वह के प्रति जो भी रोप डेव-बनुप उनके मन में था वह नितान्त बिट गया।/साबिकी का जीवन अब 'वार्मिक-घादेशों पर आधारित रहने लगा। वह समयम बार बजे उठती। स्नानादि करके पूजा-पाठ करती। सुबह-सुबह पाँ के कानों में रामायण का पाठ पढ़ता। माँ का मन भक्ति-बिह्वल हो जाता। उस दिन साबिकी ने नदमद कंठ से पाठ किया—

कौसन्वा कह बोल न काहु। काम बिबल दुख-मुख छति लाहु।

कठिन काम यति जान बिघाटा। जो सुम समुय सकल पलवाटा ॥

माँ बिह्वल हो उठी। उनकी धीलों में धबिरल घपु प्रवाहित हो गये। वह विनमित-स्वर में बोली "सबमुक्त वह। सब कुछ कर्म के अधीन है। कर्म सबसे बलवान है।/

भक्ति कर्म को सब कुछ माफ कर हाथ पर हाथ बरे बैठे रहना भी ठीक नहीं है। पुण्यार्थ भी करना चाहिये।

"हाँ वह।"

तभी साबिकी का बेटा 'राजा' रोने लगा। हाँ वह केवल साबिकी

का ही बेटा है। क्या नहीं मेरा मन उसे धरना देता बहुत हुए क्यों-
नकोश से झुक जाता है। जिस मारी ने पाँच बप तक बटोर-उपस्था
वरके शिव बन्ने को वास्ता कम पर मेरा परिवार कैसे हो सकता है।

माँ उठी। उसने राजा को घोर में से लिटा घोर बह बड़े प्यार से
उठाहना देने मरी। "कितना हुमियार है इसपर माँ उठी कि उबर पट से
गया बाबू ने दाँवें लोम की। मैं सब समझती हूँ "तू अपनी माँ को
काम नहीं करने देगा।" घोर माँ ने उनक घोर मुकड़े पर पवित्र चुम्बनों
की दवा कर दी।

"माँ जी!" सावित्री ने कहा "आप इसे रजिरे में भर के काम
घने में लपटी हूँ।

"तू मुझे विनम्र निरुन्नी करके छोड़ेगी।"

"क्यों?"

"हुए काम भी करने नहीं देती।"

"बहुत बड़ा काम जो है मार्क निर।"

"क्या?"

"इस बरमान को संभालना दाना बना मरान है कि कोई जरा-सा
भी काम करे।"

"मैंने बहुत बह बरमान बहा है। यह मेरा राजा बेटा है। मेर पर
का बला-मुराह।"

सावित्री ने राजा को पर समझा मरी हट्टि में देगा। उसकी हट्टि
मरत हो गयी। उनक मन में यह बार-बार बीड़ यदा "रंघ मेरा घोर
माँ-माँ घरने बार के।" घोर बह फिर काम में रजिरे हो गयी।

माँ पर राजा को नकर धमक राखी थी। सावित्री ने पर में मर
की कमी का धामान नहीं होने दिया। वह सारा काम घने हाथ के
करती थी। उसने पर की धान घोर धान में जरा भी बट्टा नहीं लदने
दिया। वह निरुन्नी निरुन्नी की तरह दिनों घोर जंरनों में बिबरती थी।

घारे लोच तने एक मरानी घोरत कहने से। इनके माँ हो बह धाम

धार्मिक मनोवृत्ति की ही गयी थी। एकादशी पूर्णमासी मंत्रतन्त्र को हनुमानजी और धर्म ब्रत-व्यवस्थाओं को वह निराहार रहती थी। सब मंदिर जाकर सिक्की का दर्शन करती थी। बिना उसका दर्शन किये वह ब्रत भी पूरे में नहीं आती थी।

लेकिन यह सब क्यों ? सिर्फ मेरे लिए। वह हर जगह जाहती थी कि मैं एक बार जन्मा जाऊँ। मैं एक बार घाबर उसके बसे-बसाये घर को देखूँ। उसके प्रतिष्ठा केटे को देखूँ। वह मेरी याद में जोयन बन गयी थी। क्या साँझ का रस उसके रस के सामने था ? साँझ प्रीत को मममयी थी और वह प्रीत को नहीं सिर्फ पति को चाहती थी। उसे उसका पति चाहिए था। ताकि उसकी प्रतिष्ठा बढ़ जाय। उसका मान बढ़ जाय। उसका मुहाम गृहार सब सके। तभी वह नाठ-पूजा में निमग्न रहती। प्रार्थना करती थी बस 'मे' था थी। बस राजा के बाबू पितापु हों। उनको कुछ धन्यम न हो।

उस दिन वह अम्बेरे-अम्बेरे मन्थिर से लौट रही थी। इधर उसके केहरे पर जीवन की अमक की जगह उप की सीति अचिन्त मुचरित हो रही थी। एक धर्मोक्ति आमा और थी जो उपस्थितों के मुँहों पर छापी रहती है वह उसके मुख पर अमकन लगी। तभी एक नारी-कंठ ने उसे पुकारा "सावित्री।

वह ठककर रुक गयी। घूम कर देखा। बूँट में मुख सुराये, मोरन में सब सुराये एक बठीनुमा स्त्री उसके सम्मुख आकर खड़ी हो गयी। आँधरका (उड़का मुकह) था। बुज्जा अम्बवार जन्मा हुआ था।

"अमा है वहिन ?" सावित्री ने स्नेह से पूछा।

"मुझे नहीं पहचाना।"

"नहीं। उसने सहज भाव से उत्तर दिया।

आगन्तुका का कंठ भारी था। सायब वह जोड़ी देर पहले रोयी हो। उसने हाथ जोड़ कर कहा "मैं जीता की पर वाली हूँ। आज ठेरे पास एक पकड़ी काम से आयी हूँ।"

"बीता 1" सावित्री ने मन ही मन बुझाया । इस नाम के उच्चारण मात्र के उसकी धारका पूरा और ब्यवा से भर घायी और नाक-काटने की बटना से उत्पन्न मूनी कीर्ति उसकी धीरों के साथे सगु भर में नाच कर घोमन ही गया । तब उसकी धारमा अपराधी को तराह नीर बसी । बहकत छाड़ी रही । उसने प्रभु की धम्मर्यना की कि वह उसे छमा करदे ।

बह बड़ी देर तक मौन छाड़ी रही । बीता की पत्नी के बेहरे के साथ बह वहीं पड़ पायो । उसने सभी की बुंधट निकाल रखा था । वह सभी भी निरबल छाड़ी रही ।

सावित्री ने उसके सभीप बाकर कहा "तू ने यहाँ छिडवा बुंधट निकाल रखा है ।

बह बोड़ी बोड़ी । झिली ।

"क्या मेरा ? मैं तो ठेरी बीते देवराणी हूँ ।"

उसने बुंधट बोड़ा सा डोका दिया । वह एक साधारण सी स्त्री थी । उनके सदमय रू बन्ने थे । हल्के आँखों में भी उसकी कृप उसकी भावों की हड्डियाँ स्पष्ट दिख रही थी ।

"क्या काम है ?" उसने पूछा ।

["बहुते हुए काम छाड़ी है वर बड़े बिना रहा भी नहीं जाता । बहन से राज मे बुझा नहीं बता है । घर में सब का काम भी नहीं है । सभी घरने बरपे ही गये हैं । मैं और बह पेठ वर वन्दर बाँध वर रू मकड़े हैं वर मन्दे-मन्दे बन्नों की बिलबिलाति हुए नहीं देख सक्ती । बन्ने राज वर रोटी-रोटी बगले रहे । एक बार भी मैं दाया का कि बही बाहर दूब मर्क । वर इन बन्नों का मोह नहीं पुन पाया ।" बह रो पड़ी ।]

"तेरा काम क्या है ?"

"बंदनी ।"

"मुन बंदनी इस तरह दिव हारने से क्या होका ? मुन-मुन बिबि बिबान है । सब के दिव भी नहीं रहे तो यह दिव भी नहीं रेंगे । तू मेरे वर वन बाँध देदूँगी । रोडी क्यों है । छि बन्नी इस तरह दिम्नत रू

धार्मिक बनोदृष्टि की ही नहीं थी। एकाधभी पूर्णमासी मंत्रतबार को हनुमानजी और अन्य व्रत-उपवासों को वह निराहार रखती थी। सदा मंदिर जाकर पिबजी का दर्शन करती थी। बिना उसका दर्शन किये वह बस भी मूँह में नहीं डालती थी।

लेकिन यह सब क्यों ? सिर्फ मेरे लिए। वह हर पड़ी चाहती थी कि मैं एक बार जला भाऊँ। मैं एक बार जाकर उसके बस-बसाये घर को देख लूँ। उसके प्रतिरूप बेटे को देख लूँ। वह पेरी बाह में जोरन बन गयी थी। क्या लाछा का घर उसके घर के सामने था ? लाछा प्रीत को समझती थी और वह प्रीत को नहीं सिर्फ पति को चाहती थी। उसे उसका पति चाहिए था। ठाकि उसकी प्रतिष्ठा बढ़ जाय। उसका मान बढ़ जाए। उसका सुहाय गृहवार सब ठके। सभी वह पाठ-पूजा में निमग्न रहती। प्रार्थना करती थी बस 'बै' धा जाय। बस राजा के बाहु चिपटु हों। उनको कुछ घपुष न हो।

उस दिन वह गम्भीरे-गम्भीरे मन्थिर छि सीट रखी थी। इधर उसके बैहरे पर बीबन की चमक की जगह तप की दीप्ति अधिक मुखरित हो रही थी। एक धार्मिक आमा और भी जो तपस्वियों के मुकों पर छापी रहती है वह उसके मुँह पर चमकने लगी। सभी एक भारी-कंठ ने उसे मुकारा "सावित्री।"

वह एकदम रुक गयी। बूम कर बेला। बूँचट में मुख सुराय घोडन में तन सुराये एक बठरीनुमा सभी उसके सम्मुख जाकर लड़ी हो गयी। भीमरता (उड़का मुह) था। बु बसा धम्पकार जैसा हुमा था।

"क्या है बहिन ?" सावित्री ने स्नेह से पूछा।

"मुझे नहीं पहचाना।"

"नहीं। उसने सहज भाव से उत्तर दिया।

आमन्तुका का कंठ भारी था। धायक वह बीड़ी बैर पहुँचे रोपी हो। उसने हाथ जोड़ कर कहा "मैं जीता की घर वाली हूँ। आज तेरे बाक एक जरूरी काम से धायी हूँ।"

“बीठा !” सावित्री ने मैन ही मैन कुहराया । इस नाम के सम्भारण के बड़की धात्मा बुझा और ब्यथा से मर घायी और नाक-काटने बटना से धात्मन जूनी कौड बसकी घाँसों के घाने जलु मर में भाव घोमन हो गया । तब उसकी धात्मा धपरायी की तरह क्रीप बयी । बस बड़ी रही । उसने प्रभु की धम्मर्षना की कि वह उसे क्षमा करे । वह बड़ी देर तक मौन बड़ी रही । बीठा की पत्नी के नेहरे के व वह नहीं पड़ पायी । उसने धायी भी बूँद निकाल रखा था । वह ही भी निरक्षर बड़ी रही ।

सावित्री ने उसके समीप जाकर कहा, “तू ने यहाँ किसका बूँद कात रखा है ।

वह बोड़ी बोड़ी । हिली ।

“क्या मेरा ? मैं तो तेरी बीँसे देखरानी हूँ ।

उसने बूँद बोड़ा सा ऊँचा दिया । वह एक साधारण सी स्त्री थी । उसके सपमन छ बच्चे थे । इसके धम्मेरे में भी उसकी कुछ उमरी बालों हैं हड्डियाँ स्पष्ट दिख रही थी ।

“क्या काम है ?” उसने पूछा ।

“कहते हुए लाज घाटी है पर कहे बिना रहा भी नहीं जाता । वहन हो रोज के जान्हा नहीं जाता है । पर मैं धम का बाना भी नहीं है । सभी धपने पछाये हो गये हैं । मैं और वह पेट पर परवर बीच कर रह सकते हैं पर नन्हें-नन्हें बच्चों को बिगबिलाते हुए नहीं देख सकती । बच्चे रात भर रोती-रोटी करती रहे । एक बार भी मैं धाया वा कि कहीं बाहर दूब मक । पर इन बच्चों का मोह नहीं छुट पाया ।” वह रो पड़ी ।

“तेरा नाम क्या है ?”

“बंदली ।”

“तुम बंदली इस तरह दिन हारने से क्या होया ? कुछ-कुछ निधि बिचान है । जब के दिन भी नहीं रहे तो यह दिन भी नहीं रहे । तू मेरे घर बन जान देवूँगी । रोती क्यों है । दिख बचलो इस तरह दिम्भत रह

दोही तो पीछे बाधों को कौन हिम्मत बैठायेगा ।”

सहसा सावित्री का मन बाँका से भर पाया ।

हरमुख उसके समुद्र का दुःखमय है । “कहीं साधनी नाराज हो गयी हो ? मैं साध की को हान जोड़ चुकी । कहीं भी इसके बच्चे सूते हैं । रोटी के लिए तरस रहे हैं ।”

ने दोनों पर धापी ।

“माँ जी !

क्या है यह ?”

“एक घुन हो गई ।”

“क्या ?”

“घाय नाराज न हों तो बचाऊ ?

“नहीं होऊँगी । पहले बचा तो लूँगी ।”

“नहीं । पहले मेरी कसम खाएँ ।”

“कसम ! क्यों ? धरो ऐसी क्या बात है !”

“पहले कसम खाइए तब बताऊँगी ।”

“बता दे । कसम न लिला पर विश्वास रख नाराज नहीं होऊँगी ।

“माँ जी पीता की बहुत बाहर लगी है । बैचारी के बच्चे हो रोज़ से भूले हैं । मेरे सामने जोती पसार कर रोने लगी । मुझे क्या पता गई । मैं उसे अपने घर ले आई । इसे बोझ-सा जान दे बीबिए न ।”

तु बसा प्रकाश कौन क्या ना ।

माँ के कहने का रंग बबल मना । कठोरता और निषेधता की रेतों में लतकी घाड़ि की लुरियों में भिन्नकर उसे भयानक बना गई । सावित्री फिर से पाँच तक की गई । वह मन ही मन अपने प्रभु को स्मरण करने लगी । उसने प्रार्थना की कि प्रभु उनकी मदद करें ।

माँ ने कुछ देखाई से कहा, “तु जानती है यह हमारे दानवान का दुःखमय है । उसने हमें तथा कर्मजित करने की चेष्टा की है । उसी के कारण मेरे घर के दो-दो बच्चे हमसे दूर हो गए और तु उनकी मदद

करना चाहती है ?”

“मैंने आपसे पहले ही धरबासना (बिगली) कर दी थी कि मुझसे मुन हो गई है। ‘माँ जी ! कुछ एक धम्बेरा है। धम्बेरे में हमारी छाया भी हवा का साथ छोड़ देती है। ऐसे समय दाबु की भी सहायता करनी चाहिए। माँ जी ! आप कृपानु हैं। उसके बन्धों पर दया कीजिए। समय की बलि को छोड़ नहीं जायता। क्या पता कब किसके दुर्दिन का आए ? फिर दाबु की वह धपने सामने हाथ जैला दे यह तो अपनी जीत हो ही गई ?” पिछली बात माँ पर धसर कर ही गई।

माँ कुछ देर तक पत्थर की तरछ सड़ी रही। बाद में वह भीतर गई। ताबिली हर्ष से घर लठी। वह ऊपट कर बाहर गई। देखा—चंदनी आपन मुड़कर आ रही थी। उसने सीढ़कर हाथ चठका बकड़ लिया।

“बहू पवली माँ की बात का बुरा मानती है। माँ तो मोम है। जानती है—जोम जैसे बहुत बड़ा होता है पर जल-सी धीरे से वह पिघल कर बहने लगता है। अच्छी बातों का बुरा मत मानना। बच्चों का रूप चुनते-चुनते चुनेगा।

“बहू !”

“घाई माँ जी !” ताबिली लवटकर माँ के पास गई। माँ एक छायाता भर कर धाम से घाई।

“मे !” धीर माँ बोली गई।

ताबिली ने चंदनी के धोड़ने में लारा नाम जेस दिया। एक बार उसने फिर चंदनी से कहा “बहन तू माँ का बुरा मत मानना।”

जही बहन में उसका कुछ भी बुरा नहीं धाईदी। समय बड़ा बनबास है। वह किसी बीरी को भी ऐसे दुर्दिन न दिखाय। धीर में ही बन तेरे पास घाई है। कभी तेरे मय के नीत पाते हैं। कहते हैं—बड़ी मरानो धीरन है। मंद-मंद मोहों का बना है। कुछ को मुन की तरछ सबकड़ी है। बड़ी दपानु है। धम्बा बहन !” बहू बोली गई।

उसके बाते ही सावित्री का मन भर-सा धाया । तोच ।
इस पुष्प से 'मे' लौट आएँ । जरूर धायेंगे । घरीब की दुषा
करती है । घोर बहू काम में मगानुन हो गई । बहू बिचारणी
कठोर बचन बंदती को बण्डे नहीं लगे । यह बहू बंदती ।
से अपना बाँध भी नीचे नहीं रखती थी । बो-बो सेर बाँधी ।
पर आज ।" कबाबिद यह थी ईश्वर बण्डा कर रहा है ।
दुषा बण्डा फल देवी ।

बीच में ही माँ ने पुकारा "बहू, आज बिसोना नहीं क
"करती हूँ ।" कहकर बहू बिसोना करने लगी । बहू
आवाज बदार्-बदार् पर मैं बूबने लगी । तभी राजा टक्क
हुआ थाया और बिसोने की डोरियों को पकड़कर बड़ा हो ।

सावित्री उसके मोले मुख को देखकर बंदती की बात न
बहू अपनाक उसकी धाव-मुदा को देखती रही । उसकी इच्छा
उसके बालों पर फुम्बनों की बर्षा कर दे । किन्तु बहू इस रा
भी धार्मीक धान्य सेना बाहनी थी । उनसे पुकारा
"आएँ तो ?"

"क्या है !" माँ ने पूछा ।

"अपना लैनालिए न, अपने साहने को ।"

माँ बँठ गई ।

राजा को बहू की हँडिया में हाथ डालते हुए देख
बड़ी । उनके पास पर इस्फा-सा बरण बजती हुई बोली ।
का ? क्यों बहू डीक भगवान किनन की तरह लगता है देख
तरह देखना लगे होना घोर बहू से हावों का भरना ।'
भागानिबून हो गई "ठीक मेरा मरणा भी इन तरह घाका
था । भगवान की क्या धर्मीक लीमा है ? देख बोझ मेरे ।
एक बात लेकर बैठा हुआ है । हाथ भगवान मुख बूबन
समा करेगा मैंने तुम्ह पर बहू किया था ठीकी बोह की ध

बा । यू तो साफ़ात सारथनाम वाली सावित्री है । तैरे तेज और धर्म के सामने कोई नहीं ठहर सकता । जहाँ अपने लक्ष्म से उन्नत में इतनी बड़ी होकर बहुत कम मोटयार (जवान) बहुर्य अपवित्र हुए बिना रही है ? मैं कईयों को जानती भी हूँ । पर ए 'यू' यही है ।

सावित्री के मन पर इन बातों की कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई । वह प्रकृतिस्व-सी इन बातों को सुनती रही ।

माँ का मला दूध-सा हो गया । घाँवें भर पायी । पवन घाँसुओं की पोंछी हुई पोते की सीने से सबाकर वह प्राहिस्ते प्राहिस्ते बोली "जाय जाइकर भी सरबल को नहीं भूल सकती । जब राजा सामने होता है तब सरबल का काम कम और उछटो भीमाएँ मेरी घाँसों के सामने हास्यात होने लगती हैं ।" और माँ ने सारा की तरह हठ स्वर में कहा "मेरा बेटा जकर पाएगा । इन पोते के पाँव बड़े ही घुम हैं ।

गाय बीड बीड" "करने लगी ।

माँ ने बच्चे को गोद में सेते हुए कहा "सायद साय के बुढ़ने का सचय हो गया है यू कहे तो घाय में ही बापों का काम निगम लूँ ।

"नहीं मैं सब कर लूँगी ।" सावित्री ने घाँसु पोंछकर रही को दुःख दिलोना धुरु कर दिया ।

माँ बच्चे को लेकर हलवा-कुचका काम करने लगी ।

रही बचने की ध्वनि अब भी सुनिव हो रही थी ।

X

X

X

उसके तीसरे दिन बंबली की घेंट साबिबी से फिर हुई। सरवर का घाट था। दोनों बगियाँ पानी भरने छापी थीं।

“क्या हास है बबली ? पड़ा रखती हुई साबिबी बोली।

“सब कहूँ या झूठ ?”

“अब ! तबता है कि तू मेरी सास के कहने को बुरा मान बघी।” साबिबी ने झट से प्रश्न किया।

“नहीं बहन ! मैं सब किसी का ची बुझ नहीं मानती हूँ। धीरे धीरे सास का बुरा मुझे जत समय बहुत भला लगा। जब ठेठ बोपीचंद ने उनको एक बाग़ घान्न का तो नहीं दिया पर बाँटें हजार चुना दीं। वह घर धाकर रोने लगे। धीरे वह कुछ सेठा है न उन्हें बेचकर घाँस-सी इकट्ठा करने लगा। उसकी नाक घटेले बेचकर उन बदमाशों ने बाटवी हमें उनका क्या बचुर है ? मुझे अपने दुष्ट से अधिक उनकी चिन्ता है। मैं उन्हें रोसे नहीं बेग़ छन्ती। बुरे दिन किसीके नहीं छाते ? जो भी पसन्द से तिर ज़ेबा करता है ईस्वर उन्हें तीबा दियाने दिन नहीं रहता। वह सबका गर्म बूर करता है बहन !”

“तू झूठ बतती है। हाँ एक बात बता तूने अपने पति को तो इस सेन-देम के बारे में नहीं बताया ?”

“उन्होंने कई बार पुछा पर मैंने नहीं बताया। वह दुष्टी हो गये। अपने आपकी कोगत तुम बीले वि आम भिरा तप इसमा कमजोर हो गया है कि भिरी घरवाली भी मुझने बात छुगाने लगी। ‘तो बहन मैं डर बघी। कई का मन ठहरा। कहीं जस्टी समझ बैठे तो ? इसलिए मैंने तेरा नाम से लिया। तेरा नाम सेते ही वह एक बार बीके। चौकना भी

बाबिब था। बुध्मन की ऐसी हृषा इस गाँव में घबक रही थी न देख पाती है। वह कुछ देर तक परदेर के देव की तरह बैठे रहे। मैं उस परदेर से बेगली रहो। उनकी धीमे धीमे धीमे से भर पायी।

मैंने पूछा "आप रोते क्यों हैं?"

वह धीमे धीमे बोले "आप अपनी नीचता और अपनी महार पर आये। फिर भी मैं। ईश्वर मुझे इतनी हिम्मत दे देता कि आकर उनके चरणों में अपनी नीचता की शमा मीच सेता तो हुआ हो जाता। फिर भी मैं उसे कहना कि उस नामांकक आई मे अपनी देवनी अपनी बहन मे शमा मीची है। जिस दिन ईश्वर उसे हिम्मत देगा उस दिन वह जरूर अपने सभी को अपने धीमे धीमे से बांधेगा। "बहन मैं प्रोत्सा नहीं करेगी मैं बड़ी देर तक घुटनों में गिर पड़ा रोते रहूँ, रोते रहूँ।"

बाबिबी वहीं से चली पायी।

द्वार पर हल्ला मचा था। उनके पीछे वह हल्ला था। वहाँ मैं वह बीबीन द्वार में के मयी थी। ज्यादा दिन तक न रह पायी। मधुरान के इतने बड़े घर को चक्रेमी साम के चरोमे नहीं छोड़ा जा सकता था। दर तारे पम्पु घोर इस पर ऐनी-बाबी का काम। वह मयी घोर घागा के बिगड़ित जल्दी लौट पायी। फिर उसका मयी नहीं नहीं मगना था। वहाँ कम-न कम इन बात की पगपग आ भी नहीं थी कि उनका पति उन छोड़कर क्यों चला गया? सभी बातों से कि उसका अपने पिता से भयंकर हो गया था या वह बीता में कुछ द्वार न पाय इस भय से भाग गया था पर उसका पीछर की मगना घोर हुआ मैं उसे इस प्रान्त की लेकर अपने मगना पिता करनी थी। बुद्धि मैं घागा के अनुसार मगना हिस्से भी बना मिय से। ये हिस्से घोर मुझे हिस्से मगना रह मेकर मुनाये जात न बिगड़न उस मगना वह उसका मन बर्धन हो जाता था। उस मगना मैं मगना होता भी वह छोड़ती थी कि मीच गत्य की अनुमान न पकड़न का भेटा करते

उनके तीसरे दिन बंसी की मेट नाबिबी से फिर हुई। तरबतर बा
बाट बा। दोनों बगिची पानी मरने छापी थी।

“क्या हाल है बंसी?” पड़ा रसती हुई नाबिबी बोली।

“तब बहूँ का मूँक?”

“मम। सचता है कि तू मेरी छास के कहने को बुरा मान बसी।”
नाबिबी ने मेट से प्रश्न किया।

“नहीं बहन! मैं जब किसी का भी बुरा नहीं मानती हूँ। घोर
तेरी बात का बुरा मुझे उस समय बहुत बता तब। जब सैठ गोपीबंद
ने उनको एक बाला भग्न का तो नहीं दिया पर बापें हजार मुता थी।
बहु बर धावर रोते लगे। “घोर वह बुरा ऐसा है न जहाँ देखकर
छात्रो-नी दूरगत्त करने लगा। उनही नाक धरेने देखकर उन बदमाजों ने
बाटरी इसमें उनका क्या मसूर है? “मुझे अपने बुरा से अधिक उनकी
बिम्ता है। मैं उन्हें रोते नहीं देना करती। बुरे दिन किसके नहीं पाते?
को भी पमण्ड से मिर जैबा करता है। ईरकर उन्हें नीचा दिताने दिन
नहीं रहता। वह सबका गर्व बुर करना है बहन।

“तू ठीक कहती है। हाँ एक बात बता तूने अपने पति को तो इस
सिन-सिन के बारे में नहीं बताया?”

“जहाँसे कई बार पूछा पर मैंने नहीं बताया। वह दुखी हो पड़े।
धरने धापरों कोमठे हुए बोले कि आज मेरा तप इतना कमजोर हो गया
है कि मेरी बरवाली भी मुझसे बात छुटाने लगी। “तो बहन मैं कर
पमी। मर्द का मन ठहरा। कहीं बस्ती समझ बैठे तो? इसलिए मैंने
तेरा नाम से लिखा। तेरा नाम लेते ही वह एक बार चौंके। चौंका भी

वाजिब था। इंसान की ऐसी कृपा इस गाँव में धबकड़ी भी न देखी जाती है। वह कुछ देर तक पत्थर के देव की तरफ बैठे रहे। मैं उन्हें घबराते देखती रही। उनकी घाँघी घाँघुओं से भर धायी।

मैंने पूछा 'भाप रोते क्यों हैं ?'

वह घाँघु पोंछकर बोले, 'घाँघु धपनी नीचता और उनकी महत्ता पर धा दये। बिरजू की माँ ! ईश्वर मुझे इसकी हिम्मत दे देता कि मैं बाकर उसके करणों में धपनी नीचता की दामा माँन संता तो कृतार्थ हो जाता। फिर भी तु उसे कहना कि उस नासायक भाई ने धपनी देवी पंजी धपनी बहन से दामा माँनी है। जिस दिन ईश्वर उन हिम्मत दे देता उस दिन वह बाकर उसके पाँवों को धपने घाँघुओं से धाने धावेगा। 'बहन तू भरोसा नहीं करेगी है बड़ी देर तक पुत्तों में खिर घुसाए रोते रहे रोते रहे।'

वाजिबी नहीं है अभी धायी।

हार पर हरबारा लड़ा था। उसके पीहर का हरबार था। इन बबों में वह खो-लीन बार मेंके धयी थी। क्याका दिन तक न वह धायी थी। मसुरान के इतने बड़े बार को धकेली साम के भरोसे नहीं छोड़ा था मरना था। हर मारे पनु और इस पर खेती-बाड़ी का काम। धन-वह धयी और धागा के बिपरीत जहरी लोण धायी। फिर उसका मन भी वही नहीं लगता था। यहाँ बम-खे-बम इस बात की बराबर जरा भी नहीं थी कि उसका पति उसे छोड़कर क्यों जाता गया ? अभी जानते थे कि उसका धपने पिता से मयका हो गया था या वह जीता में मुरती हार न पाय इस भय ने भाग गया था पर उसका पीहर को नगियाँ और कुड़ाये उसे इस धन को लेकर धनेक मयास दिया बन्नी थी। कुपेक ने भारत के धनुमान बमदग्ग्य विरम भी बना लिये थे। ये विजिब और भूरे रिगो शुब रन लेकर गुमान जाते थे बिपरीत उसे सत्य बरके सब उसका मन धेचन हो जाता था। 'उमे पुत्त-मी महमूम होना थी। वह घोबती थी कि लोग साथ को धनुमान न पकड़ने का पैदा करते हैं

घीर उनके हाथ एक झूठ था जाता है ।

उसकी सलियाँ प्रायः उसके चरित्र को लेकर ही बाँटें बनाती थीं ।
 क्योंकि जब उसका स्वभाव वाणी बर्बर हो गया था घीर भी उसका
 संघी बनगिया उसे पिछली बातें बरा भी वगल नहीं घाती थीं । वह
 पीहर में प्रायः अपनी पाँ के पास बैठती थी घीर उसे बार-बार यह
 दिसाई देनी पड़ती थी कि उसका जबाई एक-एक दिन सौटकर
 जकर पायेगा ।

घीर आज फिर उस हरनारे को देखकर उसके कत्ती बड़ी घाव
 मचल की । पूछा "क्यों पाये हो जेदा ?"

"मैं ने मुझे बुलाया है ।"

"क्यों ? उसकी सहा तो टीक है ।"

"हाँ । सारा मुल है । मुझे बहुत-बहुत कहकर बुलाया है । मैं बड़ी
 बार करती है । बार-बार कहती है कि मुझे लावनी की बड़ी
 बिता है ।"

"मैं से कह दीजो कि उसकी बरा भी बिता न किया करे । मुझे
 कहाई के हाथ घाव नहीं केही है । मैं यहाँ मूल पावन्द दे हूँ । साथ
 कीरित्वा देनी है ।"

"किन्तु ?"

"कह दीजो कि वह इतने बड़े घर को किसक पावन्द छोड़कर पाये ।
 चास बुझी हो रही है । पसु बड़ रहे हैं । माई बड़ा खंखाल लया हुआ
 है यहाँ मैं की बीरब बेंबा दीजो । मेरी धीर से बहुत-बहुत बार करना
 करीमो ।"

हरफारा दूतरे दिन बना गया ।

×

×

×

‘सुना बहू !’

‘बया ?’

‘माँछा बापस घा गयो है ।’

‘क्यों ?’

‘बहूनी है कि मेरा मन वहाँ नहीं गया ।’

‘देने पूछा कि फिर यहाँ क्या करेगी ?’

‘बहू रही भी कि अपना पुराना बसा बापस शुरू करेगी । दो दिन की बपह एक दिन लाऊँगी । मैं बापस करवा बसाऊँगी ।

मैं उनमें मिश्रूँगी । सावित्री ने माँ से कहा ।

माँ चौंकर बोली ‘ना बहू ना उनका संग अच्छा नहीं है । वह चरित्र की सोनी नहीं है ।’

‘तो क्या हुआ बापको मुझ पर तो भरोसा है ।’

हूँ टीक कहनी है । पर जाने के पास थोरा बीते रमन बदले पर सफल बकर बदल जानी है ।

द्विद बाप यहीन रने कि माँछा टीक हो जायेगी रमन कुमग्रन कुमग्रन बन जायेगे ।’ सावित्री ने केवल माँ की बात का उत्तर दिया ।

‘मेकिन ?’

‘माँ बी । माँछा एक अच्छी रनी है । उनमें कोई कुमग्रन नहीं है । यहाँ के लोग हर पनवान के बारे में अनुमान के रिस्के ल डालते हैं । नब्बी बात कहें माँछा ने बदनामी पायी तो बापके बड़े बेटे के

रण । उसने अपने मिश्रूर को पोंछा तो बापके बड़े बेटे का बारा बुरियाँ दी तो बापके बड़े बेटे के कारण । माँ बी । प्रम एक अच्छी बीक

है। ईश्वर बचाये इससे, जहाँ जिनको यह साग मज पाती है उसे किसी का भी डर नहीं रहता।

माँ भीचकी यह नहीं। इसका लिए यह नया शरण था। क्या प्रभु इसका प्रतिमान होता है? फिर भी माँ ने ध्यान की संभाला। टीक जमी लख जिस लख हूँगी कड़ियाँ अपने को बचाने का अन्तिम हम तक प्रयास करती है।

“मेडिन एक पति के होते हुए हमारे पुत्र से प्रेम करना अच्छी सलाह नहीं हो सकती।”

“उसने ऐसा कहा किन्ना? उसने या उसके पति ने दोनों में से एक-दो-एक को छोड़ दिया था। छोड़ने के साथ सम्बन्ध समाप्त हो गया।

“मेडिन हमारा धर्म?”

“यह साठिन का हमारा होगा है और हमारा धर्म। उनकी बात में पति को छोड़ कर नये रिश्ते करना कोई अपराध नहीं। साथ ही यह आत्मा के सुख के लिए है न कि दुःख के लिए।”

माँ ने अपने अस्तित्व पर जोर डाला और बोली “तोच कहते हैं कि उसने खुद अपने पति को छोड़ा था।”

“नहीं माँ एक बार आपके छोटे बेटे ने मुझे बताया था कि एक रात उसका पति उसका पीकर आया और उसे बार-बार कर-कर से बिरास दिया क्योंकि उसका किसी धर्म स्त्री के करार सम्बन्ध था।”

“मैं नहीं जानती।” माँ ने जोर-जोर से कहा।

“माँ भी आप धायक यह भी नहीं जानती कि उसने आपके बड़े बेटे की बाप में एक पैड़ भी बताया है। उस पैड़ को गहर-जमीर करने के लिए वह क्या नहीं करती है?”

“सच।”

आप अपनी धाँवों से देख लें। धाँवों देखी भूटी नहीं हो सकती।”

“यै बस पकर देख ली।”

उसी रात जब सारा माँ बस कर लो गया तब माँ का बर्तन

स्वर पूँच उठा । वह भूमल गा रही थी । अपने प्रियतम मल्ल की प्रतीक्षा में व्याकुल उस प्रेम बीवानी भूमल नील बर्द धीर बिखल-म्यथा से त्रिपेक्षित वह दीव धाज भी बिखलकुल रमणियों के हृदय का मपीत बसा हुआ है—

छोड़ो राखो छाबलिहूँ रो मेह
भूमल धामा बीजनी
बरखल लाम्यो मेह
मकुल्लु मापी बीजनी
छोड़ो राखो राख बम्पे रो फून
भूमल केनू कामदी
महकल लाम्यो बम्पे रो फून
सलकल लानी केनू कामदी
छोड़ो राखो काजलिये रो दोब
भूमल बिबली बजान रो
छोड़ो राखो मोतीके रो हार
भूमल यता रो बुकबुकी

लौक्य का कला बड़ा मोटा बा । छाबिरो उस दीव के मर्भ को सनम रही थी । सगाटे में गूँधता हुआ नील बने अपने पति के बिसेय को पीड़ा का स्मरण दिला रहा बा । दीव के भागों में परम्पर इनका सारात्म्य बा कि उनको अपने से समय नहीं किया जा सकता फिर भी भुवन मदेन्द्र से समन हो यही मैं जानै पति मे सलप हो यही । हाय दुर्भाग्य ।

नील अब भी समवरत कर से छाया हुआ बा ।

लाबिरी को लवा नौई उनके समीप ही बह रहा है—भुन गोर मे भुन—छोड़ा राख लाम्यो बा मेह है तो भूमल उच्च बनने वाली बिजनी । छोड़ा राख बम्पे बा फून है तो भूमल केने के वेद को दानी भुमार । छोड़ा राख धाज बा बाजल है तो बजल सन यही बिरी ।

मोड़ा चारा मोठियो का हार है तो भूमल भले का बहना धुनधुकी ।
इतना साहस । इतना मेत । फिर भी असमाध । धात्र धपर उत्तका बरि
उत्तके पाग होता तो यह उत्तके घने में धपनी बाहुं जाम कर बहती—
मुझे अकसे मत छोड़ना । हाथ बेचरी भूमल धपने राणा नदेश की
प्रतीक्षा में बर गयी ।

“निमोही ! सावित्री ने मर-ही-मर मुझे बहा “वे मरें सबके मर
निमोही होत है । परपर की तरह इनका दिन होता है । कैंसे धपनी
बहुषों का छोड़कर चले जाते हैं । धात्र सावित्री को बापल देरी बाह
उत्ताने लगी । बर बिजले पर करबटें बलसती रही । उसके मर-मर में
एक अनिबचनीय बीड़ाबाधक मुध लहरें मारने लगा । बीरे-बीरे बह
रोती रही । उसे ह्मारी बाहें उत्ताने लगी । उस दिन बह काप्री रात
मये जायती रही फिर बह धपने धात्रको समझ कर यह बीरज देकर
दि यह सब बिधि के धेन है सो गयी ।

मुबद् का काम सारम करके बह लीछा के मही मही । लीछा ने धपने
बर को बापल सीध-पोत लिया बा । बह धभी उस देह को वाली है
रही भी बा देह उसके प्रेम की स्मृति का प्रतीक बा ।

लीछा पल धर मून धारे लड़ी रही । लखकी धपिमा से लग रहा बा
धैं बह उसे पहचानने की बैठा कर रही है । सावित्री भी उसके लाने
बिलकुल हुए धकी भी । एकएक लीछा धपने होंठों पर मुस्कान बिखरेती
हुई बोली “धरी तू तरबग की बह ।” “डिक्-डिक्” उत्तने हल्की डिक
धारी धारी छोर पुन बोली “तू बहुत बदल पयी है बैरी बहन ।

“तू भी । बर मैं तुझे पहचान लुल्ल मही ।” दोनों अनिया पाध-पाध
बैठ गयीं । सावित्री ने हजर-उबर की बाधें करके पूछा “धीर कोई
नया समाचार ?”

लीछा उत्तका प्रश्न समझ गयी ।

धलिक मीन ।

सावित्री की धांधों में बेबना ठहरने लगी । लीछा लम्बी माह छोड़कर

बोली "मैं भूठ नहीं बोलूंगी। मुझे साराण नहीं मिला। कई बार बूझा भी। कुछ पल नहीं निकला। बड़ा भावना है। जबर सोचता होया कि जब घर कोन या मुँह सेकर जाऊँ ?"

गाबिरी की घाँसे भर भायीं। बिबलित स्वर से बहु बोली लाछा। रात दिन मेरी घाँसे उनके दर्शन के लिए तरसती रहती है। मैं उनसे बावस घावाने के लिए कबा-कबा कामना नहीं करती। सभी बेबी-देवठाओं को जानती हूँ। कल-उपवास करती हूँ। तब-जब को पावन रगती हूँ। पर जब लपटा है कि सब व्यर्थ हो रहा है। घासाएँ हूट रही हैं। मन कुटी चेत रही है।"

लाछा को घबरा ठेक पार हो घावा 'जम्मे कहा कि ईबर बड़ा निर्दयी है। वह किसी को अधिक मुसी नहीं देय सकता वह बादमी को बड़े अन्धेरे में रसता है। उसे क्या घटने जाता है इसमें बड़ा बसबर रहता है। किसी के साथ कुछ न कुछ बिबल सपाये रहता है। कोन जानता या कि येरा ठेक मुझने इस बिबलता से क्षीन लिया जायेगा। कोन जानता या कि सरकर में स्नान करना हो उसका 'जात' है। इस पानी में ही बसबी मोत छिरी हुई है।

लाछा की घाँसे भर भायीं। जम्मे अपने पस्नु से घाँगे पोंछी घोर बोली "तू नहीं जानती कि उस दिन मैं किसी गुप्त थी। हम मोस बहुत देर तक रुने आसमान के नीचे धूमते रहे। मैंने ही जम्मे कहा या कि घाव हम पीर लायेके किन्तु होनी कुछ और ही थी। बात जब भी अपने को चख लकती है। जब भी रात के लग्गाने में बहम होता है कि वह मेरे पास लाता है। मैं उसे पीत गुमाती हूँ। वह मुझे बाँहों में भर कर रहता—"जहाँ लाछा जायगी वहाँ गाया कर, इसके दर्द को मैं नहीं सह सकता। पर मैं उसे वह ही गुमाती हूँ। वह दर्द में गरो जाता है। रो पड़ता है। जब जम्मे बहुत पार लायो। दगपी कि नीत स्वयं पूरा रहा।"

"मैं भी मुझे नहीं देता पीत मय लाया कर। वह पीत मेरे निबल

सूत्रों की भी पीड़ा पहुँचा सकता है। कुछ समागिर्ने और भी है जिसके प्रीतम उगड़ छोड़ कर परदेय जाने पय है। जो रात की साय-नाय में धबोल घाँसुओं से अपने छोड़ने को निगोषा करती हैं।

“क्या बर्बे कहन मैं तेरू को नहीं भूम सकती। बहु छाँस के साथ ही इस घरीर से निजलेगी।” उसने एक लम्बा सॉम लिया “तू नहीं जानती कि तेरू बिठना प्यारा था। मैंने कभी भी उसे अनुचित नाम के लिए नहीं कहा। वह मुझ प्यारा था कि साँसी के बार क्या होया?”

मैं हँसकर कहती “होना बरा? मैं टहरी गतिन करना जमाती रहूँगी और तेरी माता बपती रहूँगी। जाने वाली वह को पय भी कह नहीं लेने लूँगी।”

वह कहता “मुझे तेरे सिवाय कोई बोली ही नहीं लगती है।”

“क्या पता था मैंने वाली वह तुझ के क्या जानू करे। और साबिबी तुझे सब कहती हूँ कि सायब तू उसे अपने में रखा लेती वह मुझे भूमने भी तय जाता। वह सरबल की तरह डरपोक बड़ी था। वह कभी किसी से नहीं डरता था। बड़ा दिलेर था। वह तुझे छोड़ कर कभी नहीं जाता। कौन ऐसा निर्मोही होया जो तुझ जैसी सुन्दर, और साँसी स्त्री को छोड़ कर राह राह की छोकरे जायेगा। वे विरमाये साँसी के काम है। और वह भी सही है फिर तेरू मुझसे बहुत दूर रह कर भी मेरे प्रेम की बड करता।”

साबिबी एक नई मनोदया में विर नई। उसके कम्बना-नौक मैं तेरू का चित्र उमरने लगा। एक सुन्दर बलिष्ठ युवक। निर्भीक और तेज। जो उसके प्रेम में डूबा रहता है। उसकी बाहों में इतनी ताकत है कि वह उस सरबल की तरह धल मर में ही नहीं बिताता बल्कि उसे रात भर बाँधे रहता है। गर्म धार्मिक और गर्म स्पर्श। एक अकल्पनीय लसेबना में वह खो-सी गई। बड़ी देर तक वह प्रकृतिस्व बीठी रही। उसे अकामक वह अनुभव हुआ कि अपर्युक्त इन्द्र वीरस है। उसमें बहने की तरफ जल जला नहीं करती है। सबकुछ उसका मन भर गया है।

“क्या सोचने लगी ?” लीला ने पूछा :

“बुद्ध नहीं।” साय ही वह जवाब हो गई। उसने क्यों एक ऐसी दुष्कृत्यता की कि जिससे उसके सतीत्व को तोड़ दिया जाने का प्रयत्न किया जा सके। वह एक विवाहिता है। कम में बहुत विद्वान् रहने वाली। पहले पहले वेद को लेकर ऐसी पवित्र बातें कही बिचारी ? वह दूसरे से बदमाश करने लगी कि वह उसे इस पार क लिए दामा कर दे। सबकी धाँधलें बुद्ध बीती हो गईं।

“तुझे मेरी बातों से दुःख हुआ क्या ?” लीला ने फिर पूछा।

“नहीं।”

“तुझे दामा करना तेरा पति मर चुका एक दरपोक इन्सान है। वह जिसकी ओर उसके टेढ़े-मेढ़े रास्तों से भागता है।

“घण्टा हो या बुरा मेरे जैसी घमघसान लकी क लिए हमने बड़ कर धीरे क्या पाप हो सकता है कि वह अपने पति की जिन्दा मुने। लीला ! बुद्ध बातों में भाग्य ही लगीरि है। मैं इसे भाग्य की ही बात ही मानती हूँ। जिस लड़के तुझे वेद की के मुग का प्राण न होना।”

लीला को कोई जवाब नहीं मिला।

सायिनी मभीर हो गई। वह उस देव को देखती हुई धीरे धीरे बोली “तुने यह वेद मना लिया है। इस देव में तू तेरा जेठ को की माया का नाम मानती है किन्तु तुझे बता कि क्या तेरा तेरा तुझे बारस बिल जाणा ? नहीं ये सब मन के धीरे हैं। हममें मजबूत नहीं है। हमको कोई भीर नहीं है।”

लीला ने अनिच्छा किया “—ह नहीं है कि वह मुझ न मिले किन्तु माया का मनोव भी एक बीर होता है। मैं राज के समय इस देव के नाम बंद जानी हूँ। मुममुनाली हूँ। एक लड़की-की मेरे पास धरर बैठ जाती है। वह लड़की मेरे तेरा के बिना धीरे जिन्दा की नहीं हो सकती।

“तू हो बता न एक दिन मेरे लड़के में एक मरना देना। तुझे मेरा तेरा वह प्य है—तुझे दाँव में छोड़कर जाती हूँ।”

पूजों को भी पीड़ा पहुँचा सकता है। कुछ धर्माग्रिमें धीर भी हैं जिनके प्रीतम उन्हें छोड़ कर परदेस चले गये हैं। जो राज की साय-नाय में अबोल घांगुलों में अपने घोड़नों को बियोया करती हैं।

जया बड़े बहान में तेरू को नहीं भूल गयी। वह सांग के साथ ही इत गरीर से निकसेयी।" अपने एक लम्बा सांग लिया तू नहीं जानती कि तेरू रितमा प्यारा था। मैंने कभी भी उसे अनुपिन नाम के लिए नहीं कहा। वह मुझ पुछना या कि छादी के बाह क्या होया?"

मैं हँसकर बहती, "होना क्या? मैं छदूरी सातिन बरमा बसाती रहूँगी और तेरी माता बपती रहूँगी। जान वाली वह को बर भी कष्ट नहीं भेजने दूँगी।"

वह कहता "मुझे तेरे बिचाय कोई बोली ही नहीं लगती है।"

क्या पता जाने वाली वह तुम्ह से क्या जानू करदे। और साबिजी तुम्हें सब कहती हैं कि चापद तू उसे अपने में रमा लेती वह मुझे भूलने भी सब जाता। वह सरबण की तरह डरपोक नहीं था। वह कभी किसी से नहीं डरता था। बड़ा बिनेर था। वह तुम्हें छोड़ कर कभी नहीं जाता। कौन ऐसा निर्मोही होना जो तुम्हें जैसी सुन्दर और साखी स्त्री को छोड़ कर राह राह की ठोकरें खायेगा। ये निरमाथे आदमी के काम हैं। और वह भी सही है फिर तेरू मुझसे बहुत दूर रह कर भी मेरे प्रेम की कद्र करता।"

साबिजी एक बड़ी मनोदया में फिर गई। उसके कल्पना-सोक में तेरू का चित्र उभरने लगा। एक सुन्दर बलिष्ठ युवक। निर्मोक और तेज। जो उसके प्रेम में डूबा रहता है। उसकी माहों से इतनी ताकत है कि वह उसे सरबण की तरह बाण-बर में ही नहीं बिचता बल्कि उसे रात भर बांधे रहता है। बम धाविगन धीर गर्म स्वर्ण। एक अकल्पनीय उत्तेजना में वह जो-सी गई। बड़ी बेर तब वह ब्रह्मिष्ठ बँटी रही। उसे मकाबक यह अनुभव हुआ कि उपर्युक्त इन्द्र नीरस है। उसमें पहले की तरह उत्तेजना नहीं भरती है। सबकुछ उसका मन मर गया है।

“क्या सोचने लगी ? लीछा ने पूछा ।

“तुझ नहीं । साम ही बह बहास हो गई । उसने क्यों एक ऐसी दुष्कल्पना की कि जिससे उसके सतीत्य को सीद्ध होने का सबसर मिलता है । वह एक बिबाहिता है । धर्म में घट्ट बिबाहान रखने बापी । उसने अपने बैठ को लेकर ऐसी पवित्र बातें कयी बिबाही ? वह ईश्वर से परदासना करने लगी कि वह उसे इस पात्र के लिए लमा कर है । उसकी माँनें कुछ चीली हो गई ।

“तुझे मेरी बातों से कुछ हुआ क्या ?” लीछा ने फिर पूछा ।

“नहीं ।”

मर रहा है तीन दिन से मुझे कोई चानी नहीं पिसा रहा है।" और मुझ पेड़ सूखा-सूखा लगा। मैं धातुम-आतुम हो गई। मुझ हर पड़ी वह सूखा पेड़ दिग्गने लगा। मेरा मन मंताव से भर गया। जानतो हो मैंने मुझ की रोटी छोड़ दी। मैंने जीवन को प्रेम पर स्वीकार कर दिया। मुझे इस पेड़ के महसूसाने के निशाय कुछ भी नहीं चाहिए। और सपना लही का इन पेड़ को तीन दिन से चानी नहीं पिसा का रहा का। यह क्या है? मैं इसे प्रेम का सारव लयजनी हूँ।"

सावित्री ने कोई जवाब नहीं दिया। उसने मन ही मन इतना समझव कहा जीवानी है जीवानी।

और वह इस बातनी से फिर मिलने का वाक्य करके चली आई।

×

×

×

उस दिन भी गर्म से फूली का रही थी। ईसाय की घटा-टीक (अपना तुलिया) का रही थी। सावित्री ने हूँ-बाजरी का बिचड़ा फूट कर आई थी। उसकी बीनी पड़ीने से बीबी हुई थी। कच्चा रंग होने के कारण उसके धरीर पर साध-साध पारिमी बन गई थी। उसने अपने का साध फिर पर रखा टोपिया (एक तरह का बतन) उतारा। मूँह से कुछ पारती हुई वह बीनी "साज नरनी प्राण से रही है। बिचड़ा फूटा तो पकर ही है पर प्राण निकलने बाकी नहीं रहे।"

"तु तो बड़ी बिचड़ा फूट रही थी और मैं केवल मही नाँव पछावे पड़ी थी फिर भी भी बड़ ही धयुज रहा का।" पाँ के भी कहा।

उमने एक पंखी हाव में से ली। पंखी पर मोटा कपड़ा बड़ा हुआ था। वह उससे हवा करने लगी। उपर सौ सोए हुए राजा पर पंखा भ्रम रही थी।

वह ! मन्त्रित्री ने देखा — “माँ भाग आत्मन्त्र प्रसन्न है।

१।”

‘घात बँहमी फिर आमी थी। मुझे अपना दुलहा मुनाउने-मुनाउते से रही। मैंने उन धोरत बचाया। बहने लगी “दुल्ल में अपने परादे हो जाते हैं। मैं अपनी भीनी सामू के पास गयी थी। घात बिरबास नहीं करेगी यह बही भीनी सामू है जो हमारे यहाँ रात-दिन सारे कबीले के साथ बड़ी रहती थी। हमारे यहाँ खाती-पीती थी। यहीं से उमनी बटी के ब्याह का सारा प्रबन्ध हुआ था। किन्तु घात हमारा बच बुटा हुआ हूँ उमनी मदद की अकरत पड़ी तो उसने साफ वस्त्रा भ्रष्ट दिया। जैसे हमने उन पर कोई उपकार किया ही नहीं है।”

“ममय-ममय की बात होती है। मैंने जान्ती से कहा।

‘मोय टीक बहने हैं कि हम कमिदुप में अपनी से ज्यादा परादे काम पाते हैं मित्रों की जगह दुश्मन अकरतें पूरी करते हैं। घात हमारे उस दिन बन्द नहीं करता तो भूय से बच बिलबिलाते हुए नर जाते। वह तो ऐसे रहे बहन मने कि बीन-मा मूँह लेकर भीनी के पास आऊँ, बीन-भी सान से बहन माबितरी को धरना यह कामा यह दिगाऊँ।” मैंने उसे धारवाक्य दिया और कहा कि बीन से बहना कि मुझसे बीन तो लाख धर्म ? मेरी माँ मेरी पत्नी मादनी (मर्मा) थी। हम दोनों बचपन से मंद-मंद बुद्ध-मुक्तिओं का गम मिलनी थीं। धरी यह तो बुद्धन के मत ही ममय कि हरगुण के कारण मन में पाँटे पड़ गयी।

“और यह भी बहनी है कि अगर मेरी बहन बिरा होती तो वे पाँटे भी नहीं पड़ने देती। वह बहन ही ममय दिन की थी।”

उमने मेरे पंख बन्द लिये। रोनी हुई भीनी “मैं उन सबकी धोर ने लिखा नादनी है। घात इन पंख नर मैं बहारी कोई बन्द करनेवाला

नहीं है। जिसका बुरा समय आगया है कि बटी हुई धेनुजी पर बोई बैठाव भी नहीं करता” “मुझे उस पर दया आ गयी। मैंने उसे बीस पाँचवीं ध्यान घीर दिया। वह फिरतार्थ हो गयी।

“राजा भी उठ गये थे। सावनी उमै कुमने लयी। माँ विचारों में खोयी रही। उसका बड़ती जा रही थी। उसका पहरा कर माँ बोली “प्याज की बरसी आगयेवा है। जी पहरा रहा है।”

सावित्री ने संधीर-स्वर में कहा माँ जी एक बात कहूँ

माँ ने उसको धोर देगा। वह एक्कट माँ को बेराकर बोली “मेरा विचार है कि एक प्याज रोमी जाय—समुद्र की के साथ से। यहाँ से दो कोस पर जो बीराहा है वहाँ पानी की बड़ी तपी है। लोग प्य से मुस्ताते हैं। मुसमान काका-मा मनसुरा को कह रही थे कि मैं बंदा ब्रह्मा कर रहा हूँ वम एक आरामी की जगह है। कोई पन्द्रह बरबे माह का लव है। मैं समझती हूँ कि यह मार हम अपने ऊपर उटाने। बीता को इसके लिए तैयार किया जाय उसकी सहायता हो जायेगी और समुद्र की की धारणा को धामि मिलेगी। यह दो तरफा वम होया।

मेरी माँ ने उसे स्वीकार कर लिया।

दुन्दरे दिन सावित्री बुद बदली के यहाँ गयी। बाहर ही बीता मिस गया। उसका बेहूषा परबन्त बिहूषा और धिनोना हो गया था। उसकी धाराव भी बिबिध हो गयी थी। ऐसा प्रतीत होता था जैसे वह नाक में बीस रहा हो। धाकृति पर उरामी क बादम छायें हुए थे।

सावित्री ने अट से थू बट निकाल लिया। बुबके एक कोने में छड़ी हो गयी।

बीता अट से बाहर धिसक गया। सावित्री उसे रोकने के लिए बिबिधारी देती रही—दिब दिब। यह दिबकारी रोकने के लिए कही गयी। किन्तु बीता नहीं रुका। वह चला गया।

सावित्री ने उसके जाते ही बंदसी को बुलाया। बंदसी हुलसित

होकर घायी ।

“या बहन या भाग रास्ता कैसे भूल गयी ? उसके स्वर में भारमय धारण था ।

“रास्ता नहीं भूमी हूँ । नाम से ही घायी हूँ । तेरे उनको रोना बाह्य पर बह रहे ही नहीं ।

“बहन ! उनमें एक घजीब-सी घावत था गर्भा है । किसी से बोसते नहीं । कभी हँसते नहीं । हाँ कभी-कभी रात को रोते बकर हैं । मैं बुझती हूँ तो कहते हैं कि मैं अपने भाग्य को रो रहा हूँ । मैं समझती हूँ हमसे कोई साज नहीं होगा । नाम पुनर्वाच करने से होगा ।”

“मैं इसी बावत तुम्हने भिन्नने घायी हूँ । बात यह है कि पाँच की तरफ से एक प्याऊ घुलने वाली है । उसमें एक घावमी को रखना है । उस घावमी की तनका १२ रुपये होगी । वे रुपये लोन देने । हम चाहते हैं कि तु जीता को इसके लिए तैयार कर दे । घर में कुछ-न-कुछ दायेगा ही ।”

बंदनी कुछ देर मौन रही । फिर वह गद्गद स्वर में बोली “तुम लोन देवता हो । पता नहीं समुद्री ने आपसे क्यों झगड़ा कर लिया ?”

“छोड़ो पुरानी बातों को । फिर बात पक्की रही न ?

“रही ।”

छात्रिणी वहीं से लौट आयी । उसने देखा कि घर में दस-पाँच जने बैठे हैं । वह सभी उसके कभीसे के थे । वे इस बात की गिनायत करने धाये थे कि पाँच लोन चौपटी हरमुख के परिवार को मदद क्यों करते हैं । यह टीक नहीं है । हमने बाँके की आधा मुरग में कुछ दायेगी ।

“घोर बाँके एक सड़के ने कहानी मढ़ने में हथ कर दी । रोना हुआ वह बोना “बल रात बाबा ने मुझे अपने में कहा था कि तेरी बड़ी माँ घोर बाँकी चुक्रे-चुक्रे मेरे दुस्मन को हूब लिता रही है । हमने मेरी धारणा बहुत बट पानी है धार सभी लोन जाकर जमे रोह ।”

छात्रिणी ने मुता । मुन कर वह झुपट में मुक्कन पड़ी । उस बंदनी

घपने लोग हैं। घास जमका बाप खेल में है। उसका बैर-जमीन बि
 गयी है। वह दाने-दाने का महंगा है। ऐसी स्थिति में कौन है उस
 घपना। ये सभी बुरी नीति के हैं। इनकी नीति है धोर को नहे धोर
 कर कुछ को कहे भुग (भोक्ता)। समझी घास। क्या य सोम न
 जानते कि बहुत बेचारी घफेसी रात-दिन गेड में काम करती है। क
 इनके नि य क्या मट्टी जागरी। फिर में कौन है घपने। घपने है केवल
 घपने को हाथ घपनी छि धोर घपना भाव्य।

“तू ठीक बहती है देटी।

“हम जीता भी को घपनी प्याऊ में रणोंये।’

‘रत है।’

“यह जमकी एचमुच बड़ी हार होमी।”

दोनों ने यह निश्चय कर लिया। सावित्री ने माँ की दुबसता को
 पकड़ लिया था और वह यह विश्वास बैठा रही थी कि यह सब का
 सब को भीषा विद्याने के लिए कर रही है। हालाँकि वह परदे में मन
 बीठा के परिवार की मरह कर रही थी।

×

×

×

—

मृष्टा बीठा निराश होता गया।

उनकी बिरानी हुई हाथ धोर घपने सरीर के प्रति सापरवाही
 फैलकर लोप उछे बावला कहने लगे। वहने लगे कि बेचाप हार बा
 गया है। भोसी गाली होने के साथ मन भी धम्म से खाली हो गया है।

एक दिन साबित्री के पास चंदनी आयी थी ।

वह रोकर कहने लगी "भय मैं क्या करूँ बहन, वह मानते ही नहीं । कहते हैं कि आदमी को एक हफ्ता तक बिरना चाहिये । हर चीज की एक चीन्हा होती है । मैं उनके दाहनालों से घायि थी बहुत दर्द पड़ा है अब प्रायश्चित्त नहीं करना चाहता ।"

"बहु पयसा है । उसे ठानू भी के बात मजना ठानू भी समझ देनी ।"

मैं उनसे कहनी हूँ कि मरने पर कितने दिन मरनेवा ? प्रायश्चित्त के लिए हाथ-पैर बलान से हो काम चलना । जानती है उन्होंने क्या जवाब दिया । वह आकाश की ओर देखते हुए बोले मैं कुछ भी नहीं जानता । जिसने कर्म दिया है वह पासेवा भी । वही हाथी को मन भर घोर पीटी को मन भर देता है ।" धुल पर बहाड़ फिर पड़ा । ऐसी बातों से वेद नहीं भर सकता ।

"आदमी भी क्या कर ? समय की टोकरें उसे तोड़ देती है । फिर भी तुम्हें हिम्मत नहीं हारनी चाहिए । उसे समझाती रहो नाम भर लेना ।" साबित्री ने चंदनी को हाथम बंधाया ।

चंदनी उस समय लगी लगी । जीता उसकी बात मानने को तैयार नहीं हुआ । वह हर समय ईश्वर की माया की दुहाई देने लगा । वह सीतरे की दिन बच्चों की किम्वदन्तियाँ और धाँसुओं के उसे झगझोर दिया जैसे पाषाण को नष्ट कर जलपात वह निकली हो । वह बीर उठा । अपने अपने दोनो बच्चे को ऊँचा ऊँचा की रग मगाते मुता । वह निरन्तर रोज रहा । वह भीतर की भाव से भीषी मर्मन रिग बँटा रहा । एतादृश वह बीतता हुआ भा बोला "यह करक का बीडा क्यों रो रहा है ?"

चंदनी सन्न लगी । उसकी आँखों में आँसू टपक आये । वह मगप देना से उसकी ओर देखती रही । उसके चेहरे की तरफ़ा समझ थी ।

बदली चुप रही ।

बच्चा घर भी रो रहा था ।

बीता ने फिर कहा “यह क्यों रोता है ?”

“मुग्धा है ।”

बीता चुप हो गया । भूख का उनके पान भी कोई उपाय नहीं था । वह बोरी ढेर मुन्न रहा । बाह में बोला “ये प्याऊ में नीकरी कर लूँगा । घीर बदली न इन बातों को माँबिबी को नहीं बताया । बीता ने कहा “मैं यह झन्झटी तरह जानता हूँ कि वह मुझे दूगरे कम से मारना चाहती है । दुस्मन को इस तरह बीतना भी एक खेद तरीका है ।

तू मेरी पीड़ा को नहीं समझती । जिस व्यक्तियों के घुन का मैं प्यासा या उसका परलों की चुन हो रहा हूँ अब । यह असह्य है । काय ईस्वर मुझे धरम पान बुला रोता ।”

बंदनी ने साहस करके बताया “भाब जब अपने भी घराने हो गये हैं तब उन्हे इमारी मरव की । हाय जेमाना मुझे भी गवाय नहीं ।”

“तब धपर इन नाम-बन्धनों की बिता घीर रोय मोह न होता तो मैं भापू हो पाया ।”

“हिम्मत हारने से कुछ नहीं होगा ।” बंदनी ने अपने नाम के मुसल घाँसुओं को पोंछते हुए कहा ।

उसके तीसरे दिन गाँव की सहायना से प्याऊ लोन दी गयी । मुबह-मुबह ऊँट पर पानी की टंकिवाँ मर कर जाती घीर बहोँ पर पड़े एक माटो-मटणियों को भर जाती । बीता वहीं पर दिन भर बैठा रहता था । इस एगोन में उसे बड़ी शांतिना मिलती थी । सौम्य का माना वह अपने साथ साठा था । यहाँ माणियों की जुहल बाणियों घीर नप्यों में सारा समय बीत जाता था ।

उसकी प्याऊ से बोड़ी दूर पर नयी हस्पताल बन रही थी । उसकी घटती हुई बिघाव इमारत का केन्द्र थी । जन्म जन्म बर्बाधों के साथ नये हस्पताल की

बन रहा था । रुझ भी गया बन रहा था । मुना जा रहा था कि रुझ
मिथिल से हाई-रुझ बन जायेगा ।

सेठ गोपीबन्ध ने अपने भाई भतीजों को ये सब टंक दे दिये थे ।
सोप उसके इस रहस्य को जानते थे और इसका खुब विरोध भी करते
थे । कम्युनिस्ट पार्टी के नेता ई-बरीप्रसाद ने एक दिन घाम छमा में
इन ठंकों की गुप्त बातों का पर्दाकाप किया—प्रमाण के साथ ।

इस प्याऊ पर इन सभी बच्चों की प्रायः पुनरावृत्तियाँ होती
रहती थी ।

दिन गुजरते गये ।

×

×

×

कर्मठ शक्ति की तरह नाशिकी का जीवन हो गया । वह प्रभु बन्धना
छतरप करती थी पर वह निष्प्रियता से एहसास बिम भयी । प्रभु
बन्धना में मेरे घा जाने की ही प्रार्थना होती थी ।

इस बार उसने मदन साबिक मान बैठा किया था । इसरी सपहना
निशिरा ने स्वयं मौन की एक घाम छमा में की । साबिका उस दिन
गुब शत्रु थी । नाम ने हनुमान बाबा का प्रनाद दिया था पर हर एक
गुणी के वर्ष पर माँ का मन मेरे लिए आहुत हो जाता और गुणियाँ
घायी हो जाती । इन बार तीन-चार रंजिहूर मजदूरों के साथ बदली
भी उसके साथ मैंने ये बात करती । सभी की उनके प्रति एक ही राय
थी कि यह सब नाशिकी के तर का फल है ।

बिगु जब उसकी अधिक श्रद्धा जगजाने का पत्रा पुरस्कार मिला तब उसका मन हर्ष से उत्सन्नित हो गया और घर छोटे ही बह बिदा से भर उठी । छोटे मेरी माद हो आयी । वह फूट-फूट कर रो पड़ी । दोनों सात बहुषों का मजबारा देवाने नाबिल था । फिर वह उठी और हनुमान बाबा के मन्दिर चली गयी । उसके धागे सिर टेक कर बोली "दीनबन्धु दीनानाथ । बस एक बार उगई मिसा है । मैं उनका दर्शन करना चाहती हूँ । इतने कठोर मत क्यों ' प्रभु ! प्रभु ॥ वह बहुत देर तक बिह्वल हो पड़ी रही ।

उस दिन वह जाना भी नहीं ला सकी ।

रात का सप्ताटा छड़ गया था । वह मँड़ी में बँटी थी । साठ बिछी थी । वह साठ जिस पर कभी मैं सोया करता था । वह उठे बैसती रही । उसे मया कि मैं सोया हुआ हूँ । रोस में पककर सीटा हूँ । बदन पकान पे हट रहा है । वह मेरे पाँव दबा रही है । पाँव दबाती-दबाती वह मजाक करने लग गयी है । मैं भिन्न-देता हूँ । वह पत्थर-सी बन जाती है । कहती है "भाप बड़े कठीर हूँ । मुझे कब लम्बे मन से प्यार करने ईश्वर जाने ?" मेरी माद ने उसके हिया को भर दिया और वह रो पड़ी । उसने अपने भाप से कहा बस एक बार या जस्य एक बार का ईश्वर मुझे उल्लस । अब मैं बियौष नहीं सह सकती ।"

वह उन रात ही नहीं सकी ।

कभी-कभी वह माँझ के पास चली जाती थी । तब दोनों अपने अप्राम्य प्रभुओं के बारे में बातचीत करती थी । भाप भी साबिबी उसके वहाँ चली गयी ।

माँझ का बरखा निरन्तर गति से चल रहा था । 'माँझी की का वह महान् प्रार्थना करना माँझ के लिए जीवनदाता बना हुआ था । जब तूफ कातती थी और छाती प्रामोचोर्मों को बेज देती थी । बिठना पैदा घाटा उससे पैदल भर लेती थी । उसका प्यार का प्रतीक वह पेड़ — — महमहाने लगा था । उसकी महक से पास-पास की भरती

सुवासित थी ।

“क्या कर रही है बहन !” घर में कुमठे ही सावित्री ने पूछा ।

“जो बट रहे हैं उसे पूछ कर रही हूँ ।”

वे दोनों बैठ गयीं ।

साँझ ने बैठते ही कहा ‘तुम्हें एक बात बताऊँ मामूली बात नहीं है ।’

“क्या ?”

“बाटों और राजपूतों में आपस मैत्र होने वाला है ।

“क्या कहती हो ?”

“नब ! मैत्र की बात भी गुप्त नहीं है ।”

“कैसे ?”

‘घरों यह सब निगोहे उन मैत्र का ही काम है । बाटों और राजपूतों में सत्तनपद्धतियों के नाकर धरना उल्लू सीधा कर दिया । राजपूत ठहरे घस्सड़ ! घान घान पर जान देने वाले किसी ने नाब में बड़ा दिया तो मड पड़े । अब अपने पुरजों के बदोमान में मय्य है और बाट की बुद्धि ही गिनती ? छत्र-करेब से लोगों दूर गीधे सरभ । जननी बुद्धि कोई भी सींगे बातों में निजान गल्ला है । हरमन जो अपने लोभ जालब डेकर यत्र बनेड़ा कर दिया । और जीन भा घत्र पद करने नव क्या है कि मेरी नाक सर्जनों ने नहीं गिनी और ने जाने है ।’

“जिन्हे जाती है ।” सावित्री बिचलित हो उठी !

“यह उमन नहीं बताया । और मैं क्या बताऊँगा ।

सावित्री ने इनमित्रता की मान ली ।

‘राय-राय सामन्त इतने मोल बट्ट प पड़ गये । यह माना वा सारा पात बीजा की गयेगा । यह पढ़ने ही मय्यी यात्र बडा देना तो पून-नार ही ही क्यों होगी ?’ साँझ ने कहा ।

सावित्री का मन घायल न कर गया । एक दिवार बिजरी की तरह उनके हिसाब में खींच गया कि उसे एक बार मुग्ध बीजा ने

मिसना चाहिए। उम कसम जिना देनी चाहिए कि वह किसी भी शर्त पर नाक कटने के ख़तरा का ख़तरा न करे ?

“जब सोचने लगी मैं” लीला ने उनके पीछे की ओर कहा।

सावित्री ने चौंक कर कहा, “बुद्ध नहीं-बुद्ध नहीं” अन्ध में चली फिर मिसूरी मुझे एक जरूरी काम पार हो गया।

वह सीपी बीता के घर पहुँची। बीता साट पर मेरा हुआ कोई बदन बुनबुना रहा था। उमके का कर्ण धुम में लल रहे थे। सावित्री ने पहली बार पीता। उ सीपी बात की। वह उम में मुझे बड़ा था। इसलिए वह रिवाज के अनुसार उमने बात नहीं कर सकती थी जिन्से आज उमने गात्र के बुरे को पीर डाला। वह अज्ञानांतर उमके सम्मुख जा खड़ी हुई। बीता चौंक पड़ा। वह पकड़ा उम। जाने को अग्रत हुआ कि सावित्री ने उम रोया “जरा आप छहरिये।

बीता के पाँव बसीन से बिपन्न बने।

“माई मा ! आज मैं आपसे प्रार्थना करने आयी हूँ।”

“मैं समझ गया तु पाण्डव यह कहने आयी है कि मैं व्यास पर ठीक समय पर पहुँच पाया हूँ” पर आज रोटी बनने में देर हो गयी। छोटे मुझे तो हलका ना ठाण (खर) है।”

“नहीं-नहीं। मैं घर पहुँच नहीं पायी हूँ। मैं तो आपको यह कहने आयी हूँ कि आप नाक कटने बागी बात की लज्जाई किसी से भी न करें। इससे ग जाने लोग क्या-क्या सोचने। मैं किसी से भी नहीं बच पायी हूँ पर इन बातों से मेरा रोम रोम सिहर जाता है। मैं आपसे हाथ जोड़ती हूँ।

“बीता भोग : हा।

“आपने मुझे बहुत कहा है। माई मा ! बहिन क धुम के लिए माई आकाश के तारे भी सा खरता है। मैं आपसे ऐसी ही पात्रा करूँगी।”

“तु बेठिक रह। मैं प्राण रहते हुए इस ख़तरा को अपनी बख़ाब

वर नहीं लाईया ।”

सावित्री के भिर का बोक उठर गया । वह कुछ देर बंरसी के पास टहरी । बच्चे की पूछ-चाछ की धीर घर धा गयी ।

माँ ने धावे ही कहा “मुभा वह उस सैठ के बच्चे की भाब लीब बर्बी निबामेमे । राम राम बर कितना नीब है । जाटों धीर रात्रपूठी को बापम में निडा दिया । भाब पाँच में कोई बहुत बड़े भादमी धाने धाने है ।

“भादमी बड़ा स्वाधी होता है । वह अपने मुख व सिण दूसरे के मुकसान को नहीं देखता । माँ की धीर के पंगे बाँते होते ही ऐम है । उनकी बूरा मबरमज्ज की धुल होती है जो अपने बास-बास के छोटे दुबल निरहाय लोचों को निबल बाने का तत्पर रहती है । यह वंसा केवल बर्निये को नहीं, हर जाति के इन्सान से ऐमे भवगुण घर देता है । बने इन्मानिब । से गिरा रता है ।”

‘मेने ऐसा बर्निपुव कभी कभी देगा । भादमी बहुत नीब हो गया है ।

रात्रा ने देखते-देखते दूध की पितास से रनाब कर लिया । दूध की जंजी हूँ नहरों ने उसे बड़ा ही हारमास्पद बना दिया ।

माँ ने कुनिम जगधने के साथ कहा ‘मे बैल धन नपुन को दूध में नटा कर धाया है ।”

रात्रा हुनक-हुनक कर धा रहा था । वह नया था । उसके पाँचों में पाँ ने छोटी बायल बहना दो धी दिसते बूँदक की बंद-बंद मधुर ध्वनि धा रही थी । दूध की नहरों ने उसके पाँचों को पिणो निडा धा दस लिए वरविम्ह धोवन में ध्वित हो रहे थ ।

वह अपनी लोठमी भापा में बोला “बक बक” दूध ।”

वह सावित्री को बह कहता था । पंगने बचपन के धरी मज्जोदन गुना था ।

माँ ने उसका हाथ बकक कर डीटा ‘कपूत बड़ी का हर बड़ी

उजाड़ करता रहता है। क्यों कुछ मिठाया बाकूनी एक थाली में गारी
 सीतानी भून धायेगा।"

माँ का इतना कहना था कि राजा रोने लगा। वह बह रोता था
 सब संगठे सहरे कर अपार करणा भाव छटती थी घोर देगने वाला
 इतिहास बिना नहीं रहता था। माँ इतिहास ही उठी। उसने लपक कर
 राजा को अपनी गोद में छठा लिया और उसे चुम कर पुष्पहारने लगी।
 आप ही अपनी सोन्नी से समझे घरों को पोंछने लगी।

बह कहती आ रही थी "देरे राजा को किन्ने हाँटा चुप-चुप-चुप
 हुए हो आ मेरे साहने।"

गाकिनी की आँखों में पावन ममता की रीसियाँ बसक रही थीं।

X

X

X

गाँव के दूध के परिवर्तनी मैदान में धाम सभा का आयोजन हुआ
 इन सभा में दो प्रमुख नेता धाये थे। एक राजा की प्रतापनिह और
 चौकरी राजाराम। दोनों संसद-संवरण थे। काँध में थे। राजपूतों और
 जाटों के बीच बढ़ती हुई बेमनस्य की खाई को पाटने के लिए इन दोनों
 ने इस मंच पर परिचय दिया था। जिसका परिणाम यह निकला कि
 राज मंच पर बीरासिंह का बेटा धर्मसिंह और हरगुरु का ममेरा भाई
 सुबायल दोनों साथ-साथ बैठे हुए थे। बीता नहीं धाया था। चलते
 कह दिया कि मेरा कोई बीरा नहीं है। धाम पहुँची बार जाट राजपूत
 साथ-साथ बैठे थे। उस व्यक्तिगत झगड़े पर जो जातीयता का आया
 पहचकर दोनों जाति के साधारण लोगों में यह भय बैठा दिया था कि

बढ़ कभी भी किसी का सीरा लगेया बड़ एक-दूसरे पर बाट किए बिना
नहीं खेला बड़ सारम तोता लप रहा था ।]

प्रतापसिंह ने लड़े होकर कहा "यह बहुत दुःख की बात है कि हम
इन्सानियत को नहीं इस युग में जातीयता को महत्त्व देते हैं। और
जातीयता को महत्त्व देने का तरीका भी हम देख चुके हैं। हमने हमारी
छात्रिणी को हार दिया। उनमें हमारी मिट्टी को ग्लू से रबकर बराबर
कर दिया। पहले यह पाँच एक घाटलें गाँव था। हम सभी भाँचारे के
घसावा मोचने भी नहीं थे किन्तु दूधर कुछ प्रतिस्पर्धावादी तत्त्व व्यक्ति-
बन्धनार्थ और पक्ष के गोम में इन्गानी लहू को भी बहाने से नहीं
द्विषत रहे हैं। घायल न सोचें कि सरकार हम घोर उन्मील है।
या कीर्तन ने हम घोर सोचें मूब सी हैं? नहीं बड़ सब रंग रही है।
यह घायल जिम्मे लगी है बड़ बड़ पाये जिना नहीं रह सरता। पर मैं
हमना चाहता हूँ कि उन लड़के को घायल ऐसा रव-ज्वन दे जिससे
हमारे मारे देश की छात्रिणी संय हो जाय। हमारी बूट का हमारे
दमनों में मरा लप उठमा है। क्या घायल चाहते हैं कि फिर हमारी
जनता बची छाय। कौन जाट है और कौन राजपूत। कौन ब्राह्मण
और कौन हरिजन? हम सभी एक हैं। संस्कारों की दृष्टि में और व्यक्त
हारिक दृष्टि से। फिर यह जनता क्या? मैं घायल माधना करता हूँ
कि यह जनता किन्हीं हमारा भ्रम है। किन्हीं कुछ मत्ता लोभुर थ्रिडियो
की माथिमें है। घायल उनकी जाता में बच और बच के निर्माण में लप
जायें। घायल देश घायल कुछ और माँग रहा है। बड़ माँग रहा है—
"मुझे लाल्हा को मुझे मरदा बना दो। यह सभी मरदा है जब हम केच
भीच और भर बाच का भ्रम जायें।"

उन्ने बैठे ही छात्रियों की बहमराष्ट में घायल भ्रम उठा। तब
राजाधाम की उठा। मन्त्रोपन के बरबाद उन्ने लगी। गंताले की
उनकी बीच-बीच में घायल थी।
बड़ बोले "माथियों तथा बहिनो! घायल घायल लपन मुझे बोले

जमाव करता रहता है। क्यों हुए गिराया मार्क की एक झपट दि गारी
संतानी भुन जायेगा।”

माँ का इतना कहना था कि राजा रोने लगा। जब वह रोता था
तब सतरु केहरे पर झपार रुझगा नाच छटती थी धीर दैतने बापा
हथिय हुए पिता नहीं रहता था। माँ हथिय ही उठी। उसने सपक कर
राजा को धपनी गोम में उठा लिया धीर छने चुम कर पुनरारने लगी।
गाय ही धपनी छोड़नी से समके गारेर को चोले लगी।

बह कहती जा रही थी मेरे राजा को बिगने हाँटा चुप-चुप-चुप
हुप हो जा मेरे साहने।”
गात्रिणी की माँसों के पावन समता की रसियाँ बघक रही थी।

X

X

X

गाँव के कपड़े के परिचयी मैदान में धाम समा का आयोजन हुआ
इस समा में दो प्रमुख मैठा धाये थे। राज राजा थी प्रतापनिह धीर
बीचरी राजाराम। दोनों समक-सदस्य थे। कपड़े में थे। राजपुतों धीर
बाटों के बीच बहती हुई बीमजस्व की लाई को पाटने के लिए दन दोनों
ने इकर प्रपक परिचय किया था। जिसका परिणाम यह निकसा कि
धाम मंच पर पौराणिक का बड़ा चम्पूनिह धीर हरमुग का ममेरा भाई
सुभाराम दोनों साव-नाच बैठे हुए थे। नीता नहीं धाया था। उसने
कह दिया कि मेरा कोई बीरी नहीं है। धाम पहुँसी बार जाट राजपूत
साव साव बैठे थे। उस व्यक्तित्व झपके पर जो जातीयता का जामा
पहनकर दोनों जाति के साधारण लोगों में यह भय बैठा दिया था कि

बद कभी भी किसी का धोका लगेगा वह एक-दूसरे परें चोट किए बिना नहीं रहेगा वह साथ छोटा बच रहा था ।]

प्रतापसिंह ने खड़े होकर कहा "यह बहुत कुछ की बात है कि हम इम्प्राजियस को नहीं, इन युग में पातीपत्ता को महत्त्व देते हैं। और बलीयता को महत्त्व देने का महीना भी हम देख चुके हैं। उनमें हपारी घाति को डर दिया। उनमें हपारी मिट्टी को मून में रेंवकर कर्तकित कर दिया। बहने यह यौव एक घातक मीन था। हम कभी मार्गभारे क घनवा मोचते भी नहीं थे किन्तु इबद कुछ प्रतिक्रियाकारी ठल व्यक्ति-बन मार्ग और पद के गोप में इगानो महु को भी बहाने में नहीं हिचक रहे हैं। घाय घन में लोचें कि सरकार हम घोर उदासीन है। या कीर्तन में इन घोर घातें मंद की हैं। नहीं वह नब रंग रही है। यह घाय जिसने मगाती है वह रंक पाये बिना नहीं रह सकता। पर मैं इनका चाहता हूँ कि उन कपड़े को घाय पमा रक-कन में है जिससे हमारे सारे बेघ की घाति भंब हो जाय। हमारी फूट का हमारे दुखनों में मदा लाभ उठाया है। नया घाय चाहते हैं कि फिर हमारी स्वगन्धता बनी छाय। कीन बाट है कीन कीन राजदूत। कीन बाह्य और कीन हरिजब। हम सभी एक हैं। पंचनख को हरि में घोर व्यक्त हरिफ हरि स। फिर यह घनवाय क्यों? मैं घायमें प्रार्थना करता हूँ कि यह घनवाय निर्ध हमार भय है। गिर्क कुछ नत्ता मोदुर बेदिषों की माजिर्ने है। घाय उनरी बातों में बचें और रंग के विर्वाण में नब जावें। घाय देम घायमें कुछ घोर मीन रहा है। वह यौव रहा है— "कुछे सगनरा दो दुने सगनरा बसा हो। यह मही गनन है जब हन रंक-मीन घोर भेद माय को बून जाये।"

उनके घेंटे हो लानियों की महमशारह में घायप मून उदा। यह सगनराय की को। लखोपन के व-बाय सगनि मगाय। बकनर के उनरी बीच-बीच में घायत को।

वह कीन 'चारको गया बहिनी। घाय घायमें मगन मगन

का व्यवहार किया है। सबसे पहले मैं राष्ट्रपिता बापू को सम्मान करता हूँ जिन्होंने दम्भानिवृत्त के लिए अपने को बलिदान कर दिया।

उन्होंने अपनी तकलीफ में इस बात पर जोर दिया कि भारत में प्रेम रखने में ही नाम है। ईश्वर भगवान् में सभी तरफ का सुखसाधन है। उन्होंने विस्तृत रूप से बताया कि इन विमानों को बनाने में उन्हें किसका परिचय और किसकी सहायता करनी पड़ी है? उन्होंने और ब्रह्मचरिणी जी ने कई-कई बार बताया भी नहीं था। भारत के लोगों का दिलों पर से धूल नहीं थी। इन लोगों का भारत को बनाने में उन्होंने जो भूमिकाएँ निभाई हैं, वह किसी ने नहीं देखा। भारत के लोगों ने अपने-अपने घरों में बैठकर ही भारत को बनाने में अपना योगदान दिया। भारत के लोगों ने अपने-अपने घरों में बैठकर ही भारत को बनाने में अपना योगदान दिया।

यहाँ से हटते ही जबकी और सावधानी में शूरी व्यवस्था बनाने की। भारत के लोगों ने अपने-अपने घरों में बैठकर ही भारत को बनाने में अपना योगदान दिया। भारत के लोगों ने अपने-अपने घरों में बैठकर ही भारत को बनाने में अपना योगदान दिया।

जबकी वे पूछा, 'अहो! यह जोड़ा हुआ। यह तो प्रीति महा प्रीति होती है।'

प्रेम में ही प्रीति है। मैं ईश्वर से मिलती करती हूँ कि यह प्रीति की शक्ति कभी हटने नहीं।

'मुझे कभी-कभी सरकार पर काफी मरते हुए लगता था कि कहीं राजपूतानियों का नाम न दे दें।'

'यह सब को छोड़ दे। यह भारत प्रीति ही बनी है। यह सब भारत के कभी नहीं भूलेंगे।'

किन्तु सुभाषचन्द्र ने अभी तक नहीं को भूलकर नहीं। 'बाहर की बातें भूल गयी हैं भीनी पर मन की नहीं। दोनों दलों के मुखियों पर यह व्यवस्था नहीं देना जो की बाहरी के विषय पर होता है। 'आप।

इस इतना ही बाद एता कि हम आदमी हैं ।”

‘सुसमान को भैल साफ होता-होता होगा । भाग हम मिसे हैं तो बल सीने भी मिल जायेंगे । अब मुझे प्रेम ही बढ़ता समता है ।”

“मोरी ! यह सत्ता का मोह है न यह क्या नहीं करना सत्ता । चुनाव घाने दो यहो प्रमृत्त बरसाने बाल पहार जमसोये । देखना हमारे भीतर ही भीतर नफरत को एक घाम जन रही है । कह हमारे होठों की सीतों को कई बार तोड़ना चाहती है पर हम उसे हुषम नहीं देते । किन्तु हम उन नफरत को कब तक दबाये रहेंगे ? एक जमाना एक बड़ी ऐसी भी घा सक्ती है कि वह धुगा बाहर निजम कर धून की मर्गिया बहा दें । “मोरी ! बरधस्तल हमारे भिम इतने मल हो गये हैं कि हम एक-दूसरे पर घरीन नहीं कर सकते । कप ही राहुर में धरगायीं धीर महर बापों में जगडा हो गया । धुमिम नहीं धाली तो बकर धनर्प हो जाता । नू मोच न जरा-जरा भी बात को लेकर जाती-प्राप्तीयता को जमाता जाता है ।”

मां ने कोई जवाब नहीं दिया । वह नृपदाप खड़ी खोचती रही । उसने जीवन में सामन्ती व्यवस्था देखी थी । बप मेह को धनुगामन में लेगा जाना था ऐसी रिवाज में उसे यह सब कमिधुप के मोल समझे थे । गुनेबान धारा जन गये थे । मां अब भी विद्रुह ली नहीं रही थी ।

पूजा ने उनके प्याल को भंग दिया । अंग मोर के जगती हुई वह बोली “कमिधुप की भादा ही बड़ी शिविर है । यहाँ आदमी धच्छी तरह जी ने मरी बढ़ा है । पर मेरे राजा बेटा नू “राजा पीर” बनना शिपके मगिर के किन्तु मुसलमान धीर हरिजन सभी बाते हैं । सब एक बार रागोपा बाँव में रामदेव की फिर से अवतार लेकर हम जाती-दता की घोडा की मोर के ।”

म्याऊँ पर बीठा से बैठाराम का झगड़ा हो गया । बैठाराम ने
बापि बीठा मुझे देखने को छींच तन घाबर पायो निमावे । बीठ
हमकार कर दिया । बात बिमड़ पड़ी ।

बैठा अपनी मूँछें पेंछता हुआ बोला हमारी बिस्नी हय
म्याऊँ ?”

बीठा एक बागी को चुनचाप बागी निमाता रहा ।

बैठाराम ने बोड़ी मुनया बी ।

“कान से बहुरा है क्या ?”

बीठा अपने काम में लग्नय बा ।

“कानाघर (कान) की बस्ती ब्रह्मकी हुई है ? और वह बड़े
से बोला ‘कुना नहीं पानी का एक तोटा सा ।”

बीठा ने तुरन्त कहा, “बमबान ने तुम्हें भी टमि दी है । घ
पी बा ।”

“बाहू ! उसी जल गयी पर बस नहीं पये । बीठा । तु बाबल
है कि तु हमार बाबर है । बाबरी काका मेरे बाका मयते हैं । बा
तु बाबरी साठा है बाबरी बाबर हाबिरी न मरना पाप कहलाता ।

“ये ठीरे काका की बाबरी साठा हूँ ठीरी नहीं । ठीरी बाऊँवा
बाबर ठीरे हुय को मारुँवा ”

“और घभी नहीं मारैवा ।”

“नहीं ।

“देख धिर से मठ बन ।”

“तु क्या देड़ी कर लेना ।”

बैठा को गुस्सा आ गया । किन्तु उसने ह्वाज नहीं जमाया । उसने उसे में दौट फिटफिट कर कहा “देख तुम्हें इस जगत्कारना क्या बना बघाठा है ।”

बैठा सीमा पर आया ।

होसहर ना ।

पूत के बालन दूर-दूर तक छाये हुए थे । गाँव में सघाटा था । माँ कोई हुई थी । साबित्री के एकादशी का उपवास था । वह भीतर बँटी बँटी भजन गा रही थी ।

बैठा फूँट कर रहा हुआ पहुँचा ।

“मौजी मौजी !” वह बड़ा व्यग्र था ।

साबित्री बाहर आयी । बैठा मुकने छोटा था । साबित्री उससे धुँपट नहीं निकलती थी । उसने धाम्प्य शब्द में पूछा “क्या है बैठा जी ?”

“जीजी धाम में आपसे एक फँसला करने आया है ।”

“कँसा कँसला ?”

“मैं आपकी कहता हूँ कि आप साँप को जहर क्यों पिलाती हैं ।”

साबित्री ने उसे धीरे धीरे बोलने का आदेश दिया “आप भीसे बोलिये । माँ जी की धारा सभी जगह है । मैं आपके बहने का मतलब नहीं समझी ।”

“मतलब साफ है कि आपने बीता को प्याऊ में क्यों रखा ? आप जानती हैं कि धाम जलने मेरा कितना भयमान किया है । मैंने धौंस पिलायी तो बहने जफा कि कौन से मिर्ची मर गए और रोडा घट गए । हर एक धनने-धाने धाम्य का शास्ता है । और उसने मुझे पानी तक नहीं पिलाया ।”

“क्यों नहीं पिलाया ?”

“मैंने उसे कहा कि जरा गजड़े के पीले पानी लाकर पिलादे । वन रान में ही बहने करने गया और जाक कह दिया कि मैं ऐसा

नहीं कह सकता ।”

‘उपने ठीक ही लिया । आपकी अनुचित बात करनी ही नहीं थी । बाहिर वह प्याऊ में पानी पिमाने की चाकरी करता है न कि आपकी जी-हुजूरी करने । अनुप्य क्यों भूटे अधिकारों की माँग करता है ? उस ठ रबर में स्वामीरुष का घोर घातों में घोज ।

बेता अपनी बीबाई का यह उत्तर सुनकर कुछ निश्चिन्त हुआ । स्थिर हृदि उस पर जमाठा हुआ न सोचा “भीखी आपसे क्या हो गया ? आप जग दुस्मन के विकट मेरी धाम की रक्षा नहीं कर रही हैं ? बाहिर आप हमारे घर की पगड़ी उछालने पर क्यों उताहृत हैं ?

“मैं किसी की बगड़ी नहीं उछालती । मैं किसी की पीड़ा नहीं पहुँचाती । मेरा अपना धर्म है कि आदमी से भसा न हो तो कुछ भी किसी का न करे । आप किसी को क्यों भसाते हैं । पता नहीं उन गरीब को दुःख देने में आपको क्या मिसठा है ?

“उसे आप गरीब कहती हैं । मैं कहता हूँ कि वह कायर की बीबा है । उसे उद्बल समझना आपकी बड़ी भारी भूल है ।”

‘हो मनसी है । पर आप मुझे एक बात बताइए । क्या उसने आपको पानी पिमाने के लिए कोरा उत्तर दिया ।”

‘नहीं ?”

‘पानी निकाली ।”

‘नहीं ।”

‘सिर्फ उसने केबड़े की छाँह में आकर पानी नहीं पिनाया । वह अपने कोई दोष नहीं किया । समझे आप ?”

‘भीखी ! बाहिर वह अपना भीकर है । हमारे धानदान से वह तनबा जाता है । फिर उसे हमारी आजा मानने में इन्तार क्यों है ।”

[सावित्री अभीर हो गई । उसके मन में यह विचार बिजली की तरह कौब गया कि इस बात पर यह धानदान के नाम की दुहाई देता है । जब मैं धकेली भेत में काम करती हूँ तब यह धानदान के गौरव

का क्या न कहीं नहीं था ? बेजा के घाठ माँ है । "ममे मे एक मे भी -
 धारर कभी यह नहीं कहा कि मौखी तैयार क्या जान है ? कम इतना
 दुष्कामना बकर करते हैं कि 'बह' धारों नहीं । कर्म स्वामी है के सभी
 मोक्ष । वह पुत्रपाप नहीं रहो । नीचे धारणा में एक गिर घनत दूरी
 पर धकेला उड़ रहा था । बीमारों को दूर धारने वाली हवा घपनी
 छोड़नी में धार धर कर ना रहो थी । ऐसा महसूस होगा का उड़नी पैर
 का मुनहरा बुझा हवा को ठीक महरो के साथ उड़ा बना धा रहा था ।

१ "धारने क्या मोक्षा मौखी ?"

१ सावित्री चौक बढ़ी । कमर केहरे पर पुत्र की हल्की बरत छा गई ।
 एक उदाम उदास धारणा धारणा हो गया । वह दृष्टि स्वर में बोली
 "बह वह निर्दोष है फिर उस में बंद क्यों हूँ । निरपराध को बताना
 बख्शा नहीं है देवदत्त ।"

१ "मैं उदारा मुझे के लिए नहीं धारणा है । धार धारने मेरे बचनों
 की रक्षा के लिए छोड़ा-या धर्म भी करना पड़ेगा ।"

१ "बचन-रक्षा की परम्परा बचाव हो गई है देवदत्त । मैंने दूध पहन
 भी तब कर दिया कि मैं मौखी को बिना दोष धारणी में नहीं निर-
 मुक्ति । वह तो नहीं भेड़िये वाली बान हुई । मुने नहीं तो तेरे धार मे
 वाली निराली मैं तो मुझे गारुड । "इमे ध्यान नहीं कहा का उदारा ।"

"फिर मैं क्या समझूँ ।"

"धार नरक" कि धारणी मौखी में नरक को नहीं छोड़ा । वह
 धर्म धर बनने वाली मुगई है ।

"टीक है ।" वह जोर में पीर पक कर बना गया । सावित्री को
 मनके जाते ही वह कभी महसूस हुआ कि तनने लगा करव उग्रकर टीक
 नहीं किया है । वह मौखी को दनवा कर्ने बच देनी है । धारिधर वह
 दुष्काम ही है ।"

वह बिमारों के सागर में उड़ निज होनी गी ।

धारणा मेरे बने जाने के बाद सावित्री में एक हट की बर्तन मे

नहीं कर सकता ।”

‘उसने ठीक ही किया । आपको अनुचित बात करनी ही नहीं थी । बापिर वह प्याऊ में पाकी पिलाने की चाकरी करता है न कि आपकी जी-हुजूरी करने । मनुष्य क्यों भूके अधिकारों की भाँस करता है ?’ उसके स्वर में स्वाधीनता का धीर भाँति में झोंक ।

बैसा अपनी बीमारी का यह उत्तर सुनकर कुछ विस्मित हुआ । फिर हँसि उठ कर जवाब देता हुआ वह बोला “भीषी आपको क्या ही क्या ? बाप उग दुस्मन के बिस्व में ही घान की रक्षा नहीं कर रही है ? बापिर बाप हुनारे घर की पक्की ज़माने पर क्यों उतरा है ?”

“मैं किसी की पक्की नहीं ज़मानती । मैं किसी की पीड़ा नहीं पहुँचाती । मेरा अपना बय है कि बापकी से भसा न हो तो कुछ भी किसी का न करे । बाप किसी को क्यों जगाते हैं । क्या नहीं हम बरिब को हल देने में आपकी क्या निमता है ?”

“उसे बाप मरीब कहती हैं । मैं कहता हूँ कि वह बाप की बीब है । उसे सख्त जमानना आपकी बड़ी भारी भूल है ।”

हो नरती है । वह बाप मुझे एक बात बताएँ । ‘क्या उबने बापको पाकी पिलाने के लिए कोरा उत्तर दिया ।’

‘नहीं ?’

‘नाली निकाली ।’

‘नहीं ।’

‘सिर्फ उसने नेकड़े की छाँव में घाबर जाती मही दिखाया । वह उसने कोई दोष नहीं किया । समझे बाप ?’

‘बीबी ! बापिर वह अपना बीकर है । हुनारे खानदान से वह लम्बा मेरा है । फिर बड़े हुनारी घाला घानने में इन्तार क्यों है ।’

‘बापिभी संवीर हो गई । उसके मन में वह बिचार बिबली की तरह कीब गया कि इस बात पर वह खानदान के नाम की दुहाई देता है । जब मैं सकेगी मेरा मैं काम करती हूँ तब उग खानदान के मीरब

का क्या मत क्यों नहीं खाता ? क्या के घाट भाई हैं । हममें से एक ने भी
 घाट कर कभी यह नहीं कहा कि भोजी तेरा क्या हाल है ? बस रतनी
 बुझामना बकर करते हैं कि 'तुह' धायें नहीं । कैसे स्वाधी हैं वे सभी
 तोव । वह भुत्ताप नहीं रही । नीचे घाटाम में एक निष्ठ अनंत बूरी
 दर धकेला उड़ रहा था । दीवारों को छुकर घाने वाली हवा घपमी
 घोड़नी में धाय धर कर जा रही थी । ऐसा मरुपुम होता था बढ़ती रेत
 का मुनदरा बुझी हवा की तीव्र महुरों के साथ उठा जाता था रहा था ।

“घापने क्या सोचा बीबी ?”

“सावित्री बीक बड़ी । उसके बेहरे पर दुग की हम्पी परत छा गई ।
 एक जगम-उदाध धावरण धाज्जल हो गया । वह टूटे स्वर में बोली
 ‘अब वह निर्दोष है फिर उसे मैं बंद क्यों हूँ । निरपराध को ततापा
 क्या नहीं है देवदमी ।’”

“मैं जपहेम सुनने के लिए नहीं आया हूँ । पात्र घापको मेरे बचनों
 की रक्षा के लिए कोड़ा-छा छड़ों की क्लाक फेंका ।”

“बचन-रता की परम्परा समाप्त हो गई है देवर जी । मैंने यह पढ़न
 की तम कर लिया कि मैं जीना को बिना दोष बाकरी से नहीं निरा-
 मूवी । वह तो बहो भेड़िये वाली बात हुई । तुने नहीं तो तेरे बाल मे
 वाली निफानी, मैं तो तुम्हें लाऊँगा । इमे स्वाध नहीं कहा जा सकता ।”
 फिर मैं क्या सबझूँ ।

“घाव लबाकिए कि घापही भीमा ने मार को नहीं छोड़ा । वह
 धर्म पर बलने वाली मुसाई है ।”

“ठीक है ।” वह जोर से चीख पटक कर जना गया । सावित्री की
 लनके बाते ही यह वही मरुपुम हुआ कि जलने लेगा कबल उझकर छीट
 नहीं किया है । वह बीता को हलना क्यों बल देती है । सावित्र इ
 दुस्मन ही है ।”

वह दिवारों के मागर में उड़ निज होनी रही ।

बातुन मेरे बने जाने के बाद सावित्री ने एक हट की ३५५

ब्रह्म में लिया था। इनके साथ ही मेरे मान-गन धान उषस मन्थी सहा-
 बुद्धि भी प्रदर्शित नहीं करते थे। बल्कि सभी की बड़ी मनसा (दृष्टि)
 भी कि मैं न घाऊँ धीरे के इतनी बड़ी पसीन-जामदार के धार्मिक बन
 जाएँ। कभी-कभी के मेरे मदबान होने के पूर्व इस तरह की बर्षा भी कर
 बैठे थे कि एक कनौ धारमी जीपरी बाफ़ा की माव धाएवा। हमलिफ़
 सावित्री का रसायन बाधों के प्रति मोह टूट सा गया। इसके साथ
 साथ जीता की बहू बँदनी सावित्री की सुख सेवा करती थी। क्या कोई
 मोह्यार (जवान) मजूर काम कर सपता था उसके बराबर। वह भूतनी
 की तरह मेहनत करती थी। एक बार तो वह सावित्री के हृदय को
 अपनी जान देकर भी पूरा करती थी। माँ की स्थिति विविध थी। धनर
 वह बहू से घातकित नहीं होती तो कम से कम घर की दान्ति घरद
 भन रहती। जब बँदनी उसके पान देवाती तो माँ उसे थोड़ा वह देती
 और जब जानबान जाने धाकर उसके रक्त-धीरव की प्रसंसा करते तो
 वह उनकी ही मैं ही मिना देती। पलस्वक्य सावित्री ने प्रधिकतर
 उनके धाने-जाने पर रोक ही मया दी। वह उनके साथ बिसगुन रुपा
 व्यवहार करती थी। फिर भी कभी-कभी माँ अपनी प्रसंसा में फूँककर
 विषयता से कहती "क्या कहे सुबह धाम बहू के सामने वाली जो
 परोसनी पड़ती है।" लुनकर विदोह वह नहीं कर सगती। जैसे इन्सान
 में एक व्यवस्थित जीवन गुजारने की प्रसभूत धाकांधा हो। जैसे वह
 बकने पर कुछ समझीते के साथ धाधम-विधाम करना चाहता हो। माँ
 की ऐसी ही रक्षा थी। वह बहू के पौरुष के सामने गत थी।

इसी रात घर में एक बचावत बैठ गई। धारे जानबान जाने इस
 बात पर घब मये कि जीता को प्याऊ की नोकरी से सुरन्त हटया जाव।
 वह हमारी धान का प्रकन है। कुसरी धोर सावित्री धकेली भी और
 हिमालय की तरह प्रकन।

साल्टन का बुँबसा बुँबसा प्रवाज। उनकी धावी तिगधी धापाधों
 से किसी का भी धिहरा साफ़ नजर नहीं धा रहा था। बल्कि जब

सातदेन की बड़ी मक मक करने लगती तब उपस्थिति के आगे भरे बेहरे घोर भी भयानक लगते थे । एक घोर हम थम्हू आदमियों का हठ घोर एक घोर पू बट में मिपटो साबिनी ।

आगिर बेना का बप राबत उठकर बोला "भोजी । तू अपनी बहू का समय दे । घर हम खुा नहीं रहेंगे । जीता के बीदे कही तुमसे म्ता न हो जाय ? उमने घानी मूर्खों पर ताब दिया ।

माँ हर गई । बहू बबराकर बोली "मैं क्या बक ? यह बहू बिना हठ की मायात मूर्खी है ।" घोर बहू साबिनी की घोर घुमकर बोली 'बहू तू उनका बहू मान जा मही तो घनय हो जायेगा हमारे घर में घान कोई मरद नहीं है इसलिए हमें कोई धमका सकता है । हमें कोई भी भीबा दिया सकता है । तू इनको बात मान जा । घान मेरा पैदा होना तो क्या वे इन तरह मारु जैसा करके बोलने ?" घोर माँ मुचक-मुचक कर रो पड़ी ।

राबत फिर बोला "घानी बहू को समय दे । क्यों घर के बीदे से घर को जना रही है ?"

बेना ने कहा घान घाना सम्बन्ध बीना से छोड़ सांझे । पैठा देने पर बगन न पादमी मिल जायेगे । घर एक बीना हम घानदान का घान मुह में नहीं डाल । इनका घान रहे ?"

पू बट में मिपटो-मिपटो साबिनी का हृदय बिगोड कर पड़ा । तेज स्वर में बोली घानको जो करना है बहू कर लीजिये । घान यह न समझे कि इन घर में जो हाथ है वे साठी उगने के बाबिन नहीं है । मुझे बहुत घानदान बोना मही लगता । क्या कभी घानने हमारे दुहा हँ में हिमा बिना है ? नहीं फिर घानदान बीना ? माँ-बारा बीना ?

"घोर घान घानने देते बेना का बगून क्यों मही देनेने ? एक बरीब एक बीन न कहा मा कहा है एक बीनान आनबुझ कर उन घर बिगता है घोर बिगतर उमे बीनता है क्यों ? इसलिए बहू एक बिगन है ।"

एक घान खुा रही घोर बोली "मैं खुदा इमान नहीं हूँ । मैं भी

घाट की बेटाई है। मेरे बाप ने भी मुझे पुत के जाड़े में घोर ईशान की गरमी में रोहना भगाना निभाया है। मिहों की वरजवालों के बीच रोम में पहरा देने का माहस दिया है। आप भ्रम में न रहें अथवा यही है कि आप इन बात को यही पर बाढ़ द।”

अब सावित्री की ललकार की।

मारे सोमी ॥ मघाहा छर मया। राबत बीला “बहु! बघोरा को मत रबायो। तू इन घर की बहू है। मुझे इन तरह बोसते हुए धर्म नहीं आती।” राबत का मारा घरीर इन जनहोनी के चाकमल से काँते सवा। उने नाने में भी इयात नहीं का कि आहुरीबारी में क्यों से बम्ब इन बराने की कोई बहू इस तरह प्रत्यक्ष लयात-जबाब कर सकती है?

“धर्म धानको आनी चाहिए चीन्तों को धपनी देते हुए। आपने लपझा होना कि बीन है इनका धपना। पर सायब आपकी माझूम नहीं कि जिनका कोई नहीं होता है उनका ईश्वर होता है।

“बहु!”

माँ हतप्रभ हो गई।

“मैं आपसे प्रार्थना करती हूँ कि आप अपने इन धपनों की लपझा-हने। धाबिक जनीनि झण्टी नहीं होती।”

जान्त्रिकि में कुमकुमाज्ज धारम्भ हो गई।

“काफ़ी” चेता में कहा, “बहु भूब सर पर चढ़ा रकी है। कोई बिन्दा नहीं। देखना है कि यह जानती है या नहीं? बसो भाई बसो।

तब मोन कोब में जाल-पील होकर चलते बने। सावित्री की धाँधों में धाँधु का मने में उगने उन्हें पोंछा। माँ की धाँधों घबल की। वह इसे स्वर में बोली “बहु बहु अथवा नहीं हुआ। कहीं रात-बिरात हानुने इसे सोबा हुआ एक दिया तो?”

सावित्री ने लटकती हुई बग़ल की घोर दैतकर बर्न से कहा “माँ की। मैं किसी से नहीं करती। हानुने अभी तक बू पट में लदपती हुई

बहुषों को ही देता है उसमें किसी मिहनी बहुषों से उनका काम नहीं पड़ा है। चाप बिगड़ा न करे चाप सुगम की नींव सोइये।

पर भी उन रात नहीं सो सखी। वह घायली रही। हर रात के के साथ उसका ध्यान भंग हो जाता। उसे लगता था कि उसके स्वप्न ही उसका स्वास्थ्य करने के लिए सब पाँव धम्पेरे में मकान में बुने धा रहे हैं। किसी तरह गुप्त रह गई।

बुद्ध ने जो भी के पास कई चीरतों छापीं। उन्होंने भी भी को समझाया। भी सावित्री को समझाने लगी। सावित्री ने कोई उत्तर नहीं दिया। अपने दीवार पर सटपटी दोनों बन्धुकों को आह-वोहकर योनी पर पर संभार कर लिया।

उसका विभाग ओर से काम करने लगा। वह नीची मुनेमान बाबा के पास गयी। उन्हें सारी विवर्ति समझाते हुए वह बोली कहीं वे लोग बीटा को न मारें।”

“उनका कोई धरोरा नहीं है।”

“फिर काका ?” चाप वह मुनेमान से भी बेदर्द हो गयी।

“मैं पुनित को बहू छाता हूँ।”

“हो चाप इतना धन्य कहें कि वे लोग बीटा के लून के खाते हैं।”

“जबकि वह दूंगा।

सावित्री वहाँ से बाहर अपने काम में लग गयी। कृष्ण शिष्यों से उसे समझाना आटा पर बह नहीं जाती। उसने बह दिया कि वह किसी से बह नहीं रह सकती। वह किसी की धमकियों से घबरे नहीं जाती। उसके भी दो हाथ हैं।

बाप लून पा गयी।

बाप ने बाबाबाबा को बहरीला कर दिया। भी को हर समय यह धमकाना रहने लगी कि कोई धमक होने वाला है जिससे वह डरने लगी। कभी-कभी वह सावित्री पर बरस पड़ती थी और बुद्ध

घनाहूना देती की कि ये जीव सेंपोनिय लुभे गया निजान कर द्ये ?

सावित्री भी के समझ भीन रहनी ।

इस तरह दो-तीन दिन बीज गये ।

मों की घाँगी की नींद खड गयी । सावित्री भी नम्रग रहने मयी ।
 ओठा भी सावधान हो गया । पाँव में भी इस घटना का बोझ-बहुत
 प्रचार हुआ । सभी घाँव-बोझ रह गये । ऐसा नाहूत-बहु भी सावित्री
 में ? घाँव-बोझ ! तब-मुझ यह मर्दानी घोरत है ।

पुलिन जानेदार के राबत को बुलाकर दान दिया ओठा को कुछ
 भी हो गया उनके अभिचार लुप्त हो-गये । बागून को हाथ में सेने की
 चेष्टा मत करना ।”

बादों और राजपुत्रों के भण्डों के राबत को बटा दिया था कि कच-
 हरी की दीवारों में घना-घना रिचना बँहना पड़ता है । इसलिए यह
 महम गया कर सावित्री के प्रति यह और भी बटोर हो गया । उनको
 विश्वास था कि सावित्री ने भी पुलिन को यह पौन पिलाने के लिए
 प्रेरित दिया होगा ।

भीतर ही भीतर घाम मुल-गये लगी ।

×

×

×

हम लाख लज्ज-माव-माव और सोच-विचार कर बरस उठायें स्त्रि
 कुछ घटनायें घना-घना घप्रस्थापित पट जाती हैं । इनका संभ्रम हूँ-गई
 भिन्नता । उनका सम्बन्ध लाख प्रबल के बावजूद भी हम नहीं पा
 सकते ।

बड़-दाह बड़ गया था। ऐसा लगता था कि चंद ही दिनों में गम्भीर मोन या वे सम्बन्ध-विच्छेद कर देंगे। सावित्री भी कभी-कभी रुझासी हो उठती थी और अपने दुर्भाग्य को राकर वह एकान्त में रो दिया करती थी। उसे अपने पौरुषमय और कमठ जीवन पर भूभनाट के माप-माप एक ऊँच और उन्मीलता होनी थी और उसे लगता था कि ऐस जीवन से मोत नमी। वह मर जाये तो अच्छा है। ईश्वर उसे अपने दरबार में बुला ले तो उत्तम।

एक घंटावारी थी। काला बैरव गहगा होकर बीग था। सावित्री को मयना था—यही भीरवना समुप्य के नित में मरता बसी रहे तो समवा जीवन स्थिता मुनी हो जाय। मौन के समय प्रभु के समस्त धोरक करते समय ध्यानक ही उसने अपना मुन्य रूप में देखा लिया था। उसने देखा कि वह चंद ही रातों में बापटी बदल गयी है। उसके नाम कुछ बँन गय है और बैहरे की मुर्ची बम की बढोरता में मुत हो रदी है। समवा मतवाला जीवन मदी के जाटे की तरह बतर रहा है। उतावलों ने उसके धारिक बल को बकर बड़ाया है पर बायिक बल को धीए ही दिया है। उसका रँन भी कुछ काला हो गया है।

धारा उसे अपने आप पर नमीरता से बिचारन का समय मिल गया। बहुत धम्मेरा और मलाटा। उनसे एक बार गोब हुए और को देगा। गोब हुए गेठों को देगा। गोब हुए बल को देगा और वह भर भर सी घायी।

क्या है हम तरह जीने में ?

ब्रह्म नमीरनम हो गया।

मरने की भावना सदा ही बलम हो गयी। उसकी रचना हुई कि वह पार्स में जाग कर उगी मरवर में ब्रह्म मरे जिस मरवर में उसके पैर डूबे थे। और वह मृत्यु की दुःखस्थिति उसकी धारक-रुद्धि में बीदा होने लगी। वह जानी है। मरवर पर पड़ी होगी है। अपना मलाठी है। एक-दो बार नमी के ऊपर-नीच घायी है। सारा बुगठा है और

बोझी देर मे बह ब्रूस कर ऊपर चैरने लगती है ।

बह बाप छटी । उसने बहसूत किया कि एमना बाटीर बसिने से ठर है घोर उसके सोम की गति भी तेज हो गयी है । बह उठकर बैठ गयी । पलकों के नीचे पुग के बारत चैर उठे । बह निगड पडी ।

उसका जीवन व्यर्थ है । बिना प्रीतम कुछ नहीं । क्या नामा क्या बहनना क्या उठना क्या बैठना । सुनी मेज कीछे (छपारों) की तरछ होती है । कुछ भी करना बिलकुल बनाबटी लगता है । फिर, बह मास ही मसी हो मास ही बहापुर हो मास ही बोसी हो पर लोम उसे घण्टी हटि में बटी देखते । "घोर कोई-कोई बह भी देती है कि क्या क्या हमका पति बिम्बा है या नहीं ? संका । कुल । बाघंवाएँ । कुछ भी हो बह सदा मुहाबिल तो है ही । उसे कोई भी बिघना नहीं बह सकता । बिनु बह दुस के मावर में पिरी है । उसे क्या मुछ है ! बह केवल मोह-बन्धनों से बंधी है ।

तब ?

हुमुक हुल हुमुक

लनक छम छनक

उनके घामु बगुटे रहे ।

छत पर निर्भीक सी मेन रही । प्रभु से प्रार्थना करने लगी कि या तो उसे अपने पति से मिलना दे या उसे ही अपने पास बुला ले ।

बकाम् !

हस्की-सी कुम्हने की धाबाज पाई । बह बिस्कुल सावधान हो गई । उसने लपक कर देखा । वो छायाएँ भीरे-भीरे पास वो बड़ी डेरी की घोर बह रही थी । उस डेरी में हजार मन पास थी । दूर से बह डेरी मोल भूँवड़ी सी लगती थी । एक्कम इच्छा हुई कि बह यही से घोर से बिस्माए पर बतने ऐसा नहीं किया । बह नि-दण्ड बाँव पटायी हुई नीचे पाई । लाठी सज्जाती । ईश्वर को याद किया घोर बह उन छायाओं की घोर बड़ी ।

छापाएँ दोनों पास-पास थीं ।

एक ने कहा "देखें फिर बीता की मरत कैसे करती है ? हम इसकी धरती बुन कर बने ।"

'इस बार पास की होती बसायेगे और धरत की रोत की ।'

सावित्री को वह समझते देर नहीं लगी कि मामला क्या और किससे सम्बन्धित है ! वह एक को पहचान भी गई कि वह कौन है । उसने मुझे मैं दाँत पीसकर मन ही मन कहा जेता ! ये हैं मेरे घर वाले ? कभीने और भीच ।

वह पीछे से बीरे बीरे गई और उसने जेता के छिर पर बस कर छाटी का प्रहार कर दिया । ध्यानक हमसा बा । जेता नहीं सम्मन सदा । बड़ाम से मोचे फिर मया । डूयरी छाया बीड़ने लगी । सावित्री ने जतरी छिप्पी (पिहमियों) में वह ठेज बोट की कि वह नटिदार बाह में फिर मया । फिर वह ओर से बिस्लाई 'ओर ओर-ओर ।'

देखते-देखते पठोमो लोप इबट्ट हो गए । जेता और उसका मंजरी बायला (मिच) मयना दोनों पकड़ लिए गए । बड़-बुड़ों ने उन्हें पिक्काया । एक ने कहा "तुम लोगों को धर्म नहीं पानी । पर मैं धवेसी सुगाई को देखकर लवा तुम्हें बने धामे । छिः छिः छिः धर्म हो तो तुम्हू भर पानी में डूब नरो ।"

लोनों के राबत को भी पटकारा । राबत का मिर धर्म में जुवा हुआ बा और उसने मुँकनाकर जेता को अपनी राठोही दूनी में पीटना शुरू कर दिया "तुम पाठक तुम-बसंक नीच बघोने धर नही धाई ऐसी छोटी हजबत करते । तू मेरे घर जग्गा ही क्यों ? धरे तुम्हें बामा' क्यों नहीं हम गया ।

जुल भी ही इस घटना से सावित्री के लोर्न और माप का बिडू बस मया । लोप जमे रगाचंदी मयमने लगे । जवका लोड गाने लगे । उनका सम्मान करने लगे । बजोदि लोनों का बिदधाम दा कि बा हममें कोई देवो बाह नही करती है हममें इतना बल नहीं है या

गोदी बैठ में वह झुम कर ऊपर लहरने लगती है ।

वह जाँच उठी । उनसे सहजुत किया कि उसका घरीर बसीने से
र है और उनके साथ ही बसि भी ठीक हो गयी है । वह उठकर बैठ
गयी । पलकों के नीचे घुस के बादल लहर उठे । वह तिगक गयी ।

उसका जीवन व्यर्थ है । बिना प्रीतिम दुःख नहीं । क्या नामा क्या
पहनना क्या खटना क्या बैठना । सुनी खेज खोरी (धवालों) की तरह
होती है । दुःख भी करना बिलकुल बनाबनी लगता है । फिर वह
साथ ही भली हो लाग ही बहादुर हो लाग ही बोली हो पर सोन
जैसे धरती हटि से नहीं देखते । और कोई-कोई वह भी देखती है कि
क्या बसा हमका बसि बिम्बा है या नहीं ? पंका । दुःख । पापपाएँ ।
दुःख भी हो वह सवा मुहाविन तो है ही । बस कोई भी बिम्बा नहीं बह
सकता । विनु वह दुःख के साथ में मिरी है । उसे क्या मूल है । वह
बैचल मोह-बन्धनों से बनी है ।

तब ?

दुःख दुःख दुःख

धनक धन धनक

उसके धौनू बहते रहे ।

उन पर निर्भीक सी लट रही । धनु से मार्चना करने लगी कि मा
तो उसे अपने बसि से बिम्बा से या उसे ही अपने पास बुला ले ।

बहाल !

हल्की-सी कूदने की भावाव जाई । वह बिलकुल सावधान हो गई ।
बसने लपक कर देखा । वो धावाएँ भीरे-भीरे पास की बड़ी डेरी की
ओर बढ़ रही थी । उस डेरी में हजार जन भास थी । दूर से वह डेरी
मोल झुंझी सी लगती थी । एकबल दृष्टा हुई कि वह यहीं से ओर के
बिम्बाएँ पर उसने ऐसा नहीं किया । वह नि शब्द जाँच बटाती हुई भीके
माई । सारी सम्भासी । ईश्वर का पाव बिम्बा और वह जन धावाओं
से ओर गयी ।

छपाएँ लोगों पाम-पास थीं ।

एक ने कहा "देखें फिर बीता की मरक कैसे करती है ? हम इसकी छरड़ी घुम कर बगे ।"

"इस बार पास की होनी बलायेंगे और सब की रोत बी ।"

सावित्री को वह समझते देर नहीं लगी कि मायना क्या और किससे सम्बन्धित है ! वह एक को पहचान भी गई कि वह कौन है । उसने बुझे में दाँत पीसकर मन ही मन कहा जेता ! ये हैं मेरे घर वाले ? कबीने और नीच ।

वह पीछे से धीरे धीरे गई और उसने जेता के गिर पर कम कर लाठी का प्रहार कर दिया । अचानक हमला था । जेता नहीं मग्नम रहा । पड़ाव से नीचे गिर गया । कुमरी छाया दीखने लगी । सावित्री ने उसकी छिन्नी (चिह्नियों) में वह देख बोली कि वह कटिहार बाह में गिर गया । फिर वह ओर से बिस्साई 'ओर-ओर-ओर ।"

देसते-देसते पड़ोसी लोग इकट्ठा हो गए । जेता और उसका सँजड़ी मायना (मिच) मयना दोनों पकड़ लिए गए । बड़ बड़ों ने उन्हें बिरासत । एक ने कहा "तुम लोगों को मम नहीं पानी । पर मैं धरेली मुमाई को देखकर लवा लूने बने घामे । छिः छिः छिः मम हो तो चुम्बू भर पानी में डूब मरो ।"

लोगों के राबत को भी पचारा । राबत का गिर लर्म में झुका हुआ था और उसने झूमनाकर जेता को अपनी राठोड़ी कुनी में पीटना शुरू कर दिया "तुम पागल तुम-बलक नीच बमीने मम नहीं साई ऐसी छोछी हगलत करते । तू मेरे घर जम्मा ही क्यों ? धरे तुम्हें जाला' क्यों मरी हम मया ।"

कुछ भी ही इस पटना ने सावित्री के पीछे और माह्य का झिझा मम मया । लोग उसे रगलटी लममने लगे । उसका लौक नाने लगे । उसका सम्मान करने लगे । क्योंकि लोगों का बिराजान था कि यदि हममें कोई देवी बाह नहीं करती है हममें इतना कम नहीं से था

जाता है। धरे हमके बहने पीर में लिमी बीनगी को घूँटे के बाहर
 झेंडते भी नहीं देखा था। पीर बह लिमी को कुछ समझती ही नहीं।
 कोई भी हो बह सखी बात पढ़ने बह देखी है। कुछ भी हो यह
 सब धुलाईयो को सीखा नहीं देगा। तब्र हया उनके बहने को है। पर
 है—एकदम बर्बादी। इन सखी को धमेक बर्बादी हाँसी रहनी थी।
 उस बर्बा में एक यह भी बात थी कि सावित्री का डेज में नहीं मह
 मचा। बह मिटनी पीर में अपने गामने पीड़का। कहीं मेल ? इसको
 ब्रम में रतना मेरे बूने के बादर समझा जाये लया।

बहुत प्रयत्न के बाद भी वह मुझे चुन नहीं सकी। उसकी हार्दिक
 इच्छा बन गई थी कि या तो मैं या बाहें या प्रभु उसे उठाते। जैसे यह
 कभी-कभी बार एकांत से पबरा जाती थी। वी भर भर बह रोती
 भी तब।

मेरिन कभी-कभी पीडा की गरम सीमा पर उसकी इच्छा काभी
 हिमक हो जाती थी। वह सोचती थी कि याभिर वह उसके साथ धम्याय
 क्यों हुआ ? उसका विवाह मेरे माथ क्यों हुआ ? उसका बाप ने उसके
 समुद्र की बन्धुओं का बकाज बन्धुओं से क्यों नहीं दिया ? समुद्र को ने
 यह धम्याय क्यों किया ? उन्हें सोचना चाहिए था कि वह उसके बेटे से
 बार मात बढ़ी है पीर उसका लन-बदन उससे जुगुना है। उसको उसका
 बेटा कैसे सम्मान जायेगा ? तब वह छोड़ मे या जाती पीर उसकी
 इच्छा होती कि वह सबसे बरता ले। पर मैं बाँटें किमत उसके सोचने
 एक सीमित रहती थी। जब उसका धामेस-धाकाय बन पड़ता था तब
 वह उस पाण्ड के विल समझकर सति हो जाती थी।

×

×

×

कनकसा क करोड़पति सेठ बगीचर एब माह के लिए माँब घाये ।
 गूरे पञ्चमीस मास क बार । माँब में उनकी एक पुत्तीनी हँसी भी जो
 सदा से सुनी पड़ी गृही थी और उनके मित्रों हिस्सों में उनके ठाकुर
 समादार रहते थे । माँब में उन्होंने बड़ा भाज बिदा था । मरीचो और
 बाइलोंको बहुत दान-दिया था । एक बार उनके घागमन में माँब में
 बहुत-बहुत मज गयी ।

सावित्री को इस दिन जान से जरा भी लपटा नहीं । बहुत दिन प्रतिदिन
 अपने में लग्न होने लगी । धीरे-धीरे मेरे घाये की उसकी आवाज भी दूट
 गयी । राजा आजास अपनी दाही के साथ ही सोता था । वह ही हो
 या राजा दाही के बिना एक पल भी नहीं रहता था । वह सावित्री
 को बहुत और माँ को माँ करता था ।

हँस का मौसम था ।

दोहर को वह बगान के घाये घाट पर खड़ी हुई बघरों के टाँके
 लगा रही थी । एकएक बँदनी आ गयी थी । दोनों जिनको बातचीत
 करने लगी । बघरी के जीवन में इधर बापस व्यवस्था आ गयी थी ।
 बीता की मोहरी जानू थी और बँदनी भी उनके बहू नाम-नाज रिपा
 ही करती थी ।

अपने घाट ही राजा को दीन में दिया और उठता चूमन लगी
 हुई होती थी कि- कितने मर जा दिन भर रैन से मराने रहने हो ।”

राजा उमरी पीली के नीचे छतर कर दाही के घाट भीतर भाग
 गया । उसे छोड़े देगदर सावित्री बोनी जब देनो अपनी दाही के
 भाग भावता रहता है ।

“बचना है न । जहाँ चाबिक लाह-ध्यार पायेगा वहाँ ही जायेगा ।”

“लाह तो मैं भी करती हूँ पर इनका मुझसे जरा भी मोह नहीं है । यह भी धज्झा ही हुआ कि जब मर्कसी को यह बड़े गुन ठे रहेगा । बिना बिज नहीं रहेगी ।”

“मेरे तेरे दुश्मन । हेत बहन ऐसे घण्टे घण्टे घोल मत निकाल कर । हमें बीच संस्कार में ही छोड़ कर जायेगी क्या ? तेरे बिना हमें कौन सम्हालेगा ।”

ताबिबी ने सोचा कि उसकी बकरत इसीलिए सपझने हूँ कि वह उनके साथ जायेगी । सभी अबह स्वार्थ का रोना है । आज उनका पति होता तो ऐसा नहीं करता । उनके स्वार्थ में भी गुन सपला ।

“क्या सोचने लगी ?”

कुछ नहीं ।

“कुछ तो बकर सोच रही थी ।

“सोच रही थी इस तरह के भीने से क्या साब ? सब पति के बिना कोई भीज नहीं ।

तु भीक कहती है । चाहे बोला हो चाहे कोवा (पुरुष) कौता भी पति हो पर पति होना है । मेरे तो फिर मौता सप गया ।” उठने इतना कह कर अपनी मजदर बुला ली ।

“क्या कहा ? तेरे पाँव भारी है ।”

। वह कुछ नहीं बोली ।

“जब इन तरह मौता समझायी तो दुख जायेगी ।”

उनकी इच्छा के सामने मैं लाचार हो जाती हूँ । जैसे उन्हें ‘म’ कहूँ व के साथ वे दुमी हो जाते हैं । मुझ से उनका दुख नहीं देखा जाता ।”

वत तरह बातें चलती रही ।

घोर सभी रात वह साम में सोती थी । घबरेला था । ठंड भी तेज थी । वह कमजोर में बिपटी थी । बहुत घोड़ने के बाद भी सबी हड्डियों से दूर नहीं हो रही थी । बार-बार उसके स्मृति-शोक में पवित्र प्रकाश पुंज की

तरह सम्पन्न हो रहा था। उस जग रहा था कि मैं अपने पास ही हूँ और उस के पासो को धीरे धीरे सहसा रहा हूँ। वह पति कम मैं हूँ भी नहीं। उन बुद्धिमान प्राणियों की तरह उसकी स्थिति भी जो कुछ को बेचम अपने वस्त्रों को मेरे हो देना सच है। और बलि-मुस अब उसकी वस्त्रों तक ही सीमित था। कम मृत्यु को वह न जाने बिना ही बार सोचती थी वह नहीं जानती। वह बेचम हुआ जानती कि उन वस्त्रों में उसे एक ऐसी मुक्तानुपुष्टि होती है कि मैं मनीष का सागर सहसा करता है।

×

×

×

दोहर

बेकारा माना भुवन कर नीला वह गया। दूषण को वरते
 पाँच पर छा बसो थी। कोई छपक नहीं था पर आकाश में धूल के
 बादल बड़ी तेजी से बढ़ाये। लाशों की स्थिति भी धूल के बादलों
 होने लगी। तभी बीबाहन उभरा। एक व्यक्ति दोहा-दोहा धावा कि
 दादू-दादू-दादू।

एक—

दो—

तीन—

साथ पर साथ।

पाँच में दादू था पने के। मोप जय में बिना रहे के। "दादू-दादू
 दादू।"

सावधान हो गयी ।

एकएक उभने देता कि तीन हाथ बंतीपर के मामूम बच्चे को लेकर भाग रहे हैं ।

धीरे की आवाज धीरे मजबूत आ गयी ।

उसने निगाना साधा । उसने हट देखा को माद बिचा और पाँच मोली हाथ थी । मोली सीधी दिखने हाथ की पीठ पर लगी । वह वहीं पर डेर हो गया । हाथ बल में भी मोर्चा बाँधा ।

होनों धीरे से मोर्चा सुटने लगी । सावित्री ने बचाव दिया । वह आज दुर्गा काली और लक्ष्मीबाई बन गयी थी । उसने एक निगाना और साधा । दूसरा हाथ भी फिर गया ।

धीरे वह भी नील पड़ी । उसने देखा कि बायें हाथ में मोली आ लगी है । उसने कोई बरबाद नहीं की । एक हाथ बच्चे को लेकर भागा जा रहा था । वह छठी । एक मोली उसकी बाँध बर फिर लगी । उसने हाथ नहीं छोड़ा । उसने जैसे-तैसे उस पर एक निगाना साधा । निगाना हाथ की दाँव बर लगा । वह बच्चे सहित फिर गया । अभी सामने पुनिष्ठ की बाँध आ गयी ।

देखते देखते हाथ बल के कुछ छाहमी भाग गये, दो घर गये और तीन बचक हो गये ।

×

×

×

देरतिह को माया है । वह देरतिह जिन्ने न जाने बित्तों को हीन-हीन
घोर बेपर-वार किया है । बित्तों की कोण उभाहो है और बित्तों के
सिन्दूर मरी पाँवों को सूना बिना है । तेरी बहू को दग हजार दण्ड का
इयाय भी मिलेगा ।”

माँ पुनः नै झुकी हुई बोली “मुझे बच घोर घन कुछ भी नहीं
बाहिए । मुझे बाहिए मेरी बहू के राजा की माँ । वैसे न दिस छद्म
बित्तबिना रहा है ? मैं बहू जान को छद्मता नहीं देख सकती ।”

छेठ बंसीपर ने माँ के पास आकर कहा “कबराजो नहीं माँ । पुन
की भी व्यवस्था हो गयी है । पुन्दायी बहू ठीक हो जायगी । मैं वहाँ को
पानी की तरह बहा दूँगा । कोई कमी नहीं छ्मे दूँगा अपचार में ।”

पर माँ का मन आकुल-आकुल हो रहा था । राजा पुन रहा प
‘माँ बहू नहीं है । माँ बहू को क्या हो गया ?”

माँ रो बड़ी ।

हैं घाम तक स्वामीय दो बनिहों के घोर एक सत्तादिक नै बाहु घेर
तिह मृत्यु परिनिष्टांक ही निकाल दिया । उसमें कुछ बिबों के साम
साबिबी को बीरता को कहानी भी छपी गयी । चूकि नव-कांस्य
उत्पन्नक य इसलिये उन्होंने वह भी प्रमाणित करने की चेष्टा की कि वह
जायल के कर्मठ कार्यकर्ता बीरता प्रियताम की बहू है । सोपा ने उसे
एक बीरताम के रूप में प्रतिष्ठापित कर दिया । दूसरे दिन हूर बैनिक
राम में साबिबी का बिब घोर उसकी बीरता की कहानी के साथ वह भी
मिला था कि मुबह से बीरताम साबिबी को होय है । दाखर उसका
एक मानरेसन घोर करने नबोंकि जीन में पुनी गोमी अपना निश्चित
जान छोड़ चुकी है ।

मैं मुब हो गया । मेरे हाथ से अपचार छूट गया । क्या करूँ मैं ?
उन दिनों मैं एक भादव दी मैं सहायक पुस्तकाध्यक्ष था । उन वत वर्षों
मे मैंने एक मानारा घोर साबाबस्त बीरत व्यतीत किया । न कोई
नक़्क़र घोर न कोई बनिह । न कोई धर्मकर धर्मवस्त घोर न कोई

छूटा। केवल भटकना और घमाशों-घमण्डियों से रूमना। मुझे धर
 त्र के लिए भी परम ध्यान प्राप्त नहीं हुआ। मुझे ऐसा लग रहा था
 कि मैंने व्यर्थ ही माँव छोड़ा है। या भी मुझसे बोध हुआ उसे मुझे
 सहर्ष स्वीकार कर सेना बाहिए था। हिन्दु परिस्थिति सबसे बड़ी शक्ति
 है। वह जीवन-नियन्ता है। वह इन्सान को बना बाहुते है बसा ही
 नबाही है। हम सब उसकी कठगुत्तमी मात्र हैं। उसके धर्म पर नाचते
 हैं नाचे हैं हैंते हैं और रोते हैं।

मुझे ईश्वर से बिड़की। क्योंकि उस आशाउ शिन्की में मैंने ईश्वर
 के लोह में उसी की एनछपा में जीवन के दाने पिनीने और नाचनम
 बिज होते देन कि उनके प्रति मेरी धारणा ही पर बयी। मोचने मना—
 ईश्वर कुछ नहीं है।

हिन्दु जैसे ही मैंने गाँवियों की दुपटवा का वह समाचार पढ़ा जैसे
 ही मन समीप आमाह से भर आया। जिसके नामने धानी दपाह
 देरना को प्रष्ट करने। तब जैसे कोई धारणा की गहराईयों में बाप
 पड़ा 'प्रभु! प्रभु ही हमारे परम मुग और चरमदुग की परिस्थिति का
 अन्तिम बिन्दु है। मेरी धारणा उन्नत प्रापना करने मनी। समवेत स्वर
 में कोई मोठर से कह उगा 'प्रभु मेरी गाँवियों की कुछ न हो। उसे न
 बना मे। क्या मे।'

मैं पन्नी में धान मानिक के पास गया और उसमें छुड़ी माँव की।
 मैंने उसे दग साथ में परिचिन नहीं कराया। मैं पानी में बन रहा।

हालाय के माँवे बड़ी चरम-चरम की।

मैंने पाटल देगा—जीजा राजा था। मैंने उसे नहीं गहराना। उनके
 मुझे देगो ही कहा 'आरक्षण सरग! और नृपति को दंड के भावा।
 बोली ही देर में माँ था बयी। मुझे देगकर बड़ रो पड़ी। मैं था करने
 धाँधुधो को नहीं रोना था। दोनों दारी देर देने तिारे छेँते छेँ।
 मोर्गों में गुगी का नहर रोह पड़ी। शिखरों की मोर को नृपति में
 दूर पड़ा। बड़ी देर तक रोता रहा।

माँ राजा को मे घायी । उठे घूमती हुई वह बोली राजा पटा
मद है तेरा पापू ।

मेरा मन ममता से भर घाया । मैं अपने देहे को देगता रहा ।
उमे सोन म सेंकर मैंने छापी से विगता मिया ।

द्वि में ताबिबी की घोर चला । मन में विविध सपने का घोर
निर घनराधो की तरह भुला हुआ था । मैं एक-एक सोड़ी निन गिनकर
बढ़ रहा था । हृदय की बढ़ाव ठेक हो गयी थी । मेरे बीच मेरी माँ भी
गोद में राजा को लिए हुए । सब मुझे बढ़ा मकोच हो रहा था । सोच
रहा था कि कौन-सा भुंहु रीतर उमके नामने जा रहा है । वह मुझे
कैसे मद ममजेगी ? मेरा मन भारी हो गया । नहि थीमी पड़ गयी ।
नितना समय मुजर गया । पता ही नहीं लगा ।

कमरा घा गया था ।

मेरे पाँव एक बार ठिगक गये । माँ पहले कमरे में घुमी । उमने
घुगते ही कहा 'बहू देन मैं तेरे निण गया तापी हूँ ।

ताबिबी घान्त निरुपस गड़ी थी । उसने केवल दृष्टि बीड़ापी । उसके
पाग में एक लठ बँटी थी ।

माँ ने अचेष्टित स्वर में कहा 'घरे घा म घा बीटी को बिमार
दे । बहू ! सरपण ।

ताबिबी के हृदय में सहीत धून उठ्य । माँ बाहर हो दयी । मैं
भीतर घुमा । दर्दन भीषी लिए बढ़ा रहा । मुझमें उसे दखन का साहस
बही था । नर्म भी नमी गयी । घामद बहू भी समझ गयी की कि मैं
बबला भामा हुआ पठि हूँ ।

मैंने उसकी घोर देखा । वह कुर झुर रो रही थी । मैं उसके पाग
मठ गया । अपने हाथ से उसके घाँव पोंछ । मेरी घालि थी भर घायी ।

मैंने उसे प्यार से कहा 'मुझे लमा कर दे । जब मैं तुझे छोड़कर
कभी नहीं जाऊँगा ।'

उसने मेरी घोर घालि भरकर देखा ।

मैंने उसके निर पर हाथ फेर कर कहा "मुझे क्षमा नहीं करो
सब मैं भटक गया था। राजा की माँ तुरी गीताय भ्रातर रहत
कि मुझसे बिछड़ जाने के बाद मैंने जरा भी गुण नहीं गाया। मैंने सब
बहु घोर बोध सहे।

सारित्री ने बड़े बड़ा से कहा "घाप धा गये धब मैं नहीं मरू।
इसपर मुझे घापके बिना क्षमा चण्डा नहीं समझता था। पर सब
धीरेधीरे। मैं सब सरना नहीं चाहूँगी।

मैं उसकी सेवा में चुट गया।

समय दाक्टर को जिसको भरे स्वर में बग दाक्टर दाक्टर
मरु तो हो नहीं?"

दाक्टर ने मुस्कराकर कहा "घापरो कोई समझा नहीं है।
बिगड़ा न बरें" मैंने भी दाक्टर को हाथ जोड़कर प्रार्थना की। मैं
दिन इसी सेवा में चुन गया। जोसे दिन गाँव की बा एक घोर।
रैमान होने वाला था। क्योकि जॉय की बापी सभी तब गुन की।
की बगह से नहीं निरासी गई थी। जगह जोसे की इसका घोर हो
हा उठी। जो उसका मन इसपर मृत्यु के लिए राज नि मन्त्रों का
था वह सब मुझे देखकर जिसकी मैं वापस जाटन लगा। उसकी बा
दहरी घाँवों में मृत्यु की वसना मात्र से चान्दियों की दरानकी मू
बग जाती थी घोर घाँव इनाम्मा जाने से।

मैं उसे साँझ बँधाता चबराया था राजा की माँ। मुझे
नहीं जोगा। मू बिगड़न चण्डा हो जागी। तेरा बार भी दाँत
रहेगा। मू न जिसका घोरसे के दुष्टका का भाव भोतन का निदा
मुरख का प्रगर घोर हुआ था साँझिय। सभी तब दुष्टका का रहे
घड़-बड़े दाक्टर तेरा जाय कर रहे हैं। चण्डाओं के मेर छोटा दा
है।" मैं जिसके स्वर में बोला "घोर मू जायता है मू रहे हो
होयी बने हैं तेरा जागी-जमान निदा जायेगा। जैसे जैसे घोरों
तेरी दहली की पर्व कजरे घोर मुझे दग हराय था इनाम के निने

माँ राजा का मेँ छापी । उस भूमती हुई वह दोनो 'छाया पटा
मद है तेरा बापू ।

मेरा मन समझा मेँ मर छाया । मैं धपके देटे की बचता रदा ।
उने मोर में लकर धीने छापी रो धिरपा धिया ।

धिर मैं गाबिधी की मोर जसा । मन में विविध सपन का मोर
धिर धरपापी की लच्छ भूझा हुआ था । मैं एक-एक बीड़ी दिन गिनकर
बाँ रदा था । हृदय की बड़कन तेज हो गयी थी । मेरी बोझ मेरी माँ की
मोड़ में राजा को भिग हुआ । उस मुझे बड़ा मकोष हो रहा था । तोष
रहा था कि कौन-सा मूँह मेजर उसके सामने था रहा है । वह मुझे
कैसे मर्द समझेगी ? मेरा मन धापी हो गया । धनि धीमो पड़ गयी ।
किन्तुना समय मुजर गया । पता ही नहीं लगा ।

कमरा था गया था ।

मेरे पाँच एक बार ठिन्क गये । माँ वहुने कमरे में चुनी । उतने
धुमके ही कहा 'बड़ बेग मैं तेरे लिए गया लायी हूँ ।

गाबिधी पान्त निरुक्त पड़ी थी । उसने केवल दृष्टि दीक्षायी । उसने
पास में एक गल बैठी थी ।

माँ ने उत्तमिष्ठ स्वर में कहा 'अरे धा न धा बीटी को बिगार
दे । बहू ! सरपछ ।

साबिधी के हृदय में उंचीठ गूँज उठा । माँ बाहर हो गयी । मैं
भीतर धुमा । गर्वन भीषी लिए लड़ा रदा । मुझमें उसे देखने का चाहन
नहीं था । मन नी जमी गयी । धायद वह भी धमक गयी थी कि मैं
उसका माया हुआ पति हूँ ।

मैंने उसकी मोर बेठा । वह धुर धुर रो रही थी । मैं उसके पास
बैठ गया । धपके हाथ से उसके धाँसू पोंछ । मेरी धाँसे भी भर छापी ।

मैंने उसे प्यार से कहा 'मुझे लमा कर दे । धाध मैं तुझे छोड़कर
कभी नहीं जाऊँगा ।'

उसने मेरी मोर धाँसे भरकर बैसा ।

मैंने उतावे गिर पर हाथ फेर कर कहा "मुझे राधा नहीं करेगी। सब मैं भटक गया था। राधा की माँ तिरों मोल्ग्य आकर रहता है कि मुझे बिछड़ जाने के बाद मैंने जरा भी सुख नहीं पाया। मैंने कनेक बट्ट घोर बोप सहे।"

मादिनी ने इसे बण्ड से कहा "घाप घा गये घब मैं नहीं मरूँगी। इधर मुझे घापके बिना जोना घबड़ा नहीं समझा था। पर घब मैं बीजगी। मैं घब मरना नहीं चाहूँगी।

मैं उमझी सेवा म पुट गया।

उमने डाक्टर को रिमनी भरे स्वर म कहा "डाक्टर दादर मैं मरूँगी तो नहीं?"

डाक्टर ने मुहकटकर कहा "घापों कोई लहरा नहीं है। घाप बिगा न करें।" मैंने भी डाक्टर को हाथ खोझकर घापना की। मैं रात दिन ठहरती सेवा में जुटा रहा। बोप दिन मादिनी का एर घोर माँग रेघन होने वाला था। बर्दोहि जाँच की बोपी अभी तक गून की बची थी बबह से नहीं निवामी बर्द थी। उमर बोने की लज्जा घोर लोचन हो उठी। जो उल्लास मन इधर मृत्यु के सिंग राग निन मधुरें म्माता था वह घब मुझे दैरावर बिम्बी के वापस निपटने लगा। उमरी गहरी पहरी घाँवों में मृत्यु की बहना मात्र थे घाँवों की लज्जा की दूल्हा बन जाती थी घोर घाँव लज्जा घात थे।

मैं उमने हाँस बेबाका "घरवालो नहीं गजा की माँ! मुझ कुछ नहीं होगा। तू बिनादुन बचने ही आरगी। जरा बाप भी दाँदा नहीं रहेगा। तू मे दिवंगम बोपरा न बूढ़म्ब का नाम रोन्न कर दिया है। गुरम का प्रण घोर हज का मोलिय। जभा तेरा दुल्हन न रहे है। बड़े-बड़े डाक्टर सेवा दवाव कर रहे हैं। दगावर्गे म मेर प्योटा घर रहे है।" मैं गिाज दर में बोला "धो तू जानती है तू खेते हा टोक होनी बसे ही तेरा लाली-लम्मान बिदा जायेगा। जेबे हँदे मोहरेदार तेरी बटानुपि की जर्गा बग्गे घोर मुझे दग दरार दग इनाम के दिगमे।"

गाबिली की छाँगे फिर जर छापी । वह दबे स्वर में धीरे धीरे दावों
 ईश्वर भी गिरने विविध रस तलता है । कभी-कभी मनुष्य को
 दृष्टियों के विमल प्रणिभूत पल मिलता है । हमें दाने क्या
 मिले ?”

“हमें नहीं मुझे । तु हो हम स्वयं की मालिन है । तुने पान
 हुयेनी पर रसकर उन गंगार धेड़ियों को मारा है । हम स्वयं पर
 बकेल ठेक ही धारितार है ।

“नहीं । उन पर मेरा कोई अधिकार नहीं है । मैं बग धारणी है
 सब मेरी थीक सिध मेरी धारणी बंसे हुई ?

बहु इसी तरह बातें करती रही । उसकी स्थिति घोर सुपर मई ।
 उसे रात को नींद भी नहीं आ पा । मैं गुबहु से साथ सब उसके पास
 बैठा रहता था । बहु मुझे धार भीती सुनाती रहती थी । वह कहती
 रहती कि आपके जाने के बाद उसने कितने कष्ट खड़े ? साथ ही बहु
 इस बात का वायदा करती थी कि वह बीता के रहस्य को रहस्य ही
 रहे । उसे हमें सदा पहचानूँति बेनी है ।

धाररेचन होने की पहली रात ।

मैं उसका गिर दबा रहा था । बहु विमल-ही तन्निमानरवा मे मो
 हुई थी । अपने मकुर प्यार अपने । बहु कह रही थी “मैं जैसे भी ठीक
 होऊँगी बसे ही हम अपनी बंड़ी को सजामे । उसमें अच्छी धरती
 थीजें साकर रखे । अपने राजा के लिए पड़ी-विपरी बहू मायमे । उस
 की छोटी मायमे । अपने पूर्वज को मूर्तता करके आ रहे म उनके मई
 दोहरावे । अब हम एक ऐका प्यारा और मकुर जीवन सुझावे शिवा
 मैं क्यों से धरना देस रही हूँ ।

“अब मैं तु जैसा कहूँगी बीता ही कर गा ।”

“आप से मूठ नहीं बोलूँगी—आपके जाने के पक्ष में हर पल हर
 की कामना करती थी । मुझे जीवन स्पष्ट लगता था । कुछ सोच तो
 भी नहीं सुझाता था । अगर वह बच्चा धीरे धारणी हुई भी था म

न होता तो मैं बच की सरवर में डूब भरती। धीरे उसकी घाँसे फिर
 भर घायी। उसके रोने में सपता था कि धर्मपुत्र की मंगा-जमना
 धिड़-धिड़ कर उगरी पलकों में बस्य हो गई है। मैं उस साहम बंधाता
 रहा। धारम देता रहा कि तेरी उम्र पम्दा मुरज पंती है। हाथ की
 जीवन रेखा पारों जंगलियों को पार कर गई है। तू कभी नहीं मर
 सकती।

आधिर आपरेगन हो गया। इस बार मैंने खुद ने उसे बून दिया
 पोती भी निकल गई। तिम्रु दुमरे दिन बोपहर की अचानक उसके दिल
 में दर्द सठा। मैं उसके पास बैठ गया। वह एकाएक विफल मन प्राण
 ने बिस्मार्ड, मेरे लीने में बसे हो रहा है। राजा के बापू मुझे बचाओ।”

मैंने जग को भुलना दी। वह घाँ घीर बाप दातर के पास
 भावी। गाबिनी ने मुझे मजबूती से पकड़ लिया। मेरा भी पहरा
 रहा है।”

“हिम्मत न हार।

‘राजा के बापू मैं मरना नहीं चाहती। मुझे सब मरने के दर
 रागता है। मुझे बचा लीजिए।’

दातर सोन धा धये। उगटाने उसे ‘देवान रिप। उनका एक कुछ
 बच हो गया। दातरों ने बनाया था कि उसे पूरा विषाम बर्दिज।
 उनके नाम को न धाय।

मैं बनी मेरी धीरे राजा के पास धा गया। एक एक एक ही
 रूँते से। हस्तगत वा ही बगटेंर था। एक बीक रई धने लवार्थे
 एवं बार्नरताओं के धाये थे। धीरेगन मरताताने ‘राजा’
 सभी को प्रगल्भता दी।

मैं दाप बोपहर बह रही थी “मेरी बहू रईर... वा रईर
 उम निन ‘राजा का धीर बाबा’ को गोने वा दाता...”

बोड़ी देर बाद गाबिनी ने मुझे बुलाया। “मैंने...
 मर रही थी। अयाप अयाद अयना” बह रहा था

मैंने पूछा क्या है।”

बहु बोली नहीं। केवल रोनी रही। फिर उसने कठिमेता में कहा
“राजा धीरे मैं को बुलाएँ।” मैं उठे बुला लाया। वह उठे देगता
रही। उगत राजा को धन्य पाग घाम का सबत दिया। मैं उस से
मया। उगत सम गुमा। मैं रो पड़ी। मेरा मन भी भर घावा।

उसने टूटे कपे स्वर में कहा ईप्पर बड़ा निरदबी है। बड़ा
कटोर है।” वह राजा रही जैसे उगती घाँवा से पोंन की घनक दहरती
मृज्ज्गारों तैर उठी हों।

उसने हम जान का सकेत दिया। हम कुमरे कमरे में घा घा।

घापी रात को नख बीग पड़ी। हम भाव घामे पा। देगा—
साबित्री के प्राण पगेर उठ मण। उमरी घाँवों गुमी था धीरे उमर
बेहरे पर प्रसीम घामि निरात्र रही बी बँधी पीरागिक तेनि। गिर
बीरायताघों की मृज्ज्ग पर उमरे कहरों पर रिचरनी थी।

मैं उससे निरात्र कर रोने लगा। मैं भिर कोदम लबी। राजा एक
प्रबोध जिज्ञासा मिण रो रहा था।

साबित्री मर गई।

मैंने देखा—मारु मन्नाटा उमरी मोठ पर बीग पड़ा है। धीरे
धीरे मन्नाटे की जगह बाणों गुहारों न ले लिया। मुझे बार-बार मुना
पड़ता था मैं मरना नहीं चाहती। ओह! प्रभु तू कितना कटोर घी
निरदबी है।

×

×

×

मृत्यु का रोख संपीत कुद प्रकृति नू का रही थी—उठ दिन ।
 ममता का—प्रकृति जबत धीर उसकी सभी क्रियाओं पर मृत्यु की पहरी
 उद्यमी छा गई है ।

घर्षों का जुलूम भीरे-भीरे समयाग घाट की धोर बढ रहा था ।
 इसमें गई प्रतिष्ठित कैला सञ्जन से मंथो सचा सेठ बंधीकर ने । सेठ की
 धाँपों में घाँवू थे । कुद भी हो सावित्री को कोई नहीं बचा सचा । वह
 जिस मिट्टी से बदा हुई थी उसी मिट्टी में सो गयी ।

कहानी राख ही गयी ।

×

×

×

यह बाँध है कैला ।

मे घबरी उसकी स्मृति में बने स्मारक की पूजा करके लौट रहा हूँ ।
 स्मारक-वर्णन पर लिखा है—भीराबना सावित्री देवी जिसने मूर्धन
 दादुओं को धरनी धोली का धिकार बनाया । उसकी पुण्य-स्मृति में इन
 स्मारक को बीच शीत के पुण्य बंधी थी मे रसी ।

रास्ता सूना है । वह लपेटे की बो में लोया टुपा है । कभी

मैंने पूछा क्या है।”

बहु बोधी नहीं। केमन रोनी रही। फिर उसने कठिनता से कहा—
“राजा घोर मौ की बुलाए। मैं उन्हें बुला लाया। वह उन्हें बैगती
रही। जगने राजा को घन पाप घाम का गन्ध दिया। मैं उसे ले
गया। उसने उस बुझा। मैं रो पड़ी। मेरा मन भी भर गया।

उसने दूध रंगे स्वर में कहा—“दर्दपर बड़ा निरन्धी है। बड़ा
कठोर है।” वह राती रही जैसे उसकी छाँटा में बीम बी घनक दहती
मृच्छाएं तैर उठी हों।

उसने दुर्मे कात का नकेत दिया। हम बुझने बकरे में घा ला।

घाबी रात को मस बीग पड़ी। हम भाये घाव गए। देगा—
सावित्री के प्राण पड़ेक उड़ गए। उसकी छाँटें सुनी ५। घोर उमड़
वेहरे पर अमीम घामि निराश रही बी बीसी वीरगति के निरन्ध्र
बीरांगनाओं की मृत्यु पर उनके बहुरों पर निराशरी बी।

मैं उससे निपट कर राज गया। मैं फिर छोड़न लगी। राजा एक
प्रबोध विज्ञाना लिए रो रहा था।

सावित्री मर गई।

मैंने देखा—साध मल्लाटा जगती मोन पर बीग पड़ा है। घोरे
घोरे मल्लाटे की जगह बीगों पुकारों में मे लिया। मुझे बार-बार मुना
पड़ता था मैं मरना नहीं चाहती। ओह ! प्रभु तू कितना कठोर बी
निरन्धी है।

X

X

Y

मृत्तु का पौरव संगीत सुद प्रहृति हुआ रही थी—उस दिन ।
सदका था—प्रहृति बगल धीरे उसकी सभी क्रियाओं पर मृत्तु की पहरी
बसायी छा गई है ।

घरों का जुनून धीरे-धीरे समझान धाँट की धीरे बढ़ रहा था ।
उन्होंने कई प्रतिष्ठित नेता संग्रहण को मंत्री तथा बैठ बपोपर थे । बैठ की
घोनों में घोनु थे । कुछ भी हो सावित्री को कोई नहीं बचा सका । वह
जिन मिट्टी से पदा हुई थी उसी मिट्टी में लो गयी ।

बहानी धारण हो गयी ।

×

×

×

यह बात है मेरा ।

मे घरी उनकी स्मृति में बने स्मारक की पूजा करते लौट रहा हूँ ।
स्मारक-नईय पर निगा है—बीरांगना सावित्री ऐसी श्रमने मुपस
दागुपी की घानी बोनी का पिकार बनाया । उन्हीं दुष्प-स्मृति में इस
स्मारक को नीव शीत के मुख्य बची जी में रखी ।

सम्रा हुआ है । वह सम्राट की नाक में बोला हुआ है । कभी-कभी

आफ़ भंगाफ़ में घबरा दहला कर जब खर्च करता है तब मर-मर को
गाइनाफ़ की हलकी खलि होती है ।

दूसरी पयइंसी को चहर की मोर का रही है जग पर बैठा को
निगान बैलों को देखा हुआ जा रहा है—घाघो पीछ हट जा राज बरन
पुर कोरे बाँधी रे ।

कोरा हट जा ।

उमका खर लेज हो रहा है । धीरे धीरे ईस गाडी धूम के बादल
में छो जाती है । मैं उसे खंभधुन्य ता देस रहा हूँ—यह गांव है बरा
इस गांव की मिट्टी-मिट्टी में उनके फल-फल में गाखिनी की बोने व
इच्छा बनी बनी है धीरे में पचास हो जाता है रो देता है—राज !
उसे छोड़कर नहीं जाता तो मे परिस्थितियाँ बलम ही नहीं होती ।

बोड़ पर प्याऊ है । उसके घाघे पीठा बैठा है । मुझे देखते ही व
बौड़ा-बौड़ा घाघा धीरे बोला "ममान भूमि ये घा रहे हो भैया !
उसकी घोखों में घपाह बेचना है ।

मैं किछ रो देता हूँ ।

घाघे बड़ता हूँ—गांव में गया खूत बन रहा है । गया व
बनम बन रहा है । तेजी से परिवर्तन घा रहे है । घाघे बकर घाघे
पर मैं भीते जी निर्वीर हो गया हूँ । बड़ी पीड़ा मुझे मिल रा
है जिन्हें मैंने ताखिनी को दी थी । नीरवता मुटन धीरे एकांत ।

घाघे घर है मेरा ।

साँझ राजा का हाथ पकड़े लड़ी है । राजा के दूसरे हाथ में
बाजरी की रोटी है । मैं समझ गया हूँ कि घाघी वह जोवन घाघेयो की
साँझ को पीत सुनायेगी धीरे साँझ घाघे यह रोटी दे देगी ।

साँझ सब मेरी माँही है । मैं उसे अपने घर में घाघा हूँ ।

की परवाह किए बिना मैंने उसे अपने घर में बसा लिया है—घाघि
बहु मेरी पैसा की ही तो बनकर रही । पैसा को उसने घपका खर्च
—खर्च किया था, फिर वह हमसे बचक क्यों रहे ? उसकी प्रीति जीव

की मौखिक आदरशता के पीछे उन प्रसौद्धिक भाषावेष्टों की बुरी त्यागे जो सही की मोह-नायिकाओं में पाये जाते हैं ।

उमके घाने से घर स्वर्ग बन गया है । राजा जब उसको बहू कहता है और जब वह घर के काम-काज में तत्पर रहती है तब भी विद्वत्-मा हो उठती है । उसे सावित्री मार हो जाती है और वह पशु पक्षि वर घने बैठ जाती है । धरे पर की ब सोनी तिरियाँ भी और लाला अपने अपने प्यारों की याद में झुर झुर निजर हा मयी है । जब एकान्त में वे सीर-संभीर मुद्रा में होती है तब उनके बहनों पर एक ऐसा धोख एक ऐसी तल्लि और एक ऐसा लामोद होता है कि वह उन्हें घनाम करने को कहता है ।

छात्र पढ़ने जाता है। मांदा का पद दया-शरीर गदा है।

बहु योगन मेरे पर के भाव बाहर गडो हो गया है । बाता हर
बात छुडती है और जाती है ।

ਘੋੜੂ ਕਰ ਪੀਸੀ ਵਡੀ

ਲਾਂਗ ਝਾਟੇ ਵਫ਼ਾ ਰੀਝ

एवम् नोपपन्नं नृणां

त्रिषा विनगु रे ओम

छोम घली बाब ग्हाय राब—